स्वदेशी चिकित्सा

बीमारियों को ठीक करने के आयुर्वेदिक नुस्खे

महान आयुर्वेद विशेषज्ञ :
श्री वागभट्ट द्वारा रचित अष्टांगहृदयम् पर आधारित

भाग - 2

संकलन एवं संपादन
राजीव दीक्षित
पुर्नलेखन : प्रदीप दीक्षित

भाई राजीव दीक्षित - पुस्तक संग्रह ⑤

राजीव भाई के व्याख्यानों पर आधारित साहित्य

शीर्षक	मूल्य
1. स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 1	रू. - 50/-
2. स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 2	रू. - 50/-
3. स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 3	रू. - 50/-
4. बहुराष्ट्रीय कंपनियों द्वारा भारत की लूट	रू. - 50 /-
5. सरकारों ने दिया है देश को लूटने का लाइसेंस	रू. - 50/-
6. बहुराष्ट्रीय कंपनियों का असली चेहरा	रू. - 50/-
7. मांसाहार से हानियां	रू. - 60/-
8. WTO : भारत को गुलाम बनाने का संविधान	रू. - 50/-
9. गाय और पंचगव्य द्वारा घरेलू इलाज	रू. - 50/-
10. गाय और स्वदेशी कृषि	रू. - 50/-
शीघ्र प्रकाशित	
11. स्वदेशी भारत को पुनः सोने की चिड़िया बनाने का मंत्र	रू. - 50/-
12. भारत की पुनर्योजना : स्वदेशी के आधार पर	रू. - 50/-
13. भारत स्वाभिमान शंखनाद पर आधारित 10 किताबों का सेट	रू. - 50/-
14. स्वदेशी भारत की रूपरेखा	रू. - 50/-
15. भारत और पश्चिमी सभ्यता का अन्तर	रू. - 50/-
16. स्वदेशी चिकित्सा, भाग - 4	रू. - 50/-

स्वदेशी चिकित्सा किताबों के सेट में इनके अलावा 3 अन्य किताबें भी हैं।

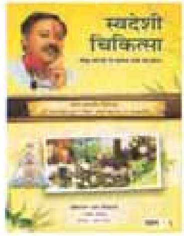

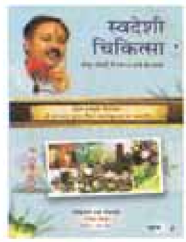

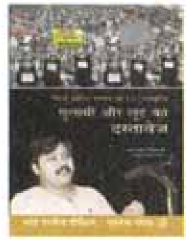
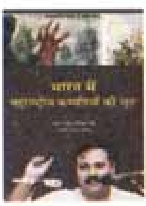
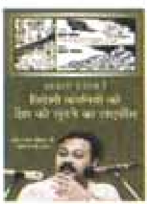
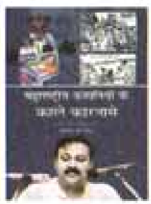
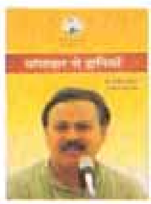
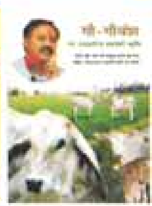

राजीव भाई द्वारा दिये गये व्याखान (*MP3*)

हमारा संकल्प:
5 करोड़ घरों में राजीव भाई की आवाज पहुँचाना–साथी हाथ बढ़ाना

स्वदेशी चिकित्सा

(महान आयुर्वेद विशेषज्ञ : श्री वागभट्ट
द्वारा रचित अष्टांगहृदयम् पर आधारित)

भाग–2

संकलन एवं संपादन
राजीव दीक्षित

स्वदेशी प्रकाशन,
सेवाग्राम, वर्धा

स्वदेशी चिकित्सा

लेखक : राजीव दीक्षित

प्रकाशक : स्वदेशी प्रकाशन

सर्वाधिकार प्रकाशक के पास सुरक्षित

प्रथम संस्कारण : 2012 (3000 प्रतियाँ)

राजीव दिक्षीत मेमोरीयल स्वदेशी उत्थान संस्था,
सेवाग्राम, वर्धा के लिए प्रकाशित

राजीव दिक्षीत मेमोरीयल स्वदेशी उत्थान संस्था,
सेवाग्राम रोड, हुत्तामा स्मारक के पास
सेवाग्राम, वर्धा – 442 102
फोन न.– 07152-284014
मोबाईल : 9822520113, 9422140731

प्रयोग भूमी – स्वदेशी ग्राम,
सेवाग्राम पवनार रोड, ग्राम – वरूड
पो. सेवाग्राम, वर्धा – 442102

सहयोग राशि : 50 रुपये

विषय सूची

प्रस्तावना	4
प्रथम अध्याय – ज्वर चिकित्सा	5–39
द्वितीय अध्याय – रक्तपित्त चिकित्सा	40–47
तृतीय अध्याय – कास (खाँसी) चिकित्सा	48–75
चुर्तथ अध्याय – भवास (दमा, अस्थमा) चिकित्सा	76–85
पंचम अध्याय – राजयक्ष्मा(टी. बी. या तपैदिक) चिकित्सा	86--96
शष्ठम् अध्याय – ह्रदय रोग और तृष्णा रोग	97–109
सप्तम् अध्याय– मद्यपान से होने वाले रोगों की चिकित्सा	110–120

प्रस्तावना

भारत में जिस शास्त्र की मदद से निरोगी होकर जीवन व्यतीत करने का ज्ञान मिलता है उसे आयुर्वेद कहते है। आयुर्वेद में निरोगी होकर जीवन व्यतीत करना ही धर्म माना गया है। रोगी होकर लम्बी आयु को प्राप्त करना या निरोगी होकर कम आयु को प्राप्त करना दोनों ही आयुर्वेद में मान्य नहीं है। इसलिये जो भी नागरिक अपने जीवन को निरोगी रखकर लम्बी आयु चाहते हैं, उन सभी को आयुर्वेद के ज्ञान को अपने जीवन में धारण करना चाहिए। निरोगी जीवन के बिना किसी को भी धन की प्राप्ति, सुख की प्राप्ति, धर्म की प्रप्ति नहीं हो सकती है। रोगी व्यक्ति किसी भी तरह का सुख प्राप्त नहीं कर सकता है। रोगी व्यक्ति कोई भी कार्य करके ठीक से धन भी नहीं कमा सकता है। हमारा स्वस्थ शरीर ही सभी तरह के ज्ञान को प्राप्त कर सकता है। शरीर के नष्ट हो जाने पर संसार की सभी वस्तुयें बेकार हैं। यदि स्वस्थ शरीर है तो सभी प्रकार के सुखों का आनन्द लिया जा सकता है। दुनिया में आयुर्वेद ही एक मात्र शास्त्र या चिकित्सा पद्धति है जो मनुष्य को निरोगी जीवन देने की गारंटी देता है। बाकी अन्य सभी चिकित्सा पद्धतियों में "पहले बीमार बनें फिर आपका इलाज किया जायेगा", लेकिन गारंटी कुछ भी नहीं है। आयुर्वेद एक शाश्वत एवं सातत्य वाला शास्त्र है। इसकी उत्पत्ति सृष्टि के रचियता श्री ब्रह्मभाजी के द्वारा हुई ऐसा कहा जाता है। ब्रह्माजी ने आयुर्वेद का ज्ञान दक्ष प्रजापति को दिया। श्री दक्ष प्रजापति ने यह ज्ञान अश्विनी कुमारों को दिया। उसके बाद यह ज्ञान देवताओं के राजा इन्द्र के पास पहुँचा। देवराजा इन्द्र ने इस ज्ञान को ऋषियों–मुनियों जैसे आत्रेय, पुतर्वसु आदि को दिया। उसके बाद यह ज्ञान पृथ्वी पर फैलता चला गया। इस ज्ञान को पृथ्वी पर फैलाने वाले अनेक महान ऋषि एवं वैद्य हुये हैं। जो समय–समय पर आते रहे और लोगों को यह ज्ञान देते रहे हैं। जैसे चरक ऋषि, सुश्रुत, आत्रेय ऋषि, पुनर्वसु ऋषि, काश्यप ऋषि आदि–आदि। इसी श्रृंखला में एक महान ऋषि हुये वाग्भट्ट ऋषि जिन्होंने आयुर्वेद के ज्ञान को लोगों तक पहुँचाने के लिये एक शास्त्र की रचना की, जिसका नाम "अष्टांग हृदयम्"।

इस अष्टांग हृदयम् शास्त्र में लगभग 7000 श्लोक दिये गये है। ये श्लोक मनुष्य जीवन को पूरी तरह निरोगी बनाने के लिये हैं। प्रस्तुत पुस्तक में कुछ श्लोक, हिन्दी अनुवाद के साथ दिये जा रहे हैं। इन श्लोकों का सामान्य जीवन में अधिक से अधिक उपयोग हो सके इसके लिये विश्लेषण भी सरल भाषा में देने की कोशिश की गयी है।

प्रथम अध्याय

अथाऽतोज्वरचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह समाहुरात्रेयादयो महर्षयः।

अर्थ : निदान स्थान निरूपण के बाद ज्वर चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे। ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

ज्वर में लघंन की आवश्यकता.......

आमाशयस्थो हत्वाऽग्निं सामो मार्गान् पिधाय यत्।
विदघाति ज्वरं दोशस्तस्मात्कुर्वीत लघंनम्।।1।।
प्राग्रूपेषु ज्वरादौ वा बलं यत्नेन पालयन्।
बलाधिष्ठानमारोग्यमारोग्यार्थ क्रियाक्रमः।।2।।
लङ्घनैः क्षपिते दोषे दीप्तेऽग्नौ लाघवे सति।
स्वास्थ्यं क्षुत्तृड् रूचिः पक्तिर्बलमोजश्च जायते।।3।।

अर्थ : आमाशय में स्थित वातादि दोष आमरस के साथ मिल कर तथा रसवाही स्रोतसों के मार्ग को अवरूद्ध कर ज्वर उत्पन्न करते हैं। ज्वर में या ज्वर के पूर्वरूप में प्रयत्न पूर्वक बल की रक्षा करते हुए लघंन करें। क्योंकि बल के अधीन आरोग्य की प्राप्ति होती है और आरोग्य के लिए चिकित्सा क्रम बताया गया है। लघंन के द्वारा दोषों के क्षय होने पर तथा अग्नि के प्रदीप्त होने पर और शरीर में लघुता होने पर आरोग्य, भूख, प्यास, भोजन में रूचि, भोजन का परिपाक, बल तथा ओज की वृद्धि होती है।

विश्लेषण : ज्वर की समाप्ति बताते हुए ज्वर किस प्रकार उत्पन्न होता है इसका निर्देष किया गया है। आम दोष पृथक्–पृथक्या द्वन्द्वज या त्रिदोषज जब आमरस के साथ होकर आमाशय में स्थित होते हैं तब अग्नि की उष्णता को बाहर त्वचा में फैला देते हैं। रसवाही स्रोतसों के बन्द होने से पसीना नहीं निकल पाता। जिसके कारण त्वचा उष्ण हो जाती है। दोष अग्नि के उष्मा को निकाल देते हैं। अतः जाठराग्नि दुर्बल हो जाती है। दोष से आवृत अग्नि दोषों को पचाने में पूर्ण समर्थ नहीं होती है। यदि ऐसी अवस्था में अन्न दिया जाय तो उसका परिपाक समुचित न होकर आम दोष की अधिकता हो जायेगी। जब भोजन नहीं करेंगे तो अग्नि आमदोष को धीरे–धीरे पकाने

लगेगी। इससे दोषों की क्षमता नष्ट हो जायेगी और रसवाही स्रोतसों का मुख खुल जायगा और पसीना निकलने लगेगा जिससे शरीर में हल्कापन, भूख, प्यास, भोजन में रूचि तथा मन में प्रसन्नता होगी। जब दोषों की सामता अधिक होती है तो दोषों का पाचन बहुत विलम्ब से होता है। लघंन यदि अधिक दिनतक किया जाय तो अधिक दुर्बलता हो जाती है। बल के घट जाने से शीघ्र स्वास्थ्य लाभ नहीं होता है। अतः आहार का प्रयोग करना चाहिए जिससे बल कम न हो।।1–3।।

ज्वर में वमन का विधान –

तत्रोत्कृष्टे समुत्क्लिष्टे कफप्राये चले मले।
सहृल्लासप्रसेकाऽन्न–द्वेष–कासविसूचिके।।4।।
सद्योभुक्तस्य सज्जाते ज्वरे सामे विशेषतः।
वमनं वमनार्हस्य शस्तं कुर्यात्तदन्यथा।।5।।
श्वासातिसारसम्मोह–हृद्रोगविषमज्वरान्।

अर्थ : ज्वर में दोष उभरे हुए हों या अधिक उभरे हुए हों, कफ बढ़ा हो, दोष चालायमान हों, हुल्लास (उबकाई), मुख से स्राव, अन्न से द्वेष, कास तथा अतिसार वमन होता हो, भोजन करने के बाद तत्काल ज्वर हुआ हो और विशेष कर साम ज्वर हो तब वमन करने योग्य व्यक्ति को वमन कराना प्रशस्त है। यदि इनसे विपरीत अवस्था हो तो वमन कराने से श्वास, अतिसार, सम्मोह, मूर्च्छा, हृदयरोग तथा विषम ज्वर होता है।।4.5।।

वामक योग–

पिप्लीभिर्युतान् गालान् कलिङ्गैर्मधुकेन वा।।6।।
उष्णाम्भसा समधुना पिबेत्सलवणेन वा।
पटोलनिम्बकर्कोट–वेत्रपत्रोदकेन वा।।7।।
तर्पणेन रसेनेक्षोर्मद्यैः कल्पोदितानि वा।
वमनानि प्रयुज्जीत बलकालविभागवित्।।8।।

अर्थ : वमन के लिए (1) मदन फल का चूर्ण पीपल के चूर्ण के साथ मिलाकर या (2) मदन फल का चूर्ण इन्द्र जव (कटु इन्द्र जव) के साथ मिलाकर या (3) मुलेठी चूर्ण के साथ मिलाकर मधुके साथ गरम जल से या लवण के साथ गरम जल से पान करे। अथवा (4) पठोल पत्र (5) निम्बपत्र (6) कडुआ

खेखसा या (7) बेलपत्र के स्वरस या क्वाथ से मदन फल का चूर्ण पान करें। (8) गन्ने का रस अधिक मात्रा में पीकर (9) कल्प स्थान में बताये हुए वमन कारक औषधि को पीकर बल तथा समय (जाड़ा, बरसात, गरमी) का विचार कर वमन का प्रयोग करें।

विश्लेषण : जाड़ा, बरसात, गर्मी के अनुसार वमन द्रव्यों का विभाग कल्प स्थान में किया गया है। उसे विचार कर रोगी का बल और कोष्ठ की क्रूरता तथा मृदुता तथा मध्यता का विचारकर तीक्ष्ण, मृदु तथा मध्य द्रव्यों का विचार कर प्रयोग करें।।6–8।।

लङ्घन से लाभ...

कृतेऽकृते वा वमने ज्वरी कुर्याद्विशोषणम्।
दोषाणां समुदीर्णानां पाचनाय भामाय च।।9।।

अर्थ : ज्वर पीड़ित व्यक्ति ज्वर में वमन करने पर या न करने पर बढ़े हुए दोषों के पाचन तथा शमन के लिए लघंन करें।।9।।

आमज्वर में लघंन की आवश्यकता तथा अवधि...

आमेन भस्मनेवाग्नौ छन्नेऽन्नं न विपच्यते।
तस्मादादोषपचनाज्ज्वरितानुपवासयेत्।।10।।

अर्थ : राख से ढका हुआ अग्नि जैसे पकाने में असमर्थ होता है उसी प्रकार आमदोष से घिरा हुआ जाठराग्नि अन्न को पचाने में असमर्थ होता है। अतः जब तक आमदोष का पाचन न हो जाय तब तक ज्वर के रोगी को उपवास करायें।

विश्लेषण : जब तक आमदोष का पाचन न हो तब तक उपवास कराने का निर्देष किया गया है। किन्तु आमदोष का पाचन देर से हो तो रोगी का बल घट जायेगा। अतः देर से आमदोष को पचाने में हल्का तथा हितकर भोजन देना चाहिए। ऐसा भी होता है कि आमदोष की प्रबलता से रोगी को खाने की इच्छा या रूचि नहीं होती है। ऐसी अवस्था में उसके मन के अनुकूल आहार देना चाहिए, वह आहार हितकर हो या अहितकर हो। न खाने से शरीर क्षीण हो जायेगा अथवा रोगी की मृत्यु हो जायेगी। क्योंकि पहले कह आये हैं कि बल के अधीन आरोग्य होता है। अतः बल की रक्षा आहार देकर करनी चाहिए।।10।।

ज्वर में उष्ण जल का महत्व.....

तृष्णगल्पाल्पमुष्णाम्बु पिबेद्वातकफज्वरे।
तत्कफं विलयं नीत्वा तृष्णामाशु निवर्तयेत्।।11।।

उदीर्य चाऽग्नि स्रोतांसि मृदूकृत्य विशोधयेत्।
लीनपित्तानिलस्वेदशकृन्मूत्रानुलोमनम्।।12।।
निद्राजाड्यारूचिहरं प्राणानामबलम्बनम्।
विपरीतमत। शींत दोषसङ्घातवर्धनम्।।13।।

अर्थ : वात–कफ ज्वर में प्यास लगने पर थोड़ा–थोड़ा उष्ण जल पिलाना चाहिए। यह उष्ण जल पान कफ को ढीला कर शीघ्र ही प्यास को दूर करता है और अग्नि को तीव्र कर तथा स्रोतेसों को मृदुकर दोषों का सशोधन करता है। इसके अतिरिक्त शरीर में छिपे हुए पित्त, वात, स्वर, मल तथा मूत्र का अनुलोमन करता है। उष्ण जल, निद्रा, शरीर की जड़ता तथा अरूचि को दूर करता है और प्राणों को धारण करता है। इसके विपरीत शीतल जलपान दोषों के समूह को बढ़ाता है।

विश्लेषण : ज्वर की अवस्था में कभी भी शीतल जल का प्रयोग नहीं करना चाहिए। कफ ज्वर में उक्त अष्टमांश, वात ज्वर में चतुर्थांष तथा पित्त ज्वर में अर्द्धांश शेष जल पीने को देना चाहिए। यदि ज्वर की प्रथम अवस्था में केवल उष्ण जल का सेवन किया जाय तो बिना किसी औषधि के ज्वर समाप्त हो जाता है।

उष्ण जल का निषेध....

उष्णमेवङ्गुणत्वेऽपि युज्ज्यान्नैकान्तपित्तले।
उद्रिक्तपित्ते दवथुदाहमोहातिसारिणि।।14।।
विषमद्योत्थिते ग्रीष्मे क्षतक्षीणेऽस्रपित्तिनि।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से उष्ण जल का उत्तम गुण होने पर भी केवल पित्त के प्रकोप में तथा पित्त की प्रधानता होने पर और अन्तर्दाह, दाह, विष तथा मद्यपान, ग्रीष्म ऋतु, उरक्षत से क्षीण तथा रक्त पित्त में उष्ण जल पान का निषेध है।

विश्लेषण : उष्ण जलपान का रोग विशेष एवं अवस्था विशेष में निषेध किया गया है। इसका तात्पर्य यह है कि गरम रहते हुए जल का पान उपरोक्त अवस्थाओं में नही करना चाहिए। किन्तु उष्ण जल जब शीतल हो जाय तब उसे पान कराने में कोई हानि नहीं है। क्योंकि उष्ण किया हुआ जल शीघ्र पचता है और शीतल जल का परिपाक देर से होता है। शीतल जल पान करने पर छः घण्टे में पचता है और गरम जल शीतल हो तो तीन घण्टे में पचता है। इसके अतिरिक्त गरम किया हुआ गुनगुना जल पीने से डेढ़ घण्टे में परिपक्व होता है।

शडङ्ग पानीय.....

घनचन्दनषुण्ठयम्बुपर्पटोशीरसाधितम्।।15।।
शीतं तेभ्यो हितं तोयं पाचनं तृड्ज्वरापहम्।

अर्थ : नागर मोथा, लालचंदन, सोंठ, सुगन्धवाला पित्त पापड़ा तथा खस इन द्रव्यों के साथ पकाया हुआ जल पीने के लिए ऊपर बताये हुए रोगों में देना हितकर तथा पाचक है और प्यास तथा ज्वर को दूर करने वाला है।

विश्लेषण : इन द्रव्यों के साथ जल पकाने के लिए इन सब द्रव्यों को मिलाकर एक कर्ष (10 ग्रा.) को चौषठ गुना (640 ग्रा.) जल में पकावे। जब 320 ग्राम जल शेष रहे तो छान कर पीने को दें। दिन में पकाये हुए जल को और सूर्यास्त के बाद पकाए हुए जल को रात में पिलाए तथा यदि पेया विलेपी देना हो तो उसी जल से देना चाहिए।

ज्वर में पित्त की प्रधानता–

ऊष्मापित्तादृतेनास्ति ज्वरोनास्त्यूष्मणा विना।।16।।
तस्मात्पित्तविरूद्धानि त्यजेत् पित्ताधिकेऽधिकम्।

अर्थ : पित्त के बिना शरीर में गर्मी नहीं होती है और ज्वर बिना गर्मी के नहीं होता है। अतः सभी प्रकार के ज्वर में पित्त विरोधी वस्तुओं का सेवन नहीं करना चाहिए। यदि ज्वर में पित्त की प्रधानता है तो पित्त विरोधी वस्तुओं का अधिक रूप में सेवन नहीं करना चाहिए।।16।।

ज्वर में वर्जनीय कर्म....

स्नानाभ्यङ्गप्रदेहांश्च परिशेकं च लङ्घनम्।।17।।

अर्थ : ज्वर में स्नान, मालिश, उबटन, परिषेक तथा लघंन का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

विश्लेषण : लघंन का तात्पर्य शरीर को लघु बनाने से है। जिन क्रियाओं से शरीर की लघुता होती है वे क्रियाये व्यायाम, मैथुन, पाचन द्रव्य, उपवास, वमन, विरेचन, स्वेदन आदि हैं। उनमें उपवास स्वरूप लघंन ज्वर में करना चाहिए। शेष व्यायाम आदि लघंन क्रिया नहीं करनी चाहिए।।17।।

आम ज्वर में औषध तथा दूध का निषेध—

अजीर्ण इव भूलघ्नं सामे तीव्ररूचि ज्वरे।
न पिबेदौषधं तद्धि भूय एवाममावहेत्।।18।।
आमाभिभूतकोष्ठस्य क्षीरं विषमहेरिव।

अर्थ : जिस प्रकार अजीर्ण जन्य उदर शूल में शूल नाशक औषधि नहीं दी

जाती है, पाचन के अभाव में शूल नाशक औषधि न पचने के कारण शूल अधिक बढ़ा देता है, इसी प्रकार साम ज्वर में तीव्र पीड़ा होने पर भी ज्वर नाशक औषधि नहीं देना चाहिए। क्योंकि आमदोष से किए हुए अग्नि के ऊपर पुनः आमदोष की अधिकता हो जाती है। आमदोष से युक्त आमाशय के होने पर यदि दूध पिलाया जाय तो साँप को दूध पिलाने से जैसे विष की वृद्धि होती है वैसे ही शरीर में आमदोष से विष की वृद्धि हो जाती है।

विश्लेषण : आम ज्वर में औषधि तथा दूध देना निषिद्ध किया गया है। किन्तु शमन तथा संशोधन औषध का निषेध तथा पाचन और पाचन औषधि का प्रयोग करना चाहिए। जैसा कि "साम पाचनदीपनम्" कहा गया है। उदाहरण में शूल रोग दिया गया है। यदि अजीर्ण जन्य शूल होता है तो शूल नाशक औषधि का पाचन न होने से शूल बढ़ जाता है। उसमें पाचन औषधि का प्रयोग लाभकर होता है। इसी प्रकार ज्वर नाशक औषध का प्रयोग निषेध तथा पाचन औषध का विधान किया गया है। ज्वर आमदोष से होता है। दूध पीने से आमदोष की वृद्धि होती है। इससे ज्वर का वेग बढ़ जाता है। अतः आम ज्वर में दूध का निषेध किया गया है किन्तु आजकल इस चिकित्सा के युग में विषैले वत्सनाभ आदि द्रव्यों से निर्मित ज्वर नाशक तथा विषाक्त होते हैं। इन औषधियों के प्रयोग होने पर दूध का प्रयोग लाभदायक होता है तथा वातज्वर, पित्त–ज्वर एवं जीर्ण ज्वर में दूध लाभकारी होता है। केवल कफ ज्वर में दूध हानिकारक है।।18।।

ज्वर में स्वेदन––

सोदर्दपीनसश्वासे जङ्घापर्वास्थिशूलिनि।।19।।
वातश्लेष्मात्मके स्वेदःप्रशस्तः स प्रवर्तयेत्।
स्वदेमूत्रशकृद्वातान् कुर्यादग्नेश्च पाटवम्।।20।।

अर्थ : उदर्द, पीनस तथा श्वास रोग, जंघा, गाँठ तथा अस्थि शूल और वात–कफ ज्वर में स्वेदन करना उत्तम होता है। वह स्वेदन पसीना, मूत्र, पुरीष तथा वायु को निकालता है और अग्नि को प्रदीप्त करता है।

विश्लेषण : उदर्द आदि रोग में अनग्नि स्वेदन जैसे गरम घर में निवास, गरम पहनना, कपड़ा ओढ़ना तथा उपवास कराना चाहिए और इससे लाभ न हो तो गरम बालू की पोटली बनाकर जंघा, पर्व तथा अस्थियों पर स्वेदन करना चाहिए।

ज्वर में आहार–विहार का संकेत––

स्नेहोक्तमाचारविधिं सर्वशश्चानुपालयेत्।

लङ्घनं स्वेदनं कालो यवागूस्तिक्तो रसः।।21।।

अर्थ : सभी प्रकार के ज्वरों में स्नेह पान विधि अध्याय में स्नेहपान के बाद रोगी को आचारों का सेवन करना बताया है उन सभी आचारों का पालन करना चाहिए। जैसे गरम जल पीना, अधिक हवा में न बैठना, दिन में न सोना, मल–मूत्रों का वेग न रोकना आदि।।21।।

ज्वर में पाचन कर्म–

मलाना पाचनानि स्युर्यथावस्थं क्रमेण वा।

अर्थ : ज्वर की आम, पच्यमान, पक्व–इन अवस्थाओं में लंघन स्वेदन काल (समय सात दिन पर्यन्त) यावगू तथा तिक्त रस का प्रयोग दोषों को पाचन करने वाले होते हैं।

विश्लेषण : ज्वर की आमावस्था में लंघन तथा स्वेदन दोषों का पाचन करते हैं, और सात दिन में सात धातुगत आमदोष का पाचन होता है। यदि इनमें पाचन हुआ तो पाचन द्रव्य से बनाया हुआ यवागू या तिक्तरस प्रधान द्रव्य का प्रयोग करना चाहिए। इनमें दोषों का अच्छी तरह पाचन हो जाता है। यह क्रम कुछ दिन ज्वर के बने रहने पर किया जाता है और अन्य एक दो दिन रहने वाले ज्वर में केवल लंघन किया जाता है।।21।।

लंघन का निषेध–

शुद्धवात–क्षयाऽऽगन्तु–जीर्ण–ज्वरिशु लंघनम्।।22।।
नेष्यते तेषु हि हितं शमनं यन्न कर्शनम्।
तत्र सामज्वराकृत्या जानीयादविशोषितम्।।23।।
द्विविधोपक्रमज्ञानमवेक्षेत च लंघने।

अर्थ : शुद्ध वातज, क्षयज, आगन्तुक जीर्ण ज्वर वाले रोगियों को लंघन नहीं कराना चाहिए और इनमें शमन कराना हितकर होता है किन्तु वह शमन शरीर का कृश करने वाला नहीं। उन ज्वरों में यदि साम ज्वर का लक्षण हो तो लंघन द्वारा दोषों शोषण नहीं हुआ है ऐसा समझना चाहिए। द्विविधाय क्रम अध्याय में सम्यक लंघन, अति लंघन तथा अलंघन के लक्षण बताये गये हैं और लंघन के दोष तथा गण बताये गये हैं। लंघन विधि को वहाँ देखना चाहिए।।22–23।।

सम्यक् लंघन के बाद उपक्रम–

युक्तं लङ्घितलिडै.स्तु तं पेयाभिरूपाचरेत्।।
यथास्वौषसिद्धाभिर्मण्डपूर्वाभिरादितः।
तस्याग्निर्दीप्यते ताभिः समिद्भिरिव पावकः।।
शडहं वा मृदुत्वं वा ज्वरो यावदवाप्नुयात्।

अर्थ : सम्यक् लंघन के लक्षण जब रोगी में दिखाई पड़े तब मण्डपूर्वक पेया विलेपी आदि से रोगी की परिचर्चा करें। जो ज्वर जिस दोष से उत्पन्न हो उसकी दोष शामक तथा औषधों के जल से मन्द पेय विलेपी तथा यूष को क्रमशः खाने को दे। जिस प्रकार पतली लकड़ी से अग्नि प्रदीप्त होता है उस प्रकार मण्ड आदि से जाठराग्नि प्रदीप्त होता है। यह क्रम छः दिन तक या जब तक ज्वर मृदु न हो जाय तब तक कराना चाहिए।

विश्लेषण : आमदोष से अग्नि के अधिक मन्द हो जाने से ज्वर उत्पन्न होता है। लंघन करने से अग्नि और अधिक मन्द हो जाता है अतः हल्का मण्ड, पेया, विलेपी तथा दूध का प्रयोग करने से धीरे–धीरे अग्नि दीप्त होते हुए प्रदीप्त होकर सभी आहारों को पकाने में समर्थ हो जाता है। जिस प्रकार थोड़ा अग्नि पतली–पतली लकड़ियों से दीप्त होता है। यदि थोड़ा अग्नि पर मोटी लकड़ी रख दिया जाय तो वह अग्नि बुझ जाता है। उसी प्रकार लंघनके ततकाल बाद यदि सामान्य भोजन लिया जाय तो जाठराग्नि अत्यधिक मन्द हो जाता है। यह औषध से बनाई गई पेया लघु होती है और ज्वर नाशक औषध के संसर्ग से ज्वर नाशक भी होती है। आहार होने से प्राणों का अवलम्बन करती है।।

लाज–पेया पान का विधान—

प्राग्लाजपेयां सुजरां सशुण्ठीधान्यपिप्पलीम्।।
ससैन्धवां तथाम्लार्थी तां पिबेत्सह्रदाडिमाम्।

अर्थ : सोंठे, धनियाँ, पीपर तथा सेन्धानमक इन सब के साथ सिद्ध धान की लावा की (छः गुने पानी में पकाई हुई) लाजपेया जो पचने में शीघ्र कारी होती है उसको पहले पीने को दो। यदि रोगी खट्टी वस्तु चाहने वाला हो तो खट्टा अनार के दाना का रस मिलाकर पीने को दें।।

ज्वर में उपद्रवों के अनुसार पेया–

सृष्टविड् बहुपित्तो वा सशुण्ठीमाक्षिकां हिमाम्।।
वस्तिपार्श्वशिरःशूली व्याघ्रीगोक्षुरसाधिताम्।
पृश्निपर्णीबला–बिल्व–नागरोत्पलधान्यकैः।।
सिद्धां ज्वरातिसार्यम्लां पेयां दीपनपाचनीम्।
ह्रस्वेन पच्चमूलेन हिक्कारूक्श्वासकासवान्।।
पच्चमूलेन महता कफार्तो यवसाधिताम्।
विबद्धवर्चाः सयवां पिप्पल्यामलकैः कृताम्।।
यबागूं सर्पिषा भृष्टां मलदोषानुलोमनीम्।
चक्किापिप्लोमूलद्राक्षाऽऽमलकनागरैः।।

कोष्ठे विबद्धे सरुजि पिबेतु परिकर्तनि।
कोल–वृक्षाम्ल–कलशीधावनी–श्रीफलैःकृताम्।।
अस्वेदनिद्रस्तृष्णार्तः सितामलकनागरैः।
सिताबदरमृद्वीका–सारिवामुस्तचन्दनैः।।
तृष्णाच्छर्दिपरीदाह–ज्वरघ्नीं क्षौद्रसंयुताम्।
कुर्यात्पेयौषधैरेव रसयूषादिकानपि।।

अर्थ : यदि ज्वर में अतिसार या पित्त की अधिकता हो तो लाजपेया में सोंठ का चूर्ण तथा शहद मिलाकर शीतल होने पर प्रयोग करें। यदि ज्वर में बस्ति, पार्श्व तथा शिरः शूल हो तो भटकटैया तथा गोखरू के जल से सिद्ध लाज पेया पीने को दे। यदि ज्वरातिसार हो तो पिठवन, बरियार बेल का गुदा, सोंठ, नील कमल तथा धनिया के पकाये हुए जल से सिद्ध दीपन पाचन करने वाली पेया में खट्टे अनार का रस मिलाकर पीने को दे। जिस ज्वर में हिचकी, वेदना, श्वास तथा कास हो तो लघुपंच मूल (सरिवन, पिठवन छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी तथा गोखरू) के पकाये हुए जल से सिद्ध लाजपेया पान कराये। यदि ज्वर का रोगी कफ से पीड़ित हो तो बृहत् पंच मूल के (बेल का गुदा, अरणी, गम्भारी, सोनापाठा तथा पाढल) पकाये हुए जल से सिद्ध यव की पेया देना चाहिए। यदि ज्वर में मल विबन्ध हो तो पीपर तथा आँवला के पकाये हुए जल से सिद्ध यव की यवागू को घी में भुनकर मल दोष को अनुलोमन करने के लिए प्रयोग करे। यदि ज्वर में शूल के साथ कोष्ठ बद्धता हो और गुदा में कैंची से काटने जैसी पीड़ा हो तो चव्य, पीपरमूल, मुनक्का, आँवला तथा सोंठ इन सबों के साथ पकाये जल से सिद्ध लाजपेया का पान कराये। यदि ज्वर में पसीना तथा निद्रा आती हो और रोगी प्यास से पीड़ित हो तो खट्टी वैर, वृषाविल, शालपर्णी, पृश्निपणि तथा बेल का गुदा के पकाये जल से सिद्ध लाजपेया मिश्री, आँवला तथा सोंठ का चूर्ण मिलाकर पान कराये। यदि ज्वर में प्यास, वमन तथा परीदाह (सर्वाडदाह) हो तो ज्वर नाशक लाजपेया को मधु मिलाकर पान कराये। इसी प्रकार पेया के लिए बताई गई औषधियों से ही रस, यूष आदि का निर्माण कर प्रयोग करे।

विश्लेषण : ज्वर में विभिन्न उपद्रवों के हाने पर मण्ड, पेया, यवागू, रस तथा यूष देने का विधान है। मण्ड, पेया, विलेपी तथा यवागू ये सब यव, चावल तथा धान की लावा से बनाये जाते हैं। यूष दाल वाले अन्न, मूँग, मसूर, अरहर आदि से बनाया जाता है। जिन औषधियों से पेया आदि बनाये जाते हैं, उन्हें मिलित 10 ग्राम लेकर 640 ग्राम जल में पकाने के बाद आधा शेष, चौदह गुना

जल से मण्ड, आठ गुना जल से पेया, छः गुना जल से यवागू तथा यूष बनाया जाता है। यह पीने योग्य होने पर पेया, और गाढ़ा होने पर जिसमें धान का लावा या चावल या जव की आटा पका हुआ दिखाई देता है यवागू जिसे चावल, धान की लावा, जब पकने पर ऊपर से जल को छान लेते हैं उसे मण्ड, जिस पकते हुए जल में दाल न दिखाई पड़े केवल जल दिखाई पड़े उसे यूष बनाया जाता है।

पेयापान का निषेध–

मद्योद्भवे मद्यनित्ये पित्तस्थानगते कफे।
ग्रीष्मे तयोर्वाधिकयोस्तृट्च्छर्दिर्दाहपीडिते।।
ऊर्ध्वं प्रवृत्ते रक्ते च पेयां नेच्छन्ति तेषु तु।

अर्थ : मद्य से उत्पन्न विकार में, नित्य मद्य पीने वाले पित्त के स्थान में कफ के जाने पर, ग्रीष्म ऋतु में, पित्त–कफ की अधिकता में, प्यास, वमन तथा दाह से पीड़ित होने पर और ऊर्ध्वग रक्त पित्त में पेया का प्रयोग न करे।

लाजा तर्पण का विधान–

ज्वरापहैःफलरसैरद्भिर्वा लाजतर्पणम्।।
पिबेत्सशर्कराक्षौद्रं ततो जीर्णे च तर्पणे।
यवाग्वामोदनं क्षुद्वानश्नीयाद्भृष्टतण्डुलम्।।
दकलावणिकैर्यूषै रसैर्वा मुद्गलावजैः।
इत्ययं शडहो नेयो बलं दोषं च रक्षता।।

अर्थ : ऊपर बताये हुए व्यक्तियों को तथा ग्रीष्मकाल में ज्वर को दूर करने वाले फलों के रस या जल के साथ सिद्ध धान की लावा में मिश्री तथा मध ु मिलाकर तर्पण के लिए पान कराये। जब तर्पण पच जाय तब भूख लगने पर यवागू तथा भूजे हुए चावल के भात भक्षण करे। अथवा जल तथा नमक मिलाकर मूँग तथा यवागू या भात खाय। इस प्रकार ज्वर लगने पर छः दिन तक बल तथा दोषों की रक्षा करते हुए व्यतीत करें।

विश्लेषण : तर्पण का अर्थ शरीर को तृप्त करना है। जिन आहारों से शरीर या मन प्रसन्न होता है उसे तर्पण कहा जाता है। फलों के रस या यूष देने से शरीर तृप्त हो जाता है। इनका जब पाचन हो जाय तब भूख लगने पर यवागू या भात या प्रकृति के अनुसार हल्का भोजन रोगी की इच्छा के अनुसार दे।

ज्वर में कषाय का प्रयोग–

ततःपक्वेषु दोषेषु लङ्घनाद्यैः प्रशस्यते।

कशायो दोषशेषस्य पाचनः शमनो यथा।।
तिक्तः पित्ते विशेषेण प्रयोज्यः कटुकः कफे।
पित्तश्लेष्महरत्वेऽपि कषायस्तु न शस्यते।।
नवज्वरे मलस्तम्भात्कषायो विषमज्वरम्।
कुरूतेऽरूचिह्रल्लासहिध्माऽऽध्मानादिकानपि।।

अर्थ : लंघन आदि क्रियाओं से ज्वरकारी दोषों के पक जाने पर शेष दोषों को पचाने के लिए तथा शान्त करने के लिए कषाय प्रशस्त होता है। विशेषकर तिक्त रसवाले द्रव्य पित्त ज्वर में और कटु रस वाले द्रव्य कफ ज्वर में प्रयोग करे। कषाय रस के पित्त तथा कफ को दूर करने वाले होने पर भी नवीन ज्वर में प्रशस्त नहीं है। क्योंकि कषाय रस प्रधान द्रव्य मलों का अवरोध करने से विषम ज्वर उत्पन्न करता है और भोजन में अरूचि, उबकाई, हिचकी, तथा आध्मान आदि को भी उत्पन्न करता है।

विश्लेषण : नव ज्वर में कषाय के साथ दिन में सोना, स्नान, उबटन लगाना, मैथुन, क्रोध, अधिक हवा में बैठना तथा व्यायाम नहीं करना चाहिए।

अर्थ : ज्वर नाशक कषाय है। उन्हें बचाने के लिए दिया जाता है किन्तु कषाय रसवाले द्रव्य का क्वाथ नहीं दिया जाता है। क्योंकि मलों की रूकावट कर चिरकारी विषम ज्वर को उत्पन्न करता है और दोष धातुओं में प्रविष्ट हो जाते हैं।

ज्वर में औषध देने का समय--

सप्ताहादौषधं केचिदाहुरन्ये दशाहतः।
केचिल्लध्वन्नभुक्तस्य योज्यमामोल्बणे न तु।।
तीव्रज्वरपरीतस्य दोषवेगादयो यतः।
दोषेऽथवाऽतिनिचिते तन्द्रास्तैमित्यकारिणि।।
अपच्यमानं भैषज्यं भूयो ज्वलयति ज्वरम्।

अर्थ : कुछ आचार्यो का मत है कि ज्वर लगने के सात दिन के बाद ज्वर नाशक औषध देना चाहिए और कुछ आचार्यो का मत है कि दश दिन के बाद औषध देना चाहिए। कुछ आचार्यों का सिद्धान्त है कि हल्का अन्न खाने के बाद औषध देना चाहिए किन्तु तीनों सिद्धान्त में आम दोष की प्रधानता रहने पर ज्वर नाशक औषध नहीं देना चाहिए। क्योंकि तीव्र ज्वर होने पर दोषों के वेग उभर जाते हैं। अथवा दोषों के अधिक रूप में संचित होने पर तन्द्रा तथा स्वमित्य करने वाले दोष होते हैं। उस समय यदि ज्वरनाशक औषध

दिया जाय तो औषध अपक्व होकर पुनः ज्वर के वेग को बढ़ा देता है।

विश्लेषण : सात दिन में सप्त धातुगत मल का पाचन हो जाता है। इस सिद्धान्त वाले सात दिन के बाद लघु अन्न खिलाकर आठवें दिन तथा पित्त का पाचन दश दिन में होता है। अतः हल्का अन्न खिलाकर ग्यारहवें दिन और कफ का पाचन ग्यारहवें दिन होता है किन्तु कफ में आमता अधिक होती है। अतः जब कभी उसका पाचन हो जाय तो हल्का अन्न खिलाकर ज्वरनाशक औषध देना चाहिए।

ज्वर में शीघ्र औषध देने की अवस्था–

मृदुर्ज्वरो लघुर्देहश्चलिताश्च मला यदा।।
अचिरज्वरितस्यापि भेषजं योजयेत्तदा।

अर्थ : जब ज्वर मृदु हो जाय, देह हल्का हो जाय और मल चलायमान हो तो शीघ्र ज्वर लगने पर भी ज्वरनाशक औषध देना चाहिए।

ज्वर पाचन कषाय–

मुस्तयापर्पटं युक्तं शुण्ठया दुःस्पर्शयाऽपिवा।।
वाक्यं शीतकशायं वा पाठोशीरं सबालकम्।
पिबेत्तेद्वच्च भूनिम्ब–गुडूचीमुस्तनागरम्।।
यथायोगमिमे योज्याः कषाया दोषपाचनाः।
ज्वरारोचकतृष्णाऽऽस्य–वैरस्याऽपक्तिनाशनाः।।

अर्थ : 1. नागमोथा व पित्त पापड़ा या 2. सोंठ तथा पित्त पापड़ा, 3. यवासा तथा पित्त पापड़ा, अथवा 4. पाठा, खस तथा सुगन्ध बाल या 5. चिरायता, गुडुची, नागरमोथा तथा सोंठ इन सबों का विधि–पूर्वक शीत कषाय अथवा पकाया हुआ क्वाथ पान करावे इन पाँच कषायों को देश–काल तथा रूचि के अनुसार प्रयोग करे। ये कषाय दोषों को पचाने वाले तथा ज्वर, अरोचक, प्यास, मुख का फीकापन और अपचन को नाश करने वाले हैं।

संतत आदि विशम ज्वरनाशक पाँच क्वाथ–

कलिङ्गकाः पटोलस्य पत्रं कटुकरोहिणी।।
पटोलं सारिवा मुस्ता पाठा कटुकरोहिणी।
पटोल–निम्ब–त्रिफला–मुद्वीका–मुस्त–वत्सकाः।।
किराततिक्तममृतां चन्दनं विश्वभेषजम्।
धात्री–मुस्ताऽऽमृता–क्षौद्रमर्धश्लोकसमापनाः।।
पच्चैते सन्नातादीनां पच्चानां शमना मताः।

अर्थ : 1. कलिङ.क (इन्द्र यव), परवल का पत्ता तथा कुटकी, (संतत ज्वर में), 2. परवल का पत्ता, सारिवा, नागरमोथा, पाठा तथा कुटकी (सतत ज्वर में), 3. परवल का पत्ता, नीम की छाल, त्रिफला (हर्रे, बहड़ा, आँवला) मुनक्का, नागरमोथा तथा इन्द्र यव (अन्येद्युष्क में), 4. चिरायता, गडुची, रक्त चन्दन तथा सोंठ (तृतीयक ज्वर में), और 5. आँवला, नागरमोथा, गुडुची तथा शहद (चातुर्थक ज्वर में) ये पाँचो योग क्रमशः सन्तत आदि पाँचों ज्वरों को शांत करते हैं।।

विश्लेषण : इन क्वाथ द्रव्यों को 25 ग्राम लेकर तथा कुटकर 400 ग्राम जल में पकावे। पकाते समय पात्र का मुख खुला रखे। जब 50 ग्राम जल बच जाय तब छानकर मधु मिलाकर सुबह तथा सायंकाल सूर्य के डूबने के पहले पिलाये।

वातादि ज्वरनाथ क्वाथ–

दुरालभाऽमृता मुस्ता नागरं वातजे ज्वरे।।
अथवा पिप्लीमूलं गुहडूची विश्वभेषजम्।
कनीयः पच्चमूलं च पित्ते शक्रयवा धनम्।।
कटुका चेति सक्षौद्रं मुस्ता पर्पटकं यथा।
सधन्वयासभूनिम्बं वत्सकाद्यो गणः कफे।।
अथवा वृष–गाङ्गेयीशृङ्गबेर–दुरालभाः।
रूग्विबन्धानिलश्लेष्म–युक्ते दीपनपाचनम्।।
अभया–पिप्लीमूल–शम्पाक–कटुका–घनम्।

अर्थ : वात ज्वर में यवासा, गुडुची तथा नागरमोथा सम भाग का क्वाथ अथवा पिपरामूल, गुडुची तथा सोंठ समभाग इन सबों का क्वाथ देना चाहिए। अथवा लघु पंचमूल (सरिवन, पिठवन, बड़ी कटेरी, छोटी कटेरी, गोखरू) इन्द्रयव का क्वाथ दे। पित्त जवर में नागरमोथा तथा कुटकी समभाग इन सबों का क्वाथ शहद मिलाकर पान कराये। अथवा नागरमोथा, पित्त पापड़ा, यवासा, चिरायता समभाग इन सबों का क्वाथ पान कराये। कफ ज्वर में वत्सकादि गण (इन्द्र जव, मूर्वा, वमनेटी, कुटकी, मरिच, अतवीस, मुण्डी, इलायची, बड़ी पाठा, जीरा, जायफल, अजवायन, सरसो, वच, स्याह–जीरा, हींग, बायविडंग, पशुगन्ध, अजमोद) तथा पच्कील पीपर, पिपरामूल,चब्य,चत्रकसोंठ इन सबोंकाक्वाथपिलानाचाहिए।अथवाअडूसाकीपत्ती,नागरमोथा, सोठ तथा यवासा समभाग इन सब का क्वाथ पान कराये। वातकफ ज्वर में हर्रे, पिपरामूल, अमलतास, कफअकी तथा नागरमोथा समभाग इन सबों का क्वाथ पीड़ा विबन्ध युक्त वात तथा कफ ज्वर में दीपन–पाचन होता है।

वात–पित्त ज्वर में द्राक्षादि फाण्ठ या हिम–

द्राक्षामधूकमधुकं रोध्रकाश्मर्यसारिवाः।।
मुस्तामलकह्रीबेर–पद्मकेसरपद्मकम्।
मृणालचन्दनोशीर–नीलोत्पलपरूषकम्।।
फाण्टो हिनो वा द्राक्षादिर्जातीकुसुमवासितः।
युक्तो मधुसितालाजैर्जयत्यनिलपित्तजम्।।
ज्वरं मदात्ययं छर्दिं मूर्च्छां दाहं श्रमं भ्रमम्।
ऊर्ध्वगं रक्तपित्तं च पिपासां कामलामपि।।

अर्थ : वात–पित्त ज्वर में मुनक्का, महुआ, मुलेठी, लोघ, गम्भारी, सारिवा, नागरमोथा, आँवला, हाडबेर, कमल का फूल, नागकेशर, पद्माख, कमलनाल, लालचन्दन, खस, नीलकमल तथ फालसा समभाग इन सबों का चूर्ण 25 ग्राम का फाण्ठ या हिम में द्राक्षादिगण के द्रव्य तथा चमेली के फूल से सुगन्धित कर मधु, मिश्री तथा धान का लावा मिलाकर पान कराये। यह वात–पित ज्वर को जीत लेता है और यह योग ज्वर, मदात्यय, वमन, मूर्च्दा, दाह, थकावट, चक्कर आना ऊर्ध्वग रक्तपित, प्यास तथा कामला रोग को भी दूर करता है।

ज्वर नाशक कुटकी स्वरस–

पाचयेत्कटुकां पिष्ट्वा कर्परेऽभिनवे शुचौ।
निष्पीडितो घृतयुतस्तद्रसो ज्वरदाहजित्।।

अर्थ : कुटकी को जल के साथ पीसकर पवित्र तथा नवीन मिट्टी के पात्र में पकावें और कपड़ा में रख तथा निचोड़ कर रस निकाल लें और घृत के साथ पान कराये। यह ज्वर तथा दाह को शान्त करता है।

वात–कफ ज्वर में धचादि क्वाथ–

कफवाते वचा तिक्तापाठाऽऽरग्वधवत्सकाः।
पिप्लीचूर्णयुक्तो वा क्वाथश्छिन्नोद्भवोद्भवः।।

अर्थ : वात–कफ जन्म ज्वर में वच, कुटकी, पाटा, अमल तास तथ कुरैया का छाल समभाग इन सबों के क्वाथ में पीपर का चूर्ण मिलाकर या गुडूची के क्वाथ में पीपल चूर्ण मिलाकर पान कराये।

वातकफ ज्वर में व्याघ्यादि क्वाथ–

व्याघ्रीशुण्ठ्यमृताक्वाथः पिप्पलीचूर्णसंयुतः।
वातश्लेष्मज्वरश्वास–कासपीनसशूलजित्।।

अर्थ : वात–कफ जन्य ज्वर में कण्ठकारी, सोंठ तथा गुडूची समभाग इन सबों के क्वाथ में पीपल का चूर्ण मिलाकर पान कराये। यह वात–कफ जन्य ज्वर,

श्वास रोग, कास–रोग पीनस तथा शूल को दूर करता है।

वात कफ ज्वर में पथ्यादि क्वाथ–

पथ्याकुस्तुम्बरीमुसता–शुण्ठीकट्तृणपर्पटम्।
सकट्फल–वचाभाङ्गीदेवाह्वं मधुहिङ्गुमत्।।
कफवातज्वरेष्वेव कुक्षिहत्पार्श्ववेदनाः।
कण्ठामयास्यश्वयथु–कासश्वासान्नियच्छति।।

अर्थ : हर्रे, धनियाँ, नागर मोथा, सोंठ, कट्तृण (गन्ध तृण), पित्त पापड़ा, जायफल, मीठावच, वमनैठी तथा देवदारू, समभाग इन सबों के क्वाथ में घृतभृष्ठ हींग तथा मधु मिलाकर, वातकफ ज्वर में पान कराये। यह वात–कफ ज्वर में ही उदरशूल, हृदयशूल तथा पार्श्व वेदना और कण्ठ रोग, मुखरोग, शोथ, कास एवं श्वास रोग को दूर करता है।

पित्त कफ ज्वर में आरग्वधादि तथा तिक्तादि क्वाथ–

आरग्वाधादिः सक्षौद्रः कफपित्तज्वरं जयेत्।
तथा तिक्तावृषोशीर–त्रायन्तीत्रिफलाऽमृताः।।

अर्थ : आरग्वधादिगण के क्वाथ में मधु मिलाकर पान कराने से अथवा कुटकी, अडूसा, खस, त्रायमाणा, त्रिफला (हर्रे, बहेड़, आँवला) तथा गुडूची समभाग इन सबों के क्वाथ में मधु मिलाकर पान कराये। यह पित्त–कफ ज्वर को दूर करता है।

सन्निपात ज्वर में व्याघ्रयादि क्वाथ–

सन्निपातज्वरे व्याघ्री–देवदारूनिशाघनम्।
पटोलपत्रनिम्बत्वक्–त्रिफलाकटुकायुतम्।।

अर्थ : कण्टकारी, देवदारू, हल्दी, नागर मोथा, परवल का पत्ता, नीम का छाल, त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला) तथा कुटकी समभाग इन सबों का क्वाथ में मधु सन्निपात ज्वर में पान कराये।

वात–कफ प्रधान सन्निपात ज्वर में नागरादि क्वाथ–

नागरं पौष्करं मूलं गुडूची कण्टकारिका।
सकासश्वासपार्श्वार्तौं वातश्लेष्मोत्तरे ज्वरे।।

अर्थ : सोंठ, पुष्करमूल, गुडूची तथा कण्टकारी समभाग इन सबों का क्वाथ, वात–कफ प्रधान सन्निपात ज्वर के श्वास, कास तथा पार्श्व पीड़ा में पान कराये।

सर्वज्वर नाशक मधूकपुष्पादि क्वाथ–

मधूकपुष्पं मृद्वीका त्रायमाणा परूषकम्।
सोशीरतिक्ता त्रिफला काश्मर्य कल्पयेद्धिमम्।।
कषायं तं पिबन् काले ज्वरान्सर्वानपोहति।
वद्धविट् कटुकाद्राक्षा–त्रायन्तीत्रिफलागुडान्।

अर्थ : महुआ का फूल, मुनक्का, त्रायमाणा, फालसा, खस, कुटकी, त्रिफला (हर्रे–बहड़ा, आँवला) तथा गम्भारी का छाल समभाग इन सबों का हिम या क्वाथ बनाये। यह समय पर (सात या दस दिन के बाद) पिलाने से सभी ज्वरों को दूर करता है। इसी प्रकार चमेली का पत्ता, आँवला, नागरमोथा तथा यवासा समभाग इनका हिम अथवा क्वाथ सभी ज्वरों को दूर करता है और यदि सभी ज्वरों में मलावरोध हो तो कुटकी, मुनक्का, त्रायमाणा तथा त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला) का हिम या क्वाथ गुड़ मिलाकर पान कराये।

पेयादान विवेचन–

जीर्णौषधोऽन्नं पेयाद्यमाचरेच्छ्लेष्मवान्न तु।।
पेया कफं वर्धयति पङ्कं पांसुषु वृष्टिवत्।
श्लेष्माभिष्यण्णदेहानामतः प्रागपि योजयेत्।।
यूशान् कुलत्थचणक–दाडिमादिकृतान् लघून्।
रूक्षांस्तिक्तरसोपेतान् हृद्यान् रूचिकरान् पटून्।।

अर्थ : औषध के पच जाने पर अन्न–पेया आदि को दे, किन्तु कफ प्रधान व्यक्ति को पेया न दें। क्योंकि कफ से व्याप्त शरीर वाले व्यक्तियों को पेया देने से जिस प्रकार धूली में वर्षा होने से पंक बढ़ जाता है, उसी प्रकार कफ बढ़ जाता है। अतः कफ से व्याप्त शरीर वाले को कुरथी तथा चना के यूष में अनार का रस मिलाकर हल्का, रूक्ष, तिक्तरस से युक्त, हृदय के अनुकूल, रूचिकारक तथा नमकीन यूष पान कराये।

विश्लेषण : कफ से व्याप्त शरीर वाले व्यक्तियों के कफ सूखा हुआ होता है जिससे श्वास, कास उपद्रव होते हैं। पेया कफवर्द्धक है और जलीय है अतः कफ ढीला, कीचड़ के समान कर देती है। इसलिए मसूर, मूँग, चना तथा कुरबी इनमें किसी एक के दाल में खट्टे अनार दाना का बीज, नमक मिलाकर पकावें। इसमें घी आदि स्नेह आदि वस्तु न छोड़े, नमकीन स्वादु होने पर यह हृदय के अनुकूल और रूचिकर हो जाता है। इसके देने से कफ का नाश हो जाता है।

ज्वर में हितकारी अन्न–

रक्ताद्याःशालयो जीर्णाः शष्टिकाश्च ज्वरे हिताः।
श्लेष्मोत्तरे वीततुषास्तथा वाटयकृता यवाः।।
ओदनस्तैः शृतो द्विस्त्रिः प्रयोक्तव्यो यथायथम्।
दोशदूष्यादिबलतो ज्वरघ्नक्वाथसाधितः।।

अर्थ : लालधान आदि तथा साठी का पुराना चावल, ज्वर में हितकरी हैं। कफ प्रधान ज्वर में भूसी रहित तथा आग में भूना हुआ यव का भात दिन में दो–तीन बार थोड़ी मात्रा ज्वर तथा रूचि के अनुसार प्रयोग करना चाहिए। इस यव को दोष, दूष्य तथा बल आदि के अनुसार ज्वरघ्न औषधों से सिद्ध किया हुआ अन्न प्रयोग करें।

ज्वर में यूष का प्रयोग–

मुद्गाद्यैर्लवुभिर्यूषाः कुलत्यैश्च ज्वरापहाः।।

हल्के मूँग आदि मसूर, चना तथा कुलत्थ का हल्का यूष ज्वर को नाश करने वाले हैं।

ज्वरनाशक शाक तथा मांस रस–

कारवेल्लक–कर्कोट–बालमूलकपर्पटैः।।
वार्ताकनिम्बकुसुम–पटोलफलपल्लवैः।
अत्यन्तलघुभिर्मांसैजडिलैश्र हिता रसाः।।
व्याघ्रीपरूषतर्कारी–द्राक्षाऽऽमलकदाडिमैः।
संस्कृताः पिप्लीशुण्ठीधान्यजीरकसैन्धवैः।।
सितामधुभ्यां प्रायेण संयुता वा कृताऽकृताः।

अर्थ : करैला, खरबूजा, कच्ची, मूली, पापड़ा, बैंगन, नीम का फूल, परवल का फल तथा कोमल पत्ती कण्टकारी, फालसा, जयन्ती, मुनक्का, आँवला तथा अनार के पकाये जल से सिद्ध रस में पीपर, सोंठ, धनियाँ, जीरा तथ सेन्धा नमक का चूर्ण मिलाकर मिश्री तथा मधु मिलाकर संसकार किया हुआ अथवा न किया हुआ ज्वर में खाने को दें।

ज्वर में विभिन्न व्यजंन तथा अनुपान–

अनम्लतक्रसिद्धानि रूच्यानि व्यज्जनानि च।।
अच्छान्यनलसम्पन्नानि अनुपानेऽपि योजयेत्।
तानि क्वथितशीतं च वारि मद्यं च सात्म्यतः।।

अर्थ : अम्ल तथा मट्ट के संयोग के बिना बनाये हुए व्यंजनों को दे और ऊपर से पीने के लिए गरम किया हुआ स्वच्छ जल पान कराये। उबाल कर ठंडा

किया हुआ जल अथवा रोगी की प्रकृति के अनुसार पीने को दे।

विश्लेशण : करैला, परवल आदि व्यंजन (शाक) को पकाकर देना चाहिए किन्तु पकाते समय खाद्य वस्तु तथा मट्ठा आदि नहीं मिलाना चाहिए। खाने के बाद गरम किया हुआ जल पिलाना चाहिए।

ज्वर के रोगी का भोजन काल–

सज्वरं ज्वरमुक्तं वा दिनान्ते भोजयेल्लघु।
श्लेष्मक्षयविवृद्धोष्मा बलवाननलस्तदा।।
यथोचितेऽथवा काले देशसात्म्यानुरोधतः।
प्रागल्पवह्निर्भुञ्जानो न ह्यजीर्णेन पीडयते।।

अर्थ : ज्वर के रोगी या ज्वरमुक्त रोगी को दिन के अन्त में हल्का भोजन दे। क्योंकि दिन के अन्त में कफ के क्षय हो जाने से जाठराग्नि की उष्मा बलवान् होती है। अथवा उचित समय पर देश, काल तथा रोगी के प्रकृति के अनुकूल पहले अल्प जाठराग्नि वाले व्यक्ति भोजन करने पर अजीर्ण से पीड़ित नहीं होताहै।

विश्लेषण : ज्वर वाले या ज्वरमुक्त व्यक्ति को पथ्य देने का समय दिन के अन्तिम भाग का विधान है। क्योंकि भोजन के बाद अन्न की गर्मी से निद्रा आ जाती है और निद्रा आने से ज्वर बढ़ने का भय रहता है। किन्तु यदि रोगी को प्रातः मध्याह्न में ही भूख लग जाय तो उसे देश अर्थात् जिस देश में जिस अन्न की प्रधानता हो अथवा जो अन्न प्रकृति के अनुकूल हो वह पथ्य देना चाहिए। जैसे बंगाल प्रदेश में पुराना चाल, पंजाब में गेहूँ की रोटी तथा साधारण देश में जिस चावल या गेहूँ या जव का अभ्यासी रोगी हो तो उसी समय उसे पथ्य देना चाहिए। यदि न दिया जाय तो शरीर क्षीण, बल की हानि और क्षुधा का नाश हो जाता है।

सर्पिःपानकालमाह–

ज्वर में घृत पान काल–

कषायपानपथ्यान्नैर्दशाह इति लङ्घिते।
सर्पिर्दद्यात्कफे मन्दे वातपित्तोत्तरे ज्वरे।।
पक्वेषु दोषेश्वमृतं तद्विषोपममन्यथा।
दशाहे स्यादतीतेऽपि ज्वरोपद्रववृद्धिकृत्।।
लङ्घनादिक्रमं तत्र कुर्यादाकफसङ्क्षयात्।

अर्थ : कषाय पान तथा पथ्य अन्न के सेवन करते हुए दस दिन बीत जाय, कफ मन्द हो तथा वात–पित्त प्रधान हो तो घृत पान कराये। दोषों के परिपक्व

होने पर घी अमृत के समान है और दोषों के परिपक्व न रहने पर विष के समान है। दस दिन बीत जाने के बाद भी यदि ज्वर उपद्रव करने वाला हो तो नवीन ज्वर में लंघन आदि जो उपक्रम बताये गये हैं उन्हें कफ के क्षीण होने तक करना चाहिए।

विश्लेषण : जीर्णज्वर दस दिन के बाद होता है। ऐसा वाग्भट्ट का मत है। किन्तु दस दिन के बाद भी कफ की शान्ति न हो तो घृतपान नहीं करना चाहिए। दस दिन बीतने पर दोषों की साम्यता के कारण उपद्रवों की वृद्धि हो तो घी का प्रयोग रोककर लंघन, पाचन आदि उपक्रम करना चाहिए। किसी का मत है कि जीर्णज्वर दस दिन, पन्द्रह दिन तथा एक्कीस दिन बाद होता है। उस अवस्था में औषध से सिद्ध घृतपान कफ के क्षीण होने पर कराना चाहिए।

जीर्ण ज्वर में घृत प्रयोग का कारण–

देहधात्वबलत्वाच्च ज्वरो जीर्णोऽनुवर्तते।।
रूक्षं हि तेजो ज्वरकृत्तेजसा रूक्षितस्य च।
वमनस्वेदकालाम्बुकशायलघुभोजनैः।।
यः स्यादतिबलो धातुः सहचारी सदागतिः।
तस्य संशमनं सर्पिर्दीपतस्येवाम्बु वेश्मनः।।
वातपित्तजितामग्र्यं संसकारमनुरूध्यते।
सुतरां तद्घृतो दद्याद्यथास्वौषधसाधितम्।।
विपरीतं ज्वरोष्माणं जयेत्पित्तं च शैत्यतः।
स्नेहाद्वातं घृतं तुल्ययोगसंसकारतः कफम्।।
पूर्वे कषायाः सघृताः सर्वे योज्या यथामलम्।

अर्थ : देह तथा धातु के दुर्बल होने से जीर्ण ज्वर सदा बढ़ता रहता है। तेज (पित्त) से रूक्षित शरीर में रूक्ष तेज ज्वर को उत्पन्न करता है। वमन, स्वेदन, काल (सात दिन), उष्ण जल, कषाय तथा हल्का भोजन से जो सदा चलने वाला सहकारी अत्यधिक बलवान (वायु) है उस वायु को घृत शमन करने वाला है जैसे जलते हुए घर को जल शान्त करता है। घृत वात–पित्त के जीतने में श्रेष्ठ है और संसकार के अनुसार कार्य करने वाला होता है। अतः दोषानुसार औषधों से सिद्ध घृत का प्रयोग करना चाहिए। घृत ज्वर की गर्मी के विपरीत (शीतल) है। घृत शीतलता के कारण पित्त को स्निग्ध होने से वायु को तथा कफ के तुल्य घृत कफ नाशक औषधों से संस्कारित होने पर कफ

को नाश करता है। पहले ज्वर नाशक जो कषाय दोषानुसार बताये गये है उन कषायों में घृत मिलाकर पीने को देना चाहिए।

जीर्णज्वर में त्रिफलादि क्वाथ–

त्रिफलापिचुमन्दत्वङ्मधुकं बृहतीद्वयम्।
समसूरदलं क्वाथः सघृतो ज्वरकासहा।।

अर्थ : त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला), नीम का छाल, मुलेठी, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी तथा मसूर की दाल समभाग के विधिवत् क्वाथ में घृत मिलाकर प्रयोग करें। यह जीर्णज्वर का ज्वर तथा कास को नष्ट करता है।

जीर्ण ज्वरादि में पिप्पल्यादि घृत–

पिप्पलीन्द्रयवधावनितिक्ता–
द्रक्षियाऽतिविषया स्थिरया च।।
घृतमाशु निहन्ति साधितं ज्वरमग्निं विषमं हलीमकम्।
अरूचि भृशताषमंसयोर्वमथुं पार्श्वशिरोरूजंक्षयम्।।

अर्थ : पीपर, इन्द्र यव, मुद्‌गषर्णी, कुठकी, सारिवा, आँवला, भुई आंवला, बेलगिरि, नागरमोथा, चन्दन, त्रायमाणा, खस, मुनक्का, अतीस तथा शालपर्णी समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क (घृत के चौथाई कल्क तथा चौगुना क्वाथ) से विधिवत् सिद्ध किया हुआ घृत प्रयोग करने से जीर्णज्वर विषमाग्नि, हलीमक, अरूचि, अंधसप्रदेश के अत्यधिक ताप, वमन, पार्श्व तथा सिर की पीड़ा और क्षयरोग को शीघ्र ही दूर करता है।

जीर्ण वात ज्वर तथा पित्त ज्वर में घृत प्रयोग–

तैल्वकं पवनजन्मनि ज्वरे
योजयेन्त्रिवृतया वियोजितम्।
तिक्तकं वृषघृतं च पैत्तिके
यच्च पालनिकया शृतं हविः।।

अर्थ : वातज़ जीर्ण ज्वर में तौल्वक घृत का प्रयोग करे किन्तु तौलवक घृत सिद्ध करने वाले औषधों से निशोथ को निकालकर घृत सिद्ध करे। पित्तज जीर्ण ज्वर में तिक्तक घृत या वृष घृत का प्रयोग करे या त्रायमाणा से सिद्ध घृत का प्रयोग करे।

जीर्ण कफ ज्वर में विडङ्गादि घृत–

विडङ्गसौवर्चलचव्यपाठा–
व्योशाग्निसिन्धूद्भवयावशूकैः।

पलांशकैः क्षीरसमं घृतस्य
प्रस्थं पचेज्जीर्णकफज्वरघ्नम्।।

अर्थ : वायविंडग, सोंचर नमक, चव्य, पाठा, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), सेन्धा नमक तथा यवक्षारसमभाग एक–एक पल (50 ग्राम) कल्क के साथ एक प्रस्थ (1 किलो) दूध तथा चार प्रस्थ (4 किलो) जल मिलाकर एकप्रस्थ (1 किलो) घृत निर्माण विधि के अनुसार घृत सिद्ध करे। यह घृत जीर्ण कफ ज्वर को नाश करता है।

जीर्ण ज्वर में अन्यान्य घृत–
गुडूच्या रसकल्काभ्यां त्रिफलाया वृषस्य च।
मृद्वीकाया बलायाश्र्व स्नेहाः सिद्धा ज्वरच्छिदः।।

अर्थ : 1. गुडूची के कल्क–कवाथ, 2. त्रिफला के कल्क क्वाथ, 3. अडुसा के कल्क क्वाथ, 4. मुनक्का के कल्क क्वाथ या 5. बरियार केक कल्क क्वाथ से विधिपूर्वक बनाया हुआ घृत सेवन करने से ज्वर को नाश करते हैं।

घृत सेवन के बाद पथ्य–
जीर्णे घृते च भुञ्जीत मृदु मांसरसौदनम्।
बलं ह्यलं दोशहरं पर तच्च बलप्रदम्।।

अर्थ : घृत के पच जाने के बाद भात भक्षण करे। यह बल को बढ़ाने में तथा दोषों को दूर करने में पूर्ण समर्थ है और उत्तम बल को बढ़ाने वाला है।

कफ–पित्त नाशक रस–
कफपित्तहरा, मुद्ग–कारवेल्लादिजा रसाः।
प्रायेण तस्मान्न हिता जीर्णे वातोत्तरे ज्वरे।।
शूलोदावर्तविष्टम्भजनना ज्वरवर्धनाः।

अर्थ : मूँग तथा करैला आदि का रस प्रायः कफ–पित्त को दूर करने वाला है। इसलिए जीर्ण वातप्रधानज्वर में हितकर नहीं है। क्योंकि शूल, उदावर्त तथा कब्जियत को उत्पन्न करने वाला है और ज्वर को बढ़ाने वाला है।

ज्वर में संशोधन विधान–
न शाम्यत्येवमपि चेज्ज्वरः कुर्वीत शोधनम्।।
शोधनार्हसय वमन प्रागुक्तं तस्य योजयेत्।

आमाशयगते दोषे बलिनः पालयन्बलम्।।
पक्वे तु शिथिले दोषे ज्वरे वा विषमद्यजे।
मोदकं त्रिफलाश्यामा–त्रिवृत्पिप्पलिकेसरैः।।
ससितामधुमिर्दद्याद्व्योषाद्यं वा विरेचनम्।
आरग्वधं वा पयसा मृद्वीकाना रसेन वा।।
त्रिफलां त्रायमाणां वा पयसा ज्वरितः पिबेत्।
विरिक्तानां च संसर्गी मण्डपूर्वा यथाक्रमम्।।

अर्थ : यदि इन उपायों से ज्वर शान्त न हो तो संशोधन (वमन–विरेचनादि) करे। शोधन करने के योग्य पहले वमन की विधि जो बताई गई है उसके अनुसार वमन का प्रयोग करे। बलवान् रोगी के आमाशयगत दोष होने पर बल की रक्षा करते हुए वमन, पक्वाशयगत दोषों के शिथिल होने पर अथवा विषपान तथा मद्यपान जन्य ज्वर में त्रिफला, कालानिशोथ, पीपर तथा नागकेशर इन सबों का चूर्ण बनाकर मिश्री तथा मधु के साथ मोदक बनाकर दे। अथवा व्योषाद्य विरेचन का प्रयोग करे। अथवा अमलतास की गुदी गरम दूध के साथ अथवा मुनक्का के रस के साथ या त्रिफला का चूर्ण दूध से, या त्रायमाण का चूर्ण दूध से जीर्ण ज्वर का रोगी विरेचनार्थ पान करे। सम्यक् वमन विरेचन होने पर मण्डपूर्वक पेया, विलेपी, अकृत यूष, कृत यूष, संसर्गी क्रम का सेवन करे।

ज्वर चिकित्सा में विशेष निर्देश–

च्यवमानं ज्वरोक्लिष्टमुपेक्षेत मलं सदा।
पक्वोऽपि हि विकुर्वीत दोषः कोष्ठे कृतास्पदः।।
अतिप्रवर्तमानं वा पाचयन्सङ्ग्रहं नयेत्।
आमसङ्ग्रहणे दोशा दोषोपक्रम ईरिताः।।
पाययेद्दोषहरणं मोहादामज्वरे तु यः।
प्रसुप्तं कृष्णसर्पं स कराग्रेण परामृशेत्।।

अर्थ : ज्वर वेग के उभार से निकलते हुए मल को नही रोकना चाहिए अर्थात् उपेक्षा करनी चाहिए। दोषों के परिपक्व हो जाने पर भी कोष्ठ में स्थित दोष विकार उत्पन्न करते हैं। यदि अधिक मात्रा में मल निकलता हो तो उसे पाचन तथा संग्राही औषधों से रोके। आम दोष को रोकने पर जो उपद्रव होता है उनका वर्णन दोषापक्रमणीय अध्याय में किया गया है। जो व्यक्ति अज्ञानतावश

आम ज्वर में दोष निस्सारक औषध देता है तो वह चिकित्सक सोते हुए काले साँप को हाथ की अंगुलियों से स्पर्श करता है।

विश्लेषण : यहाँ तीन संकेत किया गया है। आम ज्वर में सामान्य वमन या विरेचन होता हो तो उसे नहीं रोकना चाहिए। क्योंकि रूके हुए दोष अपना स्थान आशयों में बनाकर बहुत दिन तक उपद्रव करने वाले होते हैं। (2) यदि आम ज्वर में अधिक मात्रा में वमन विरेचन होता हो तो पाचन औषध के साथ संग्राहक औषध से दोषों का पाचन करते हुए वमन–विरेचन को रोकना चाहिए। (3) आम ज्वर में दोष बढ़कर उपद्रव करते हैं। तो भी दोष निःसारक वमन या विरेचन नहीं देना चाहिए; क्योंकि जैसे कच्चे फल से रस निकालने के समय उसका सम्पूर्ण अंग नष्ट–भ्रष्ट हो जाता है। उसी प्रकार जिस कोष्ठ में आमदोष संचित रहता है उसे निःसारक दवा कोष्ठ को क्षतिग्रस्त करते हुए कोष्ठ से निकालती है। यह साँप को हाथ से छूने पर काटता है और मर जाता है। उसी प्रकार आमदोष को निकालने से उपद्रव की वृद्धि होती है, और रोगी की मृत्यु हो जाती है।

ज्वर क्षीण व्यक्तियों को वमन–विरेचन का निषेध--

ज्वरक्षीणस्य न हितं वमनं च विरेचनम्।
कामं तु पयसा तस्य निरूहैर्वा हरेन्मलान्।।

अर्थ : ज्वर से क्षीण व्यक्ति को वमन तथा विरेचन नहीं देना चाहिए। यदि मल संचित हो तो पूर्ण मात्रा में दूध पिलाकर अथवा निरूहवस्ति के द्वारा मल को निकाले।

जीर्ण ज्वर मं दूधका विभिन्न प्रकार से प्रयोग--

क्षीरोचितस्य प्रक्षीण–श्लेष्मणो दाहतृड्वतः।
क्षीरं पित्तानिलार्तसरू पथ्यमप्यतिसारिणः।।
तद्वपुर्लडघनोतप्त पलुष्टं वनमिवाग्निना।
दियाम्बु जीवयेत्तस्य ज्वरं चाशु नियच्छति।।
संस्कृतं शीतमुष्णं वा तस्माद्धारोष्णमेव वा।
विभज्य काले युज्जीत ज्वरिणं हन्त्यतोऽन्यथा।।

अर्थ : जो व्यक्ति दूध पीने का अभ्यासी है और जिसका कफ क्षीण हो गया है, जो दाह तथा प्यास से पीड़ित है और पित्त तथा वायु से ग्रस्त है तथा जो अतिसार का रोगी है उसके लिए दूध पथ्य है। अतः लंघन से क्लिष्ट शरीर तथा ज्वर को दूध जैसे ही शान्त करता है तथा जीवन प्रदान करता है जैसे दावाग्नि को वर्षा जल शान्त करता है और वृक्षों को जीवन प्रदान करता है।

अतः औषधों के द्वारा संस्कार किया हुआ शीत या उष्ण अथवा धारोष्ण दूध देशकाल के अनुसार विभाग कर समय पर प्रयोग करना चाहिए। अन्यथा (आम ज्वर में) दूध ज्वर के रोगी को मार डालता है।

संस्कृतदूध–

पयः सशुण्ठीखर्जू रमृद्वीकाशर्कराघृतम्।
शृतशीतं मधुयुतं तृड्दाहज्वरनाशनम्।।
तद्वद् द्राक्षाबलायष्टी–सारिवाकणचन्दनैः।
चतुर्गुणेनाम्भसा वा पिप्पल्या वा शृतं पिबेत्।।
कासाच्छ्वासाच्छिरःशूलात्पार्श्वशूलाच्चिरज्वरात्।
मुच्यते ज्वरितः पीत्वा पञ्चमूलीशृतं पयः।।
शृतमेरण्डमूलेन बालबिल्वेन वा ज्वरात्।
धारोष्णं वा पयः पीत्वा विबद्धानिलवर्चसः।।
सरक्तपिच्छातिसृतेः सतृट्शूलप्रवाहिकात्।
सिद्धं शुण्डीबलाव्याघ्री–गोकण्टकगुडैः पयः।।
शोफमूत्रशकृद्वात–विबन्धज्वरकासजित्।
वृश्चीव–बिल्व–वर्षाभू–साधितं ज्वरशोफनुत्।।
शिशिपासारसिद्धं वा क्षीरमाशु ज्वरापहम्।

अर्थ : सोंठ, खजूर तथा मुनक्का के साथ दूध को पकाकर तथा शीतलकर उसमें शक्कर, घृत तथा मधु मिलाकर प्यास, दाह तथा ज्वर को नाश करने के लिए रोगी को पिलाये।

उसी प्रकार मुनक्का, बरियार, मुलेठी, सारिवा, पीपर तथा चन्दन के साथ पकाया हुआ दूध या चौगुने जल के साथ पकाया हुआ दूध अथवा पीपर के साथ पकाया हुआ दूध ज्वर रोगी को पिलाये।

ज्वर का रोगी लघुपञ्चमूल (शाल पर्णी, पृश्निपर्णी, कण्टकारी, वनभन्टा तथा गोखरू) से सिद्ध दूध को पीकर कास, श्वास, शिरशूल, पार्शशूल तथा जीर्ण ज्वर से मुक्त हो जाता है।

ज्वर के रोगी को वायु तथा मल का विबन्ध होने पर एरण्ड के मूल की छाल से अथवा कच्चे बेल की गूर्दी से सिद्ध दूध अथवा धारोष्ण दूध पीने से रोगी जीर्ण ज्वर से मुक्त हो जाता है।

सोंठ, वरियार, भटकटैया तथा गोखरू के साथ विधिवत् सिद्ध दूध, गुड़ मिलाकर पीने से जीर्ण ज्वर का रोगी रक्त तथा भकदार अतिसार और प्यास तथा शूलयुक्त प्रवाहिका से मुक्त हो जाता है और यह दूध, शोथ,

मूत्राधात, मल के साथ विधिवत् विबन्ध तथा वात विबन्ध, ज्वर तथा कास को दूर करता है।

रक्त पुनर्नवा, बेल की गुदी तथा सफेद पुनर्नवा सिद्ध दूध पिलाने से ज्वर तथा शोथ को दूर करता है। अथवा शीशम के सार (भीतर की लकड़ी) से विधिवत् सिद्ध दूध शीघ्र ही ज्वर को नाश करता है।

वि‌लेशण : जीर्ण ज्वर की विभिन्न अवस्थाओं में औषध के साथ विधिवत् सिद्ध दूध का प्रयोग बताया गया है। जितना दूध पकाना हो उसके अष्टमांश औषध द्रव्यका कल्क मिलाकर तथा दूध से चौगुना जल मिलाकर पकाना चाहिए। जब दूध मात्र शेष रह जाय तो छान कर रोग के अनुसार उष्ण अथवा शीत बल के अनुसार मात्रा पूर्वक दूध पिलाना चाहिए।

जीर्ण ज्वर में निरूह वस्ति का विधान–

निरूहसतु बलं वह्नि विज्वरत्वं मुदं रूचिम्।।
दोशे युक्तःकरोत्याशु पववे पक्वाशयं गते।
पित्तं वा कफपित्तं वा पक्वाशयगतं हरेत्।।
स्रसनं त्रीनपि मलान् बस्तिः पक्वाशयाश्रयान्।

अर्थ : पक्वाशय में जाकर दोषों के पक्व होने पर निरूह वस्ति देने से शीघ्र ही बल की वृद्धि, जाठराग्नि प्रदीप्त, ज्वर का नाश, प्रसन्नता तथा भोजन में रूचि को उत्पन्न करती है। पक्वाशय में स्थित पित्त या पित्त–कफ को निरूह वस्ति से निकाले। निरूहवस्ति पक्वाशय में आश्रित तीनों मलों (वात–पित्त–कफ) को निकालती है।

ज्वर में अनुवासन वस्ति का विधान–

प्रक्षीणकफपित्तस्य त्रिकपृष्ठकटिग्रहे।।
दीप्ताग्नेर्बद्धशकृतः प्रयुज्जीतानुवासनम्।

अर्थ : ज्वर में जिस व्यक्ति का कफ तथा पित्त क्षीण हो गया हो, अग्नि प्रदीप्त हो, मल रूका हो उसको त्रिकप्रदेश, पृष्ठ प्रदेश तथा कटिप्रदेश में गड़गड़ाहट होनेपर अनुवासनवस्ति का प्रयोग करे।

ज्वर में निरूहण वस्ति का योगनिर्माण–

पटोलनिम्बच्छदन–कटुकाचतुरङ्गुलैः।।
स्थिराबलागोक्षुरकमदनोशीरबालकैः।
पयस्यर्धोदके क्वाथं क्षीरशेषं विमिश्रतम्।।
कल्पितैर्मुस्त मदन–कृष्णा–मधुक–वत्सकैः।

वस्तिर्मधुघृताभ्यां च पीडयेज्ज्वरनाशनम्।।

अर्थ : परवल, नीम का पत्ता, कुटकी, अमलतास, शालपणी, बरियार, गोखरू, मदनफल, खस, सुगन्धवाला समभाग इन सबों को आधा पानी तथा आधा दूध मिलाकर (क्वाथ विधि के अनुसार) दूध अवशिष्ट रहने तक पकावे और छानकर इसमें नागरमोथा,, मदनफल, पीपर, मुलेठी तथा इन्द्रयव समभाग इन सबों का कल्क, मधु तथा घृत मिलाकर (वस्ति विधि के अनुसार) निरूहवस्ति का प्रयोग करे। यह ज्वर को नाश करता है।

विश्लेषण : ज्वर के रोगी की अवस्था के अनुसार मात्रा पूर्वक कल्क, घृत, तथा पकाये हुए दूध में मिलाकर तथा मथकर वस्तियन्त्र में भरकर विधिपूर्वक गुदा मं अवपीडन करना चाहिए।

द्वितीय निरूह वस्ति का योग–

चतस्रः पर्णिनीर्यष्टी–फलोशीरनृपद्रुमान्।
क्वाथयेत्कल्कयेद्यष्टौ–शताह्वाफलिनीफलम्।।
मुसतं च बस्तिः सगुडक्षौद्रसर्पिर्ज्वरापहः।

अर्थ : चारो पर्णी (सरिवन, पिठवन, वनमूंग तथा वन उडद) मुलेठी, मदनफल, खस तथा अमलतास इन सबों को विधिपूर्वक तैयार करे और उसमें मुलेठी, सौंफ, प्रियङ्गुफल तथा नागर मोथा का कल्क, गुड़, मधु तथा घृत मात्रापूर्वक मिलाकर निरूहवसित का प्रयोग करे। यह योग ज्वर को नाश करता है।

नीति ज्वर में अनुवासनवस्ति का योग–

जीवन्तीं मदनं मेदां पिप्जीं मधुकं वचाम्।।
ऋद्धि रास्नां बलां बिल्वं शतपुष्पां शतावरौम्।
पिष्ट्वा क्षीरं जलं सर्पिसतैलं चैकत्र साधितम्।।
ज्वरेऽनुवासनं दद्याद्यथास्नेहं यथामलम्।
ये च सिद्धिषु वक्ष्यन्ते बस्तयो ज्वरनाशनाः।।

अर्थ : जीवन्ती, मदनफल, मेदा, पीपर, मुलेठी, वच, ऋद्धि, रास्ना, बरियार, बेल की गुदी, सौंफ तथा शतावरी समभाग इन सबों को पीसकर इनका कल्क, दूध, जल, घृत या तैल एकत्र मिलाकर स्नेहनिर्माण विधि के अनुसार घृत या तेल सिद्ध करे और ज्वर में इसक अनुवासनवस्ति दोषों के अनुसार स्नेह (वात, कफ में तैल और पित्त में घृत) का प्रयोग करे। और जो ज्वर नाशक वस्तियाँ सिद्धि स्थान में कही जायेंगी दोषानुसार उनका भी प्रयोग करें।

जीर्ण ज्वर में नस्य का प्रयोग–

शिरोरूग्गौरवश्लेश्म–हरमिन्द्रियबोधनम्।
जीर्णज्वरे रूचिकरं दद्यान्नस्यं विरेचनम्।।
स्नैहिकं शून्यशिरसो दाहार्ते पित्तनाशनम्।

अर्थ : जीर्ण ज्वर में सिर में वेदना तथा भारीपन हो तो कफ नाशक तथा इन्द्रिया को प्रबृद्ध करने वाला रूचिकर विरेचन नस्य देना चाहिए। सिर में सूनापन, दाह तथा वेदना हो तो पित्तनाशंक स्नेह का नस्य दे।

जीर्ण ज्वर में धूम, गण्डूल तथा कवल का प्रयोग–

धूमगण्डूषकवलान् यथादोषं च कल्पयेत्।
प्रतिश्यायास्यवैरस्य–शिरःकण्ठामयापहान्।।

अर्थ : प्रतिश्याय, मुख की विरसता, शिराशूल तथा गले के रोग को दूर करने वाले दोषों के अनुसार धूम, गण्डूष तथा कवलधारण का प्रयोग करे।

जीर्ण ज्वर में अभ्यगं का विधान–

अरूचौ मातुलुङ्गस्य केसरं साज्यसैन्धवम्।।
धात्रीद्राक्षासितानां वा कल्कमास्येन धारयेत्।
यथोपशयसंस्पर्शान् शीतोष्णद्रव्यकल्पितान्।।
अभ्यगलेपसेकादीन् ज्वरे जीर्णे त्वगाश्रिते।
कर्यादज्जनधूमांश्व तथैवाऽऽगन्तुजेऽपि तान्।।

अर्थ : त्वचा के आश्रित जीर्ण ज्वर होने पर शीत तथा उष्ण द्रव्यों से सिद्ध रेगी की प्रकृति के अनुसार अभ्यंग लेप तथा सेक आदि का प्रयोग करे। इसी प्रकार का अन्जन तथा धूप का प्रयोग आगन्तुक ज्वर में भी करें।

दाह नाशक अभ्यंग आदि के विभिन्न प्रयोग–

दाहे सहस्रधौतेन सर्पिषाऽभ्यगमाचरेत्।
सूत्रोक्तैश्र्व गणैस्तैस्तैर्मधुराम्लकषायकैः।।
दूर्वादिभिर्वा पित्तघनैः शोधनादिगणोदितैः।
शीतवीर्यैर्हिमस्पर्शैः क्वाथकल्कीकृतैः पचेत्।।
तैलं सक्षीरमयगंत्सद्यो दाहज्वरापहम्।
शिरो गात्रं च तैरेव नाऽतिपिष्टैः प्रलेपयेत्।।
तत्क्वाथेन परीषेकमवगाहं च योजयेत्।
तथाऽऽरनालसलिल–क्षीरशुक्तघृतादिभिः।।

कपित्थमातुलिगंम्ल–विदारीरोध्रदाडिमैः।
बदरीपल्लवोत्थेन फेनेनारिष्टजेन वा।।
लिप्तेऽङ्गे दाहरुङमोहाश्छर्दिसतृष्णा च शाम्यति।

अर्थ : शरीर में दाह होने पर जल में हजार बार धोये हुए घृत का अभ्यगं (मालिश) करे। सूत्र स्थान में कहे गये मधुगण, अम्लगण तथा कषायगण अथवा दूर्वादिगण और पित्तनाशक तथा शोधनादिगण अन्य शीत वीर्य एवं शीत स्पर्शवाले द्रव्यों के क्वाथ तथा कल्क और दूध के साथ विधिपूर्वक तेल पकावे। यह तेल अभ्यगं करने से या मालिश करने से शीघ्र ही दाह तथा ज्वर को दूर करता है। उन्हीं द्रव्यों को पीस कर हल्का लेप शिर तथा शरीर में दाह होने पर लगावे और उन्हीं द्रव्यों के क्वाथ क्वाथ से परिषेक तथा अवगाहन कराये। और आरनाल (कांज्जी), शीतल जल, दूध, शुक्त तथा घृत आदि एक में मिलाकर परिषेक, कौथ, विजौरा, निम्बू, इमली, विदारीकन्द लोध तथा अनार के क्वाथ से परिषेक या अवगाहन तथा बैर के ताजे पत्तों के कल्क का लेप या रीठा के फेन का लेप करने से दाह, वेदना, मोह, वमन तथा प्यास शान्त होते हैं।

विश्लेषण : ज्वर जन्य दाह में इन औषधों का विधान किया गया है किन्तु किसी भी कारण शरीर में या अंगों में दाह होने पर इनका प्रयोग लाभकर सिद्ध होता है।

सदाह जवर में उपचार–

यो वर्णितः पित्तहरो दोषापक्रमणे क्रमः।
तं च शीलयतः शीघ्रं सदाहो नश्यति ज्वरः।।

अर्थ : दोर्षोषक्रमणीय अध्याय में जो पित्त नाशक उपाय बताये गये हैं उनको सेवन करने वाले व्यक्ति का दाहयुक्त ज्वर नष्ट हो जाता है।

ज्वर में शीतशामक उपाय –

तगरादितैलम्

वीर्योष्णैरूश्णसंस्पर्शेस्तगरागुरूकड्कुमैः।।
कुष्ठस्थौणेयशैलेय–सरलामरदारूभिः।
नख–रास्ना–मुर–वचा–चण्डैलाद्वयचोरकैः।।
पृथ्वीका–शिग्रुसुरसा–हिंस्रा–ध्यामक–सर्षपैः।।
दशमूलाऽमृतैरण्ड–द्वय–पतूर–रोहिशैः।।
तमाल–पत्र–भूनिम्ब–शल्लकी–धान्य–दीप्यकैः।
मिशि–माष–कुलत्थाग्नि–प्रकीर्यानाकुलीद्वयैः।

अन्यैश्च तद्विधैर्द्रव्यैः शीते तैलं ज्वरे पचेत्।।
क्वथितैः कल्कितैर्युक्तैः सुरासौवीरकादिभिः।।
तेनाभ्याज्ज्यात्सुखोष्णेन तैः सुपिष्टैश्च लेपयेत्।
कवोष्णैस्तैः परीषेकमवगाहं च कल्पयेत्।।
आरग्वधादिवर्ग च पानाभ्यज्जनलेपनैः।।
धूपानगरूजान् यांश्च वक्ष्यते विषमज्वरे।
अग्न्यनग्निकृतान्स्वेदान् स्वेदिभेषजभोजनम्।।
गर्भभूवेश्मशयनं कुथाकम्बलरल्लकान्।
निर्धूमदीप्तैरडारैर्हसन्तीश्च हसनितकाः।।
मद्यं सत्र्यूषणं तक्रं कुलत्थव्रीहिकोद्रवान्।
संशीलयेद्वेपथुमान् यच्चाऽयदपि पित्तलम्।।
दयिताः सतनशालिन्यः पीना विभ्रमभूषणाः।
यौवनासवमत्ताश्च तमालिउेयुरडनाः।।
वीतशीतं च विज्ञाय तास्ततोऽपनयेत्पुनः।

अर्थ : उष्णवीर्य तथा उष्णस्पर्श वाले द्रव्यों तगर, अगरू, केशर,, कूट, थुनेर छड़ीला, धूप, देवदारू, नख (सुगन्धित द्रव्य) रास्ना, मुरू, वच, नकछिकनी, बड़ी इलायची, छोटी इलायची, चोरपुष्पी, मंगरैला, सहिजन, तुलसी, हैंसध्यामकर (सुगन्धित तृण), सरसों, दशमूल, गुडची, लाल एरण्ड, सफेद एरण्ड, पत्तुर रोहिततृण, तमालपत्र, चिरायता, सलई, धनियाँ, अजवायन, सौंफ, उड़द, कुरथी, लिलकु, करंज, नाकुली, गन्धानाकुली तथा अन्य इसी प्रकार के द्रव्यों के कल्क तथा क्वाथ के साथ और सुरा सोवीर आदि के साथ विधिवत् तेल पकावे और थोड़ा गरम–गरम इसी तैल से शीत ज्वर में मालिश करे। इन्ही द्रव्यों को अच्छी तरह पीसकर शरीर में लेप लगाये। अथवा इन्ही द्रव्यों के थोड़ा उष्म क्वाथ से अगवाहन करे। उसी प्रकार किसी एक शुक्त, गोमूत्र या मस्तु से अभिषेक करे। इसके अतिरिक्त आरग्व– धादिगण के द्रव्यों के क्वाथ या कल्क का क्रमश पान अभ्यज्जन तथा तेल के द्वारा उपचार करें। अगरू आदि धूप जो विषम ज्वर के उपचार में कहेंगे उनका भी शीत ज्वर में प्रयोग करे। अग्नि स्वेद या अनग्नि स्वेद या स्वेद लाने वाले औषध तथा भोजन का प्रयोग करे। गर्भगृह तथा भूधरा (तहखाना) में शयन करें और कथरी कंबल तथा रेशमी वस्त्र बिछाकर तथा ओंढ़कर शयन करें। निर्धूम जलते हुए अंगारों से भरी हुई बोरसी (अंगीठी) का सेवन करें। मद्य, त्र्यूषण (सोंठ, पीपर, मरिच) से युक्त मट्ठा तथा कुरथी, व्रीहिधान तथा कोदो का सेवन शीत से

कांपता हुआ व्यक्ति सेवन करे और जो पित्तकारक पदार्थ हो उनका सेवन करे।

त्रिदोश ज्वर की चिकित्सा–

सांन्निपातचिकित्सा

वर्धनेनैकदोशस्य क्षपणेनोच्छ्रितस्य च।।
कफस्थानानुपूर्व्या वा तुल्यकक्षाज्जयेन्मलान्।

क्षीण दोषों के वर्द्धन तथा बढ़े दोषों के क्षय और समकक्ष दोषों को आमाशय आदि कफ स्थानों की आनुपर्वी से शान्त करे।

विश्लेषण : सन्निपात ज्वर में दोष वृद्ध, वृद्धतर तथा वृद्धतम होते हैं। वृद्ध को बढ़ाकर वृद्धतर और वृद्धतम को घटाकर वृद्धतर हो जाने पर उसे कफनाशक औषध ा देना चाहिए। जो सन्तिपात ज्वर समवृद्ध त्रिदोष से उत्पन्न है उसे भी कफनाशक औषधि देना चाहिए। जब दोष बराबर पर आ जाते हैं तो सन्निपात ज्वर में आम और कफ को दूर करने वाले औषध का प्रयोग किया जाता है।

सन्निपात ज्वर का उपद्रव तथा उपचार–

सन्निपातज्वरस्यान्ते कर्णमूल सुदारूणः।।
शोफः सज्जायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते।
रक्तावसेचनः शीघ्र सर्पिःपानैश्च तं जयेत्।।
प्रदेहैः कफपित्तघ्नैनविनैः कवलग्रहैः।

अर्थ : सन्निपात ज्वर में कर्ण मूल में भयंकर शोथ होता है। उससे कोई–कोई व्यक्ति छुटकारा पाता है। इसकी चिकित्सा रक्तवसेचन (जोंक लगाकर रक्त निकालना) घृतपान, कफपित्त नाशक स्नेह का लेप, नस्य तथा कवल धारण के द्वारा शीघ्र करें।

विश्लेषण : सन्निपात ज्वर के अन्त अर्थात् बीच में यदि शोथ हो जाय तो कष्टकारी होता है। जैसे सन्निपात ज्वर के पहले शोथ हो तो असाध्य, मध्य में हो तो कष्टसाध्य और अन्त में हो तो सुखसाध्य होता है। अतः अन्त से सन्निपात ज्वर के विषय में शोथ समझना चाहिए।

ज्वर में सिरा वेध–

शीतोष्णस्निग्धरूक्षाद्यैऽर्ज्वरो यस्य न शाम्यति।।
शाखानुसारी तस्याशु मुञ्चेद्बाहोः क्रमात्सिराम्।

अर्थ : शीत, उष्ण, स्निग्धता तथा रूक्ष आदि उपचारों से जिस व्यक्ति का शाखानुसारी ज्वर शान्त न हो उसके बाहु में (कूर्पर सन्धि में) सिरा वेध कर रक्त निकाले तो ज्वर शीघ्र शान्त होता है।

विश्लेषण : शाखा नुसारी का तात्पर्य यह है कि त्वचा, मांस, मेदा, अस्थि,

मज्जा तथा शुक्र को दोष दूषित कर ज्वर उत्पन्न किया है। अतः रक्त माक्षेण से दोष निकल जाते हैं और शीघ्र ही शान्त होता है।

विषम ज्वर की चिकित्सा–
अयमेव विधिः कार्यो विषमेऽपि यथायथम्।।
ज्वरे विभज्य वातादीन् यश्चानन्तरमुच्यचते।

अर्थ : विषम ज्वर में वातादि दोषों का विभाग कर ऊपर बतायी गयी चिकित्सा करनी चाहिए और जो बाद में आगे बतायी जायगी वह चिकित्सा करनी चाहिए।

विषम ज्वर नाशक पटोलादि तीन क्वाथ–
पटोलकुटामुस्ताप्राणदामधुकैः कृताः।।
त्रिचतुःपञ्चशःक्वाथा विषमज्वरनाशनाः।

अर्थ : 1. परवल की पत्ती, कुटकी, नागरमोथा, 2. परवल की पत्ती, कुटकी नागर मोथा तथा गुडची, 3. परवल की पत्ती, कुटकी, नागर मोथा गुडूची तथा मुलेठी समभाग इन सबों का विधिवत् सिद्ध तीनों क्वाथ विषम ज्वर को नाश करते हैं।

विषम ज्वर में त्रिफलादि विभिन्न क्वाथ–
योजयेत्त्रिफलां पथ्यां गुडूची पिप्पलीं पृथक्।।
तैस्तैविधानैः सगुडैर्भल्लातकमथाऽपि वा।

1. त्रिफला (हर्रे, वहेड़ा, आँवला) 2. अभया (हर्रे) 3. गुडूची तथा 4. पीपर, अलग अलग विधिपूर्वक बनाये क्वाथ में गुड़ मिलाकर अथवा शुद्ध मिलावा का क्वाथ बनाकर तथा गुड़ मिलाकर विषम ज्वर में पीने को दे।

विषम ज्वर में औषध विधान–
लगघनं बृंहणं चाऽपि ज्वरागमनवासरे।।
प्रातःसतैलं लशुनं प्राग्भक्त वा तथा घृतम्।
जीर्ण तद्वद्दधिपयस्तक्रं सर्पिश्च शट्पलम्।।
कल्याणकं पञ्चगव्यं तिक्ताख्यं वृषसाधितम्।
त्रिफलाकोलतर्कारीक्लाथद्ध्ना शृतं घृतम्।।
बिल्वकत्वक्कृतावापं विषमज्वरजित्परम्।

अर्थ : विषम ज्वर जिस दिन आता हो उस दिन कफ–पित्त दोष में लंघन तथा वात में बृंहण करना चाहिए। प्रातःकाल तैल के साथ लहसुन अथवा भोजन के पहले पुराना घृत पान कराये।

इसी प्रकार दधि, दूध, मट्ठा तथा षट् पल घृत, कल्याणक घृत,

पचगव्य घृत, तिलक घृत तथा अड़ूसा से सिद्ध घृत पान कराये। अथवा त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला वनश्झैर जयन्ती तथा लोघ का कल्क मिलाकर, समभाग इन सबों के क्वाथ और दही तथा लोध का कल्क मिलाकर विधिपूर्वक सिद्ध घृत पान कराये। यह विषम ज्वर को नाश करने में उत्तम है।

विषम ज्वर के वेगागमन में विविध कर्त्तव्य विधि–

सुरां तीक्ष्णं च यन्मद्यं शिखितित्तिरिकुक्कुटान्।।
मांस मध्योष्णवीर्यं च सहान्नेन प्रकामतः।
सेवित्वा तदहः स्वप्यादथवा पुनरूल्लिखेत्।।
सर्पिशो महतीं मात्रां पीत्वा तच्छर्दयेत्पुनः।
नीलिनीमजगन्धां च त्रिवृतां कटुरोहिणीम्।।
पिबेज्ज्वरस्यागमने स्नेहस्वेदोपपादितः।

अर्थ : अथवा पुनः घी की बड़ी मात्रा पीकर वमन करे। अथवा ज्वर के आगमन के पहले स्नेहन–स्वेदन करने के बाद नीलनी, अजगन्धा (अनमोदा) निशोथ तथा कुटकी समभाग इन सबों का क्वाथ पान कराये।

विश्लेषण : सिर कण्ठ, ह्रदय तथा सन्धि में संचित कफ आमाशय में आकर ज्वर, उत्पन्न करता है। जब तक कफ आमाशय में नही पहुँच जाता है उसके पहले सो जाना तथा वमन करना इन क्रियाओं से कफ का सर्वथा नाश हो जाता है। इससे पुनः–पुनः ज्वर का वेग नहीं आता है।

विषम ज्वर में अंजन–

मनोह्वा सैधवं कृष्णा तैलेन नयनाज्जनम्।।

अर्थ : अशुद्ध मैनसिल, सेन्धा नमक तथा पीपर समभाग इन सबों का तेल के साथ पीसकर नेत्र में विषम का वेग आने के पहले अंजन करें।

विषम ज्वर में नस्य–

योज्यं हिङ्गुसमा व्याघ्री–वसा नस्यं ससैन्धवम्।।
पुराणसर्पिः सिंहस्य वसा तद्वत्ससैन्धवा।।

अर्थ : हींग तथा सेन्धा नमक को मिलाकर ज्वर का वेग आने के पूर्व नस्य दें। अथवा पुराना घी तथा सेन्धा नमक मिलाकर पूर्वोक्त प्रकार से ज्वर वेग आने से पहले नस्य दें।

विषम ज्वर में अपराजित धूप–

पलडक्शा निम्बपत्रं वचा कुष्ठं हरीतकी।
सर्षपाः सयवाः सर्पिर्धूपो विड्वा बिडालजा।।

पुर–ध्याम–वचा–सर्ज–निम्बाऽर्काऽगरूदारूभिः।
धूपो ज्वरेषु सर्वेषु प्रयोक्तव्योऽपराजितः।।

अर्थ : गुग्गुल, निम्बपत्र, बालवच, कडुवा छूट तथा हरी तकी इन सबों के साथ पीला सरसों, यव तथा घी मिलाकर ज्वर में धूप दे। अथवा गुग्गुलु, सुगन्ध तृण, घोड़ वच, राल, नीम का पत्र, मदार का फूल, अगर तथा देवदारू समभाग इन सबों का अपराजित नामक धूप सभी प्रकार के ज्वरों में प्रयोग करें।
विश्लेषण : ज्वर का वेग आने के एक घण्टा पूर्व इन धूपों का प्रयोग करने पर ज्वर का वेग नहीं आता। अथवा किसी भी ज्वर के वेग अधिक होने पर प्रथम धूप को देने से ज्वर में स्वेद उत्पन्न होकर शीघ्र ही वेग शान्त हो जाता है। यह बार–बार का अनुभव किया हुआ योग है।

सभी विषम ज्वर में उन्माद नाशक नस्यादि का प्रयोग–
धूपनस्याज्जनत्रासा ये चोक्ताश्चितवैकृते।
देवाश्रयं च भषैज्यं ज्वरान्सर्वान्व्यपोहति।।
विशेषाद्विषमान्प्रायस्ते ह्यागन्त्वनुबन्धजाः।
यथास्वं च सिरां विध्येदशान्तौ विषमज्वरे।।

अर्थ : उन्माद प्रकरण में कहे गये धूप, नस्य, अज्जन, भय दिखाना आदि दैवी चिकित्सा तथा औषधि सभी विषम ज्वरों को दूर करती है। विशेष कर विषम ज्वर आगन्तुक (भूत, प्रेत, पिशाच आदि) सम्बन्ध वाले होते हैं। विषम ज्वर के शान्त न होने पर जिस दोष की प्रधानता हो इसके अनुसार सिरा वेध करें।

विभिन्न कारणजन्य ज्वर की चिकित्सा–
केवलानिलबीसर्प–विस्फोटाभिहतज्वरे।
सर्पिःपानं हिमालेप–सेकमांसरसाशनम्।।
कुर्याद्यथास्वमुक्तं च रक्तमोक्षादिसाधनम्।
अर्थ : केवल वात ज्वर, विसर्पजन्य ज्वर, विस्फोट (शीतल) ज्वर, तथा अभिघात ज्वर में घृत पान, शीतल लेप तथा अभिषेक, के साथ भोजन करे तथा उक्त सभी रोग में जो रक्त मोक्षण आदि साधन बताये गये हैं उनका प्रयोग करे।

ग्रह–आदि से उत्पन्न ज्वर से चिकित्साक्रम–
ग्रहोत्थे भूतविद्योक्तं बलिमन्त्रादिसाधनम्।।
औषधीगन्धजे पित्तशमनं विषजिद्विषे।
इष्टैरर्थैनोज्ञैश्च यथादोषशमेन च।।
हिताहितविवेकैश्च ज्वरं क्रोधादिजं जयेत्।

क्रोधजो याति कामेन शान्तिं क्रोधेन कामजः।।
भयशोकोद्भवौ ताभ्यां भीशोकाभ्यां तथेतरौ।
शापाथर्वणमन्त्रोत्थे विधिर्दैवव्यपाश्रयः।।
ते ज्वराः केवलाः पूर्व व्याप्यन्तेऽनन्तरं मलैः।
तस्माद्दोषानुसारेण तेष्वाहारादि कल्पयेत्।।
न हि ज्वरोऽनुबध्नाति मारूताद्यैर्विना कृतः।

अर्थ : औषध गन्ध से उत्पन्न ज्वर में पित्तनाशक औषधों का प्रयोग करे। विषजन्य ज्वर में विषनाशक औषधों का प्रयोग करे। क्रोध, शोथ, काम, भय आदि से उत्पन्न ज्वर में मनोनुकूल अभिलषित पदार्थों से, दोषों के अनुसार दोष शामक उपायों से तथा हित–अहित आहार विहार आदि के विचार से ज्वर की चिकित्सा करे। क्रोधजन्य ज्वर कामोत्पादक विषयों से तथा काम जन्य ज्वर क्रोधोत्पादक विषयों से शान्त होता है। भय तथा शोक से उत्पन्न ज्वर काम तथा क्रोधजन्य ज्वर भय तथा शोक से शान्त होता है। शापजन्य ज्वर तथा अथर्ववेद में बताये हुए मन्त्रों के प्रभाव से उत्पन्न ज्वर में दैवव्यापाश्रय (मन्त्र जपादि) विधि को करे। ये सभी ज्वर पहले शरीर में उत्पन्न होते हैं और बाद में मलों (दोषों–वात, पित्त, कफ) से सम्बन्धित होते हैं। अतः इन ज्वरों में वातादि दोषों के अनुसार आहार–विहार आदि का प्रयोग करे। वात–पित्त कफ के बिना ज्वर नहीं होता है।

समृतिकालजन्य ज्वर की चिकित्सा–

ज्वरकालं स्मृतिं चास्य हारिभिर्विषयैर्हरेत्।।
करूणार्द्रं मनः शुद्धं सर्वज्वरविनाशनम्।

अर्थ : ज्वर काल का स्मरण होने से जो ज्वर उत्पन्न होता है उसे मन को हरण करने वाले विषयों से समृति को नष्ट कर ज्वर को दूर करे। करूणा से आर्द्र ह्रदय तथा शुद्ध मन होने से सभी ज्वर दूर होते हैं।

ज्वरमुक्ति के बाद निषिद्ध कर्त्तव्य–

त्यजेदाबललाभाच्च व्यायामस्नानमैथुनम्।।
गुर्वसात्म्यविदाह्यन्नं यच्चान्यज्ज्वरकारणम्।

अर्थ : ज्वरमुक्ति के बाद भी जब तक शरीर में पूर्ण बल न हो जाय तब तक व्यायाम, स्नान, मैथुन, गुरू, असात्म्य तथा विदाही आहार और अन्य जो ज्वर के कारण है उनको त्याग दे।

ज्वरमुक्ति के बाद की कर्त्तव्य विधि–

न विज्वरोऽपि सहसा सर्वान्नीनो भवेत्तथा।

निवृवत्तोऽपि ज्वरः शीघ्रं व्यापादयति दुर्बलम्।।

अर्थ : ज्वर के छूट जाने के बाद भी सहसा सभी प्रकार के गुरू, विदाही आदि अन्नों का सेवन न करे। क्योंकि ज्वर छूट जाने पर भी दुर्बल व्यक्तियों को मार डालता है।

ज्वर की भयंकरता–

सद्यः प्राणहरो यस्मात्तस्मात्तस्य विशेषतः।
तस्यां तस्यामवस्थायां तत्तत्कुर्याद्भिषग्जितम्।।

अर्थ : ज्वर शीघ्र ही प्राण को हरने वाला है। इसलिए ज्वर की विभिन्न अवस्थाओं में जो जो चिकित्सा बतायी गयी है उनको उन अवस्थाओं में प्रयोग करें।

ज्वर की दैवव्यपाश्रयचिकित्सा–

औषधयो मणयश्च सुमन्त्रा।
साधुगुरूद्विजदैवतपूजाः।।
प्रीतिकरा मनसो विषयाश्च।
घ्नन्त्यपि विष्णुकृतं ज्वरमुग्रम्।।
इति चिकित्सास्थाने प्रथमोऽयायः।

अर्थ : औषधियाँ (ज्वर नाशक औषधि), मणियाँ, ज्वर नाशक मन्त्रों का धारण साधु, गुरू, ब्राह्मण तथा देवताओं को पूजा तथा मन को प्रसन्न करने वाले पदार्थ और विष्णु सहस्र नाम का पाठ भयंकर ज्वर को दूर करते हैं।

विश्लेषण : बताये गये नियमों का पालन यदि ज्वर छूटने के बाद न किया जाय तो ज्वर पुनः आ जाता है उसे पुनरावर्तक ज्वर कहते हैं। यह ज्वर लगातार कुछ दिन बना रहता है। अल्पदोष होने पर नियमों का पालन न करनेसे यह होता है और अल्पदोष होने पर अनुचित आहार विहार के सेवनसे विषम ज्वर भी होते हैं। किन्तु विषम ज्वर के वेग छूटते तथा आते रहते हैं। पुनरावर्तक ज्वर लगातार बना रहता है। यह विषम ज्वर से इसका भेद है। विषम ज्वर छूट जाने पर यदि नियमों का पालन न किया जाय तो पुनः हो जाता है किन्तु वह अपने समय जेसे अन्य द्युस्क तृतीयक, चातुर्थक आदि के रूप में पुनः होता है।

□□□□□

द्वितीय अध्याय

अथातो रक्तपित्तचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः।।

अर्थ : ज्वर चिकित्सा व्याख्यान के बाद रक्त–पित्त चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयदि महर्षियों ने कहा था।

रक्त–पित्त का साध्यासाध्य–

ऊर्ध्वगं बलिनोऽवेगमेकदोषानुगं नवम्।
रक्तपित्तां सुखे काले साधयेन्निरूपद्रवम्।।
अधोगं यापयेद्रवतं यच्च दोषद्वयानुगम्।
शान्तं शान्तं पुनः कुप्यन्मार्गान्मार्गान्तरं च यत्।।
अतिप्रवृत्तं मन्दाग्नेस्त्रिदोषं द्विपथं त्यजेत्।

अर्थ : बलवान व्यक्तियों के वेग रहित, एक दोष से उत्पन्न, नवीन तथा उपद्रवरहित ऊर्ध्वग रक्तपित्त शीतकाल में साध्य होता है। अधोग तथा दो दोषों से उत्पन्न रक्त पित्त याप्य होता है और बार–बार शान्त होकर पुनः कुपित हो जाय तथा एक मार्ग से निकल कर दूसरे मार्ग से भी निकले (अर्थात् मुख से निकल कर नाक, कान आदि से निकले) वह याप्य होता है। मन्दाग्नि वाले व्यक्ति को तीनों दोषों के प्रकोप से ऊर्ध्वग तथा अधोग मार्ग से अधिक रक्त निकलता हो वह रक्तपित्त असाध्य होता है।

रक्तपित की विशेष चिकित्सा–

ज्ञात्वा निदानमयनं मलावनुमलौ बलम्।
देशकालाद्यवस्थां च रक्तपित्ते प्रयोजयेत्।।
लगंन बृंहणं चादौ शोधनं शमनं तथा।
सन्तर्पणोत्थं बलिनो बहुदोषस्य साधयेत्।।
उर्ध्वभागं विरेकेण वमनने त्वधोगतम्।
शमनैबृंहणैश्चन्यल्लघंयबृं ह्यानवेक्ष्य च।।

अर्थ : संतपंण से उत्पन्न बलवान तथा बहुत दोष वाले व्यक्ति के ऊर्ध्वग रक्त–पित्त को विरेचन से साध्य करे और आधो भाग से निकलने वाले रक्त–पित्त को वमन से साध्य करे। लंघन करने योग्य तथा वृहण करने योग्य देखकर दुर्बल रोगी के ऊध्वंग तथा अधोग रक्त–पित्त को शमन तथा वृंहण के द्वारा चिकित्सा करे।

रक्त पित्त में शमन तथा बृंहण चिकित्सा–

ऊर्ध्व प्रवृत्ते शमनौ रसौ तिक्तकषायकौ।
उपवासश्च निःशुण्ठीषडगेदकपायिनः।।
अधोगे रक्तपित्ते तु बृंहणो मधुरो रसः।
ऊर्ध्वगे तर्पणं योज्यं प्राक्च पेया त्वधोगते।।

अर्थ : दुबर्ल व्यक्तियों के ऊर्ध्वगामी रक्त–पित्त में तिक्त तथा कषाय रस शमन करते हैं और उपवास तथा सोंठ निकाल कर षडग (नागर मोथा, खस, पित्त पापड़ा, रक्त चन्दन तथा सुगन्ध वाला) का पानी पिलाना रक्त पित्त को शमन करते हैं। दुर्बल व्यक्तियों के अधोग रक्त–पित्त में मधुर रस बृंहण करता है। उर्ध्वग रक्तपित्त में पहले तर्पण करना चाहिए और अधोग रक्त पित्त में पहले पेया देनी चाहिए।

रक्तपित्त में रक्तवेग का धारण तथा अधारण–

अश्नतो बलिनोऽशुद्ध न धार्य तद्धि रोगकृत्।
धारयेदन्यथा शीघ्रमग्निवच्छीघ्रकारि तत्।।

अर्थ : भोजन करते हुए बलवान रोगी के अशुद्ध रक्त को पहले नहीं रोकना चाहिए। क्योंकि वह रोग को बढ़ाता है। उसके अतिरिक्त दुर्बल तथा भोजन करने वाले व्यक्तियों के रक्त को तत्काल रोकना चाहिए। क्योंकि वह अग्नि के समान शीघ्र ही मारक होता है।

विश्लेषण : बलवान रक्तपित्त के रोगियों का रक्त अधोमार्ग या ऊर्ध्वमार्ग से निकलता हो तो तत्काल उसे नहीं रोकना चाहिए। किन्तु पित्त नाशक और पाचन औषध खिलाकर धीरे–धीरे रक्त को बन्द करना चाहिए क्योंकि रूका हुआ अशुद्ध रक्त अन्य रोगों को उत्पन्न करता है। उसका पाचन हो जाय तब किसी उपद्रव को न करते हुए शान्त हो जाता है। दुर्बल व्यक्तियोंके तत्काल रक्त को बन्द करना चाहिए। पाचन करने में विलम्ब होता है और रक्त अधिक निकल जाने से रोगी की मृत्यु होती है।

रक्त पित्त में विरेचन योग–

त्रिवृच्छयामाकषा येणकल्केन च सशर्करम्।
साधयेद्विधिवल्लेहं लिह्यात्पाणितलं ततः।।
त्रिवृता त्रिफला श्यामा पिप्पली शर्करा मधु।
मोदकः सन्निपातोर्ध्वरक्तशोफज्वरापहः।।
त्रिवृत्समसिता तद्वत् पिप्पलीपादसंयुता।

अर्थ : उर्ध्वग रक्त पित्त में काले निशोथ के क्वाथ तथा कल्क में शक्कर मिलाकर अवलेह सिद्ध करे और एक कर्ष (10 ग्राम) की मात्रा में चठाये। अथवा निशोथ, त्रिफला, (हर्रे, बहेड़ा, आँवला) काला निशोथ तथा पीपर के चूर्ण का शक्कर तथा मधु मिला मोदक बनाये। यह सन्निपातज ऊर्ध्वग

रक्त–पित्त, शोथ तथा ज्वर को दूर करता है। अथवा निशोथ एक भाग मिश्री एक भाग तथा पीपर का चूर्ण चौथाई भाग मिलाकर मोदक बना ले और 10 ग्राम की मात्रा में प्रयोग करे।

रक्तपित्त में वमन योग–

वमनं फलसंयुक्त तर्पणंससितामधु।।
ससितं वा जलं क्षौद्रयुक्तं वा मधुकोदकम्।
क्षीरं वा रसमिक्षोर्वा शुद्धस्यानन्तरो विधिः।।
यथास्वं मन्थपेयादिः प्रयोज्यो रक्षता बलम्।

अर्थ : मदन–फल के तर्पण में (सत्तु के घोल में) शक्कर तथा मधु मिलाकर या शक्कर, जल तथा मधु मिलाकर या मुलेठी का क्वाथ मिलाकर या दूध मिलाकर अथवा गन्ने का रस मिलाकर पिलाये और वमन कराये। वमन विरेचन के द्वारा शुद्ध होने पर विधिपूर्वक बल की रक्षा करते हुए प्रकृति के अनुकूल मन्थ पेया आदि का प्रयोग करे।

रक्तपित्त में मन्थ का प्रयोग–

मन्थो ज्वरोक्तो द्राक्षादिः पित्तघ्नैर्वा फलैः कृतः।
मधुखर्जूरमृद्वीका–परूषकसिताम्भसा।
मन्थो वा पच्चसारेण सघृतैलजिसक्तुभिः।।
दाडिमामलकाम्लो वा मन्दाग्न्यम्लाभिलाषिणाम्।

अर्थ : रक्त–पित्त में ज्वर प्रकरण में कहे हुए द्राक्षादि मन्थ, अथवा पित्तनाशक द्रव्यों से निर्मित फल (द्राक्षा, फालसा, आँवला आदि) से निर्मित मन्थ अथवा मुलेठी, खजूर मुनक्का, फालसा, मिश्री तथा जल से निर्मित मन्थ या पच्चसार (वठ, पीपर पकड़ी, गूलर तथा पारिस पीपर) के पकाये हुए जल से निर्मित मन्थ अथवा घृत तथा लावा की की सत्तु से निर्मित मन्थ, अथवा खट्टे अनार तथा आँवला के रस से निर्मित मन्थ मन्दाग्नि व्यक्ति और अम्ल पदार्थ चाहने वाले व्यक्ति के लिए प्रयोग करे।

रक्तपित्त में पेया योग–

कमलोत्पकिज्जल्कपृश्पिर्णीप्रियडगुकाः।।
उशीरं शाबरं रोध्रं शृगबेर कुचन्दनम्।
ह्रीबेरं धातकीपुष्पं बिल्वमध्यं दुरालभा।।
अर्धार्धैवहिताः पेया वक्ष्यन्ते पाद्रयौगिकाः।
भूनिम्बसेव्यजलदा मसूराः पृश्निपर्ण्यपि।।

विदारिगन्धा मुद्गाश्व बला सर्पिर्हरेणुका।

अर्थ : अधोग रक्त–पित्त में (1) लाल कमल तथा नील कमल का केशर, पिठवन तथा फूल प्रियंगु, (2) खस, सावर लोध, सोंठ तथा लाल चन्दन, (3) हाड बेर, धाय का फूल, बेलका गुदा तथा दुरालभा (यवासा) इन आधे श्लोक से कहे गये द्रव्यों की जड़ से निर्मित पेया का प्रयोग करे। इसके बाद श्लोक के एक–एक पाद निर्मित पेया को कहेंगे। (1) चिरा–यता, खस तथा नागर मोथा, (2) मसूर तथा पिठवन, (3) विदारीकन्ध तथा मूँग, (4) बरियार की जड़ तथा हरेनु इन द्रव्यों के जल से निर्मित पेया रक्तपित्त में प्रयोग करे।

विश्लेषण : ऊपर बताये गये सात योगों से सात पेयां का विघात किया गया है। इन योगों के द्रव्य निर्मित 10 ग्राम को लेकर तथा कूटकर 640 ग्राम जल में पकायें। जब जल 320 ग्राम रह जाये तब उसमें पेया का निर्माण करें।

रक्तपित्त में आहार द्रव्य–

शूकशिम्बीभवं धान्यं रक्तं शाकं च शस्यते।।
अन्नस्वरूपविज्ञाने यदुक्तं लघु शीतलम्।

अर्थ : अन्न स्वरस विज्ञानीय अध्याय में जो शुक धान्य, शिम्बी धान्य तथा शाक लघु एवं शीत वीर्य वाले कहे गये हैं वे रक्तपित्त में प्रशस्त हैं।

रक्तपित्त में पेय जल–

पूर्वोक्तमम्बु पानीयं पच्चमूलेन वा शृतम्।।
लघुना शृतशीतं वा मध्वम्भो वा फलाम्बु वा।

अर्थ : पूर्वोक्त सोठरहित षडग पानी अथवा लघुपच्चमूल से पकाया हुआ शीतल अथ्वा गरम कर ठण्डा किया हुआ या मधु मिलाकर जल अथवा मीठे फल रस रक्तपित्त में पिलायें।

रक्तपित्त में वर्जनीय–

यत्किंचिद्रक्तपित्तस्य निदानं तच्च वर्जयेत्।

जो आहार–विहार रक्तपित्त को उत्पन्न करने वाले,
उनका सेवन न करें।

रक्तपित्त शामक द्रव्य–

वासारसेन फलिनी मृद्रोध्राज्जनमाक्षिकम्।।
पित्तासृक् शमयेत्पीतं निर्यासो वाऽटरूषकात्।

अर्थ : अडूसा के रस के साथ फूल प्रियंगु या भूनी मिट्टी या पाठानी, शावर लोध या सौवीराज्जन, पिष्टी या स्वर्णमाक्षिक भसम पीने से रक्तपित्त को शान्त

करता है। अथवा अडूसा का क्वाथ पीने से रक्त–पित्त को शान्त करता है।

अडूसा की विशेषता–

शर्करामधुसंयुक्तः केवलो वा शृतोऽपि वा।।
वृषः सद्यो जयत्यस्रं स ह्यस्य परमौषधम्।

अर्थ : केवल अडूसा का रस या शक्कर तथा मधु मिश्रित अडूसा का रस अथवा अडूसा का क्वाथ शीघ्र ही रक्त–पित्त को शान्त करता है। यह अडूसा रक्त–पित्त का उत्तम औषध है।

रक्त पित्त शासक अम्य तीन योग–

पडोलमालतीनिम्ब–चन्दनद्वयपद्मकम्।।
रोध्रो वृषस्तण्डुलीयः कृष्णामृन्दयन्तिका।
शतावरी गोपकन्या काकोल्यौ मधुयष्टिका।।

(1) परवल की पत्ती, मालती की पत्ती, नीम की पत्ती, रक्त चन्दन, सफेद चन्दन तथा पद्माख, (2) शाबर लोध, अडूसा, चौराई का शाक, काली मिट्टी तथा मेंहदी (3) या शतावरी, सारिवा, काकोली, क्षीर काकोली तथा मुलैठी समभाग इन तीन योगों को तीन क्वाथ मधु तथा शक्कर मिलाकर पीने से रक्त–पित्त को दूर करते हैं।

रक्त–पित्त शामक दो अन्य योग–

रक्तपित्तहराः क्वाथस्त्रयः समधुशर्कराः।
पलाशवल्कक्वाथो वा सुशीतः शर्करान्वितः।।
पिबेद्वा मधुसर्पिर्भ्यां गवाश्वशकृतो रसम्।

अर्थ : पलास के छाल का क्वाथ शीतल कर उसमें शक्कर मिलाकर रक्त–पित्त का रोगी पान करे। अथवा गाय का गोबर का रस मधु तथा शक्कर मिलाकर पान करें।

रक्त–पित्त शामक चन्दनादिकशाय–

चन्दनोशीरजलदलाजमुद्गकणायवैः।
बलाजले पर्युषितैः कषायो रक्तपित्तहा।

अर्थ : बरियार के शीढ कषाय में चन्दन, खस, नागरमोथा, लावा, मूँग तथा यव का चूर्ण रात को भिगोंकर तथा प्रातः छान कर पीये और प्रातः भिगोंकर और शाम को छानकर पीये। यह रक्त–पित्त को दूर करता है।

अधिक रक्तस्राव में चन्दनादि प्रसाद–

प्रसादश्चन्दनाम्भोजसेव्य मृद्भृष्टलोष्टजः।
सुशीतः ससिताक्षौद्रः शोणितातिप्रवृत्तिजित्।।

अर्थ : चन्दन, कमल, खस तथा आग में पकाया मिट्टी का ढेला समभाग इन सबों का चूर्ण बनाकर रात को जल में भिगोंकर तथा ऊपर का जल निथार कर प्रातः मधु एवं मिश्री मिलाकर पान करे तथा प्रातः भिगोंकर शाम को छानकर मधु तथा मिश्री मिलाकर पान करे। यह रक्त–पित्त में अधिक रक्त स्राव को रोकता है।

रक्त–पित्त में इक्षु गण्डिका का प्रयोग–

आपोयि वा नवे कुम्भे प्लावयेदिक्षुगण्डिकाः।
स्थितं तद्गुप्तमाकाशे रात्रि प्रातः श्रृतं जलम्।।
मधुमृद्वीकजाम्भोजकृतोत्तंसं च तद्गुणम्।

अर्थ : नये मिट्टी के घड़े में गन्ने की गड़ेरियों को कुचलकर तथा पानी भर कर और घड़े का मुख बन्दकर खुले आकाश में रातभर रहने दे और प्रातःकाल छानकर तथा मधु मुनक्का का रस एवं कमल के पत्तों का रस मिलाकर पान करें। यह रक्त–पित्त में अधिक रक्त स्राव को रोकता है।

रक्त–पित्त में पित्त ज्वरोक्त कषाय का निर्देश–

ये च पित्तज्वरे चोक्ताः कषायास्तांश्र योजयेत्।।

अर्थ : पित्त ज्वर में जिन–जिन कषायों के पान करने का निर्देश किया गया हो इन इन कषायों को रक्त–पित्त में प्रयोग करें।

रक्त–पित्त में विविध दूध का प्रयोग–

कशायौंविविधैरेभिर्दीप्तेऽग्नौ विजिते कफ।
रक्तपित्तं न चेच्छाम्येत्तत्र वातोल्बणे पयः।।
युज्ज्याच्छागं श्रृतं तद्वद्गव्यं पच्चगुणेऽम्भसि।
पच्चमूलेन लघुना श्रृतं वा ससितामधु।।
जीवकर्षभकद्राक्षाबलागोक्षुरनागरैः।
पृथक्पृथक् श्रृतं क्षीरं सघृतं सितयाऽथवा।

अर्थ : ऊपर बताये गये अनेक प्रकार के कषायों के सेवन से अग्नि के प्रदीप्त होने तथा कफ शान्त होने पर रक्त–ापित्त शान्त न हो और वात की प्रधानता हो तो, निम्नलिखित दूध का प्रयोग करें। बकरी का पकाया दूध, लघुपच्चमूल में (सरिवन, पिठवन, भटकटैया, वनभंटा तथा गोखरू) के पाँच गुने क्वाथ में पकाया गाय का दूध अथवा उस दूध में मिश्री तथा मधु मिलाकर या जीवका, ऋषभक, मुनक्का, बरियार, गोखरू तथा सौंठ इन सबों में एक–एक से पकाये हुए दूध में घृत तथा मिश्री मिलाकर पीने को दें।

मूत्रमार्गगामी रक्तपित्त में गोक्षुरादि दूध–

गोकण्टकाऽभीरशृतं पर्णिनीभिसतथा पयः।
हन्त्याशु रक्तं सरुजं विशेषान्मूत्रमार्गगम्।।

अर्थ : गोखरू तथा शतावरी के कल्क के साथ विधिपूर्वक पकाया हुआ दूध तथा पर्णीचतुष्टय (शालपर्णी, पृशिनपणी, माषपर्णी, मुद्गपर्णी) के कल्क के साथ विधिपूर्वक पकाया दूध पीड़ायुक्त रक्त–पित्त का शीघ्र ही नष्ट करता है और विशेष कर पीड़ायुक्त मूत्रमार्गगामी रक्तपित्तको शीघ्र ही नष्ट करता है।

गुदमार्गगामी रक्त–पित्त में दूध का प्रयोग–

विण्मार्गगे विशेषेण हितं मोथरसेन तु।
वटप्ररोहः शुगंर्वा शुण्ठयु दीच्योत्पलैरपि।।

अर्थ : गुदमार्गगामी रक्त–पित्त में विशेषकर मोथ रस के कल्क के साथ विधिवत सिद्ध दूध या वट के वरोही या वट की टूसा के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध दूध अथवा सौंठ, सुगन्धवाला तथा कमल केशर के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध दूध का प्रयोग करें।

रक्त पित्त में दूध तथा घृत का प्रयोग–

रक्तातिसारदुर्नाम चिकित्सां चाऽत्र योजयेत्।
पीत्वा कषायान् पयसा भुञ्जीत पयसैवच।।
कषाययोगैरेभिर्वा विपक्वं पाययेद्घृतम्।

अर्थ : रक्त–पित्त में गुदामार्ग से रक्त निकलने पर रक्तातिसार तथा रक्तार्श में बतायी गयी चिकित्सा का प्रयोग करें। रक्तातिसार तथा रक्तार्श में बताये गये कषायों को दूध के साथ पीकर दूध ही के साथ भोजन करें। अथवा उन्हीं कषायों के योग से विधिपूर्वक सिद्ध घृत पाक कराये।

रक्त–पित्त में वासा घृत–

समूलमस्तकं क्षण्णं वृषमष्टगुणेऽम्भसि।।
पक्त्वाऽष्टांशावशेषेण घृतं तेन विपाचयेत्।
पुष्पगर्भं च तच्छीतं सक्षौद्रं पित्ताोणितम्।।
पित्तगुल्मज्वरश्वासकासहृद्रोगकामलाः।
तिमिरभ्रमवीसर्पस्वरसादांश्च नाशयेत्।।

अर्थ : अडूसे के पच्चांग को लेकर तथा यव कूट कर आठगुने जल में पकावे और अष्टांशावशेष इस क्वाथ तथा अडूसा के फूल के कल्क के साथ विधिपूर्वक घृत पकावे। शीतल हो जाने पर मधु मिलाकर पान कराये। यह

घृत रक्त–पित्त, पित्तजगुल्म, ज्वर, श्वास, कास, हृदरोग, कामला, तिमिर रोगभ्रम (चक्कर), विसर्प तथा स्वरनाश को दूर करता है।

रक्त–पित्त में पलास तथा त्रायमाण घृत–

पालाशवृन्तस्वरसे तद्गर्भं च घृतं पचेत्।
सक्षौद्रं तच्च रक्तघ्नं तथैव त्रायमाणया।।

अर्थ : पलास वृन्त के स्वरस में पलाश वृन्त के कल्क के साथ विधिपूर्वक घृत पकावे और शहद मिलाकर पान कराये। यह रक्तपित्त को नाश करता है। इसी प्रकार त्रायमाणा के क्वाथ तथा कल्क के साथ विधिूपर्वक घृत पकावे और मधु के साथ पान करें।

मुखमार्गगामी रक्त–पित्त में विविधक्षार का प्रयोग–

रक्ते सपिच्छे सकफे ग्रथिते कण्ठमार्गगे।
लिह्यान्माक्षिकसर्पिर्भ्यां क्षारमुत्पलनालजम्।।
पृथक्पृथक् तथाम्भोजरेणुश्यामामधूकजम्।

अर्थ : रक्त–पित्त में मुखमार्ग से पिच्छा, कफ तथा गाँठदार रक्त के निकलने पर पलासक्षार तथा कमलनाल का क्षार तथा अलग–अलग कमल, रेणुका, निशोथ और महुआ का क्षार मधु तथा घृत के साथ चटायें।

गुदमार्गगामी रक्त–पित्त में विविध प्रयोग–

घ्राणगे रूधिरे शृद्धे नावनं चानुषेचयेत्।
कषाययोगान् पूर्वोक्तान् क्षीरेक्ष्वादिरसाऽऽप्लुतान्।
क्षीरदीन्ससितांस्तोयं केवलं वा जलं हितम्।
रसो दाडिमपुष्पाणामाम्रोत्थः शाद्वलस्य वा।।
कल्पयेच्छीतवर्गं च प्रदेहाम्यज्जनादिषु।

अर्थ : नासिका से शुद्ध रक्त के निकलने पर पूर्वोक्त कषायों में दूध, गन्ने का रस, आदि मिलाकर नासिका में छोड़ें। अथवा दूध, मिश्री तथा जल मिलाकर नाक में छोड़ें। या केवल ठंढा जल छोड़ें। अथवा अनार के फूल का रस, आम की मज्जरी का रस या दूब का रस छोड़ें और प्रदेह (लेप) अभ्यज्जन आदि में शीत वर्ग के द्रव्यों का प्रयोग करें।

रक्त–पित्त में पित्तज्वर तथा क्षतक्षीण चिकित्सा का निर्देश–

यच्च पित्तज्वरे प्रोक्तं बहिरन्तश्र्च भेषजम्।
रक्तपित्ते हिंत तच्च क्षतक्षीणे हितं च यत्।।

अर्थ : जो पित्तज्वर तथा क्षत क्षीणअन्तः प्रयोग तथा बाह्य प्रयोग औषधों को बताया गया है वह औषध प्रयोग रक्तपित्त में हितकर है।

□□□□□

तृतीय अध्याय

अथाऽः कासचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्शयः।।

अर्थ : रक्तपित्त चिकित्सा व्याख्यान के बाद कासचिकित्सा (खांसी की चिकित्सा) का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

कास का चिकित्सा क्रम–
केवलानिलजं कासं स्नेहैरादावुपाचरेत्।
वातघ्नसिद्धैः स्निग्धैश्च पेययूषरसादिभिः।।
लेहैर्धूमैस्तथाभ्यगं स्वेदसेकावगाहनैः।
बस्तिभिर्बद्धविड्वातं सपित्तं त्वौर्ध्वभक्तिकैः।।
घृतैः क्षीरैश्च सकफं जयेत्स्नेहविरेचनैः।

अर्थ : केवल वातज कास (खांसी) में वातघ्न औषधों से सिद्ध स्नेह (घृत–तैलादि) से पहले चिकित्सा केरे। स्नेहन के बाद वातघ्न औषधों से सिद्ध पेययूष तथा रस आदि से चिकित्सा करे। इसी प्रकार वातघ्न औषधों से विधिपूर्वक सिद्ध अवलेह अभ्यगं, स्वेद, सेक तथा अवगाहन आदि चिकित्सा करे। मल तथा वात विबन्ध में बस्ति के द्वारा चिकित्सा करे। पित्त के साथ यदि वातज कास हो तो भोजन के बाद घृत तथा दूध पिलाये और कफयुक्त वातज कास की स्नेह विरेचन (एरण्डादि तैल) के द्वारा चिकित्सा करे।

वातज कास नाशक गुडूच्यादि घृत–
गुडूचीकण्टकारीभ्यां पृथक्त्रिशत्पलाद्रसे।।
प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातकासनुद्बाह्निदीपनः।

अर्थ : गुडूची का रस 30 पल (1 कि. 500 ग्राम) तथा कण्टकारी का रस 30 पल (1 कि. 500 ग्राम) में घृत एक प्रस्थ (750 ग्राम) विधिपूर्वक सिद्ध करे। यह घृत सेवन करने से वातज कास को दूर करता है तथा अग्नि को प्रदीप्त करता है।

वातज कास में दशमूल घृत–
क्षाररास्नावचाहिङ्गुपाठायष्टयाह्वधान्यकैः।।
द्विशाणैः सर्पिषः प्रस्थः पच्चकोलयुतैः पचेत्।
दशमूलस्य निर्यूहे पीतो मण्डानुपायिना।।
सकासश्वासहृत्पार्श्वग्रहणीरोगगुल्मनुत्।

अर्थ : जब क्षार, रास्ना, वच, हींग, पाठा, मुलेठी, धनियां तथा पच्चकोल (पीपर, पिपरामूल, चव्य, चित्रक तथा सोंठ) दो–दो शाण (6–6 ग्राम) के कल्क के साथ घृत के चौगुना दशमूल के क्वाथ में एक प्रस्थ (750 ग्राम) घृत विधिपूर्वक सिद्ध करे और 10 ग्राम की मात्रा में पान करे। बाद मे मण्ड पीवे। यह कास, श्वास, हृदरोग, पार्श्वशूल, ग्रहणी रोग तथा गुल्म रोग को दूर करता है।

कास रोग में रास्नादि घृत–

द्रोणेऽपां साधयेद्द्राक्षादशमूलशतावरीः।।
पलोन्मिता द्विकुडवं कुलत्थं बदरं यवम्।
तुलार्धं चाजमांसस्य तेन साध्यं घृताढकम्।।
समक्षीरं पलांशैश्र्व तीवनीयैः समीक्ष्य तत्।
प्रयुक्तं वातरोगेषु पाननावन–बस्तिभिः।।
पच्चकासान् शिरःकम्पं योनिवङ्क्षणवेदनाम्।
सर्वांगकागरोगांश्र्व सप्लीहोर्ध्वानिलान् जयेत्।।

अर्थ : रास्ना दशमूल (वेल का गूदा, अरणी, गम्भारी, सोथपाठा, पाढल, सरिवन, पिठवन, भटकटैया, वनभंटा, गोखरू) तथा शतावरी एक एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम), कुरथी, वैर तथा यव दो–दो कुडव (प्रत्येक 500 ग्राम) इन द्रव्यों को लेकर जल एक द्रोण (12 सेर त्र 12 किलो ग्राम) में क्वाथ करे। चौथाई शेष रहने पर छान ले, दूध एक आढक (3 किलो ग्राम) जीवनीयगण (जीवन्ती, काकोली, क्षीर काकोली, मेदा, महामेदा, मृदुपर्णी, माषपर्णी, जीवक, ऋषभक, मुलेठी) के द्रव्य एक–एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम) का कल्क बनाकर पूर्वोक्त क्वाथ, दूध जीवनीयगण के द्रव्यों का कल्क मिला कर घी एक आढ़क (3 किलो) घृत निर्माण विधि के अनुसार घृत सिद्ध करे। इसको वात रोगों में पान, मावन तथा बस्ति कर्म के लिए प्रयोग करे। यह पाँच प्रकार के कास, शिराकम्प, योनि तथा वंक्षण प्रदेश की वेदना, सर्वांग वात, एकागवात, प्लीहा रोग तथा ऊर्ध्व वात (उद्‌गार) को दूर करता है।

कास में अशोकादि घृत तथा चूर्ण–

बिदार्यादिगण–क्वाथ–कल्कसिद्धं च कासजित्।
अशोकबीजक्षवक–जन्तुघ्नाज्जनपद्मकैः।।
सबिडैश्र्व घृतं सिद्धं तच्चुर्णं वा घृतप्लुतम्।
लिह्यात्पयश्चानुपिबेदाजं कासाभिपीडितः।।

अर्थ : कास रोग से पीडित व्यक्ति अशोक का बीज, क्षवक (नक छिकनी), वाय बिंडग, रसाज्जन, पद्मकाठ तथा विडनमक समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क (घृत से चौगुना क्वाथ तथ्ज्ञा चौथाई कल्क के साथ विधिपूर्वक

घृत सिद्ध करे। इस घृत को या पूर्वोक्त द्रव्यों के चूर्ण को घृत में मिलाकर चाहें और ऊपर से बकरी का दूध पीवे)।

वात–कफज कास में विडगादि चूर्ण–

विडगंनागरं रास्ना पिप्ली हिंगगुसैन्धवम्।
भार्ङ्गी क्षारश्च तच्चूर्ण पिबेद्वा घृतमात्रया।।
सकफेऽनिलजे कासे श्वासहिध्माहताग्निषु।

अर्थ : वायविडींग, सोंठ, रास्ना, हींग, पीपर सेन्धा नमक, वमनेठी तथा यव क्षार समभाग इन सबों का चूर्ण घृत में मिलाकर चाटें या उत्तममात्रा घी में मिलाकर कफयुक्त वातज कास, श्वास, हिक्का तथा मन्दाग्नि में पान करे।

वातज कास में दुरालभादि चूर्ण–

दुरालभां शृगबेरं शठीं द्राक्षां सितोपलाम्।।
लिह्यात्कर्कटशृडीं च कासे तैलेन वातजे।

अर्थ : जवास, अभ्रक, कचूर, मुनक्का, मिश्री, काकड़ा सिंधी समभाग इन सबों का चूर्ण वातज कास में सरसों के तेल में मिलाकर चाटे।

कास नाशक विभिन्न योग–

दुःस्पर्शां पिप्पलीं मुस्तां भार्गीं कर्कटकीं शठीम्।।
पुराणगुडतैलाभ्यां चूर्णितान्यवलेहयेत्।
तद्वत्सकृष्णां शुण्ठीं च सभार्ङ्गी तद्वदेव च।।

अर्थ : जवासा, पीपर, नागर मोथा, वमनेठी, काकड़ा सिंधी, ताा कचूर समभाग इन सबों का चूर्ण पुराना गुड़ तथा सरसों के तेल में मिलाकर अवलेहवत् चाटें। इसी प्रकार पीपर तथा सोंठ के चूर्ण को पुराना गुड़ तथा सरसों के तेल के साथ चाटें। अथवा वमनेठी के चूर्ण को गुड़ तथा तेल में मिलाकर चाटें।

कास में विविध प्रयोग–

पिबेच्च कृष्णां कोष्णेन सलिलेन ससैन्धवाम्।
मस्तुना ससितां शुण्ठीं दध्ना वा कणरेणुकाम्।।
पिबेद्बदरमज्जो वा मदिरादधिमस्तुभिः।
अथवा पिप्पलीकल्कं घृतभृष्टं ससैन्धवम्।।

अर्थ : कास में पीपर के चूर्ण में सेन्धा नमक मिलाकर पान करे अथवा सोंठ के चूर्ण में चीनी मिलाकर मस्तु (दही) के जल से पान करे या पीपर तथा रेणुका का चूर्ण दही के साथ चाटे। अथवा वनपैर का गूदा दही या दही के पानी के साथ पान करें। अथवा पीपर के कल्क को घी में भून कर तथा

सेन्धा नमक मिलाकर दही या दही के जल के साथ पान करे।

कास रोग में पथ्य–

ग्राम्यानूपौदकैः शालियवगोधूमषष्टिकान्।
रसैर्माषत्मगुप्तानां यूषैर्वा भोजयेद्धितान्।।

अर्थ : कास के रोगी को ग्राम्य, आनूप तथा जडहन धान तथा साठी धान का भात और गेहूँ तथा जब का रोटी खिलाये। अथवा उड़द तथा केवाछ के रस या यूष के साथ हितकर पूर्वोक्त भोजन कराये।

वातज कास में यवान्यादि पेया–

यवानी–पिप्पली–बिल्वमध्य–नागर–चित्रकैः।
रास्नाऽजाजीपृथक्पर्णीपलाशशठिपौष्करैः।।
सिद्धां स्निग्धाम्ललवणों पेयामनिलजे पिबेत।
कटिहृत्पार्श्वकोष्ठार्तिश्वासहिध्माप्रणाशिनीम्।।

अर्थ : अजवायन, पीपर, बेल की गिरि, सोंठ, चित्रक, रास्ना, जीरा, पृश्निपर्णी (पिठवन) पलास बीज, कचूर तथा पुष्करमूल समभाग इन सबों के पकाये जल से पेया सिद्ध करे और उसमें घी, खट्टा अनार तथा सेन्धा नमक मिलाकर कटिशूल, हृदयशूल, पार्श्वशूल, उदरशूल, श्वास तथा हिचकी को नष्ट करने वाली पेया को वातज कास में पान करे।

कास मेंपेया आदि विभिन्न योग–

दशमूलरसे तद्वत् पच्चकोलगुडान्विताम्।
पिबेत्पेयां समतिलां क्षैरेयीं वा ससैन्धवाम्।।
मात्स्यकौक्कुटवाराहैर्मांसैर्वा साज्यसैन्धवाम्।
वास्तुको वायसीशाकं कासघ्नः सुनिषण्णकः।।
कण्टकार्याः फलं पत्रं बालं शुष्कं च मूलकम्।
दधिमसत्वारनालाम्ल फलाम्बुमदिराः पिबेत्।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से दशमूल के पकाये जल से सिद्ध पेया में पच्च्कोल का चूर्ण तथा गुड़ मिलाकर कास रोग में पान करे। अथवा समान भाग तिल से सिद्ध क्षैरेयी (खीर) में सेन्धा नमक मिलाकर पान करे। बथुआ का शाक काली मकोय की पत्ती का शाक तथा सुनिष्षणक (चौपत्तियाँ) का शाक कास नाशक हैं। कण्टकारी का कोमल फल तथा पत्ती, सूखी मूली तथा घी, तेल, दूध, गन्ना का रस, गुड़ से बने पदार्थ, वात कास के लिए भक्ष्य पदार्थ हैं। वात कास में दही, दही का जल, कांज्जी, खट्टे अनार के फल का रस पान करे।

कफ–पित्तज कास में वमन योग–

अथ पित्तकासः।
पित्तकासे तु सकफे वमनं सर्पिषा हितम्।।
तथा मदनकाश्मर्यमधुकक्वथितैर्जलैः।
फलयष्ट्याह्वकल्कैर्वा विदारीक्षुरसाप्लुतैः।।

अर्थ : कफ युक्त पितजकास में घृत योग से वमन हितकर होता है। अथवा मदन फल, गम्भारी फल तथा मुलेठी के क्वाथ से वमन कराना हितकर है। अथवा मदनफल तथा मुलेठी के कल्क के विदारीकन्द तथा गन्ने के रस में मिलाकर वमन कराना हितकर होता है।

पित्तज कास में विरेचन–
पित्तकासे तनुकफे त्रिवृतां मधुरैर्युताम।
युज्ज्याद्विरेकाय युतां घनश्लेष्मणि तिक्तकैः।।

अर्थ : पित्तज कास में कफ के पतला होने पर मधुर पदार्थ (शक्कर) मिलाकर निशोथ चूर्ण विरेचन के लिए प्रयोग करे, और कफ के गाढा होने पर तिल पदार्थ (परवल के क्वाथ) मिलाकर निशोथ का चूर्ण विरेचन के लिए प्रयोग करें।

विरेचन के बाद पथ्य–
ह्वतदोषों हिमं स्वादु स्निग्धं संसर्जनं भजेत्।
घने कफे तु शिशिरं रूक्षं तिक्तोपसंहितम्।।

अर्थ : कास रोग में विरेचन के द्वारा दोषों का संशोधन हो जाने के बाद शीतल, मधुर तथा स्निग्ध संसर्जन (पेया, विलेपी, अकृत–कृत यूष) विधि के अनुसार पथ्य सेवन करें। कास में गाढा कफ होने पर विरेचन द्वारा दोषों के संशोधन ही जाने के बाद, शीतल, रूक्ष तिक्त द्रव्य मिलाकर संसर्जन (पेया आदि) का प्रयोग करें।

पैतिक कास में अवलेह–
लेहः पैते सिताधात्रीक्षौद्रद्राक्षाहिमोत्पलैः।
सकफेसाब्दमरिचः सघृतः सानिले हितः।।

अर्थ : पैत्तिक कास में मिश्री, आँवला, मुनक्का, सफेद–चन्दन तथा नीलकमल की पत्ती समभाग इन सबों को पीस कर तथा शहद में मिलाकर अवलेह तैयार कर लें और प्रयोग करें। कफयुक्त पैतिक कास में पूर्वोक्त द्रव्यों के साथ नागरमोथा तथा मरीच का चूर्ण मिलाकर और वात युक्त पैतिक कास में पूर्वोक्त द्रव्यों के साथ घृत मिलाकर अवलेह का प्रयोग करे।

कास में मृद्विकादि अवलेह–

मृद्वीकार्धशतं त्रिशत्पिप्लीः शर्करा पलम्।
लेहयेन्धुना गोर्वा क्षीरपस्य शकृद्रसम्।।

अर्थ : दाना रहित मुनक्का पचास नग, तीस बड़ी पीपर का चूर्ण तथा शक्कर एक पल (50 ग्रा) मिलाकर (3 ग्राम की मात्रा में) कास में शहद के साथ चाटें। अथवा दूध पीने वाले गाय (बछवा या बछिया) के गोवर का रस शहद के साथ कास में चाटें।

सभी कास में स्वगादि अवलेह–

त्वगेलाव्योषमृद्वीकापिप्पलीमूलपौष्करैः।
लाजमुस्ताशठीरास्नाधात्रीफलबिभीतकैः।।
शर्कराक्षौद्रसर्पिर्भिर्लेहो हृद्रोग–कासहा।

अर्थ : दाल चीनी, इलायची, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) मुनक्का, पिपरामूल, पुष्करमूल, धानका लावा, नागरमोथा, कचूर, रास्ना, आँवला तथा बहेड़ा समभाग इन सबों के चूर्ण का शक्कर, मधु, तथा घृत के साथ अवलेह बनाकर प्रयोग करें। यह हृदयावरोध तथा सभी प्रकार के कास को नष्ट करता है।

पित्तज कास में हितकर अन्न–

मधुरैर्जांगलरसैर्यवश्यामाककोद्रवाः।।
मुद्गादियूशैः शाकैश्च तिक्तकैमत्रिया हिताः।

अर्थ : पित्तज कास में यव, साँवा तथा कोदो का रोटी तथा भात मधुररस प्रधान द्रव्य, मूँग आदि का रस, तथा तिक्त रस प्रधान द्रव्यों के शाक के साथ मात्रा पूर्वक सेवन करने में हितकर होता है।

घन तथा तनु कफ पित्तज कास में अवलेह आदि–

घनश्लेष्मणि लेहाश्च तिक्तका मधुसंयुताः।।
शालयः स्युस्तनुकफे शष्टिकाश्च रसादिभिः।
शर्कराम्भोऽनुपानार्थं द्राक्षेक्षुस्वरसाः पयः।।

अर्थ : गाढ़ा कफ युक्त पित्तज कास में तिक्तरस प्रधान द्रव्यों का मधु–मिश्रित अवलेह हितकर होता है तथा तनु कफ युक्त पित्तज कास में जड़हन धान तथा साठी धान का भात के साथ सेवन करना हितकर होता है। भोजन के बाद शक्कर का शर्बत, मुनक्का तथा गन्ना का रस तथा दूध पीने के लिए प्रयोग करे।

पित्तज कास में काकोल्यादि रसपेया आदि–

काकोलीबृहतीमेदाद्वयैः सवृषनागरैः।
पित्तकासे रसक्षीरपेयायूषान् प्रकल्पयेत्।।

अर्थ : काकोली, क्षीर–काकोली, भटकटैया, वन भंटा, मेदा, महामेदा, अडूसा

तथा सोंठ समभाग इन सबों के पकाये जल से रस, दूध, पेया तथा यूष का निर्माण कर पित्तज कास में प्रयोग करें।

पित्तज कास में द्राक्षादिक्षीर तथा पेया–

द्राक्षां कणां पच्चमूलं तृणाख्यं च पचेज्जले।
तेन क्षीरं शृतं शीतं पिबेत्समधुशर्करम्।।
साधितां तेन पेयां वा सुशीतां मधुनाऽन्विताम्।

अर्थ : पित्तज कास में मुनक्का, पीपर तथा तृण पच्चमूल (कुश, कास, सरपत, डाभ तथा गन्ने की जड़) के पकाये जल के दूध विधिवत् सिद्ध करें और शीतल कर उसमें मधु तथा शक्कर मिलाकर पान करें। अथवा पूर्वोक्त द्रव्यों के पकाये जल से पेया बनाकर तथा शीतल कर उसमें मधु मिलाकर पान करें।

पित्तज कास में शय्यादि रस–

शठीह्रीवेरबृहतीशर्कराविश्वभेषजम्।।
पिष्ट्वा रंस पिबेत्पूतं वस्त्रेण घृतमूर्च्छितम्।

अर्थ : पित्तज कास में कचूर, हाडबेर, वनभंटा तथा सोंठ समभाग इन सबों को जल के साथ पीसकर तथा वस्त्र से छानकर और उसमें शक्कर तथा घृत मिलाकर पान करें।

पित्तज कास में शर्करादि घृत चूर्ण तथा कशाय–

शर्करां जीवकं मुद्गमाषपर्ण्यौ दुरालभाम्।।
कल्कीकृत्य पचेत्सर्पिः क्षीरेणाष्टगुणेन तत्।
पानभोजनलेहेषु प्रयुक्तं पित्तकासजित्।।
लिह्याद्वा चूर्णमेंतेषां कषायमथवा पिबेत्।

अर्थ : पित्तज कास में शक्कर, जीवक, मुद्गपर्णी, माषपर्णी तथा यवासा समभाग इन सबों का कल्क बनाकर उसके साथ (घृत के चौथाई) तथा दूध, घृत के अठगुना मिलाकर विधिवत घृत सिद्ध करे। इस को पीने, भोजन तथा अवलेह में प्रयोग करें। अथवा पूर्वोक्त द्रव्यों का चूर्ण घृत के साथ चाटे या पूर्वोक्त द्रव्यों का कषाय घृत मिलाकर पान करें।

कफज कास की चिकित्सा–

अथ कफकासः।

कफकासी पिबेदादौ सुरकाष्ठात्प्रदीपितात्।।
स्नेहं परिस्रतुतं व्योषयवक्षारावचूर्णितम्।

अर्थ : कफज कास का रोगी पहले जलते हुए ताजे देवदारू का स्नेह (तैल) में व्योष चूर्ण (सोंठ, पीपर, मरिच तथा यव क्षार) मिलाकर पान करें।

कफज कास में संशोधन–

स्निग्धं विरेचयेदूर्ध्वमधो मूर्ध्नि च युक्तितः।।
तीक्ष्णैर्विरेकैर्बलिनं संसर्गी चास्य योजयेत्।
यवमुद्गकुलत्थान्नैरूष्णरूक्षैः कटूत्कटैः।।
कासमर्दकवार्ताकव्याघ्रीक्षारकणान्वितैः।
धान्वबैल्वरसैः स्नेहैस्तिलसर्षपनिम्बजैः।।

अर्थ : कफज कास में स्नेहन करने के बाद विधिपूर्वक ऊर्ध्वविरेचन (वमन), अधोविरेचन (विरेचन), तथा शिरोविरेचन (नस्य) देकर संशोधन करे। यदि रोगी बलवान हो तो तीक्ष्ण विरेचन द्रव्यों से विरेचन कराये। इसके बाद रोगी के लिए संसर्गी (पेया, यूष आदि) का प्रयोग करें। पेया आदि का निर्माण निम्न प्रकार से करें। यव, मूँग तथा कुरथी तथा ऊष्ण एवं रूक्ष अन्न के साथ कटु प्रधान रस मिलाकर और उसमें करौंदी, वनभंटा, भटकटैय्या, यवक्षार तथा पीपर का चूर्ण एवं तिल, सरसों तथा निम्बा का तैल मिलाकर पेया या अन्न का प्रयोग करें।

कफज कास में जलपान–

दशमूलाम्बु धर्माम्बहु मद्यं मध्वम्बु वा पिबेत्।
म्लैः पौष्करशम्पाकपटोलैः संस्थितं निशाम्।।
पिबेद्वारि सहक्षौद्रं कालेश्वन्नस्य वा त्रिशु।

अर्थ : कफज कास में रोगी दशमूल का पकाया जल, धूप में गरम किया जल अथवा मधु मिला जलपान करें अथवा पुष्कर मूल, अमल तास तथा परवल समभाग इन सबों का चूर्ण जल में रात भर रख तथा छान कर और उसमें शहद मिलाकर भोजन के पहले, मध्य तथा अन्त में या प्यास लगने पर पान करें।

कफ–कासहर तीन अवलेह–

पिप्ली पिप्पलीमूलं शृगबेर बिभीतकम्।।
शिखिकुवकुटपिच्छानां मशी क्षारो यवोद्भवः।
विशाला पिप्लीमूलं त्रिवृता च मधुद्रवाः।।
कफकासहरा लेहास्त्रयः श्लोकार्धयोजिताः।

अर्थ : (1) पीपर, पिपरामूल, अदरक तथा बहेड़ा, (2) यवक्षार, (3) इन्द्रायण, पिपरामूल तथा निशोथ का चूर्ण इन आधा श्लोक से समाप्त होने वाले तीन अवलेह द्रव्यों को मधु में मिलाकर चाटें। ये अवलेह कफकास को दूर करने वाले हैं।

कास नाशक कुछ अवलेह–

मधुना मरिचं लिह्यान्मधुनैव च जोडकम्।।
पृथग्रसांश्च मधुना व्याघ्रीवार्ताकमृगजान्।
कासघ्नस्याश्वशकृतः सुरसस्यासितस्य च।।

अर्थ : (1) मरिच का चूर्ण मधु के साथ, (2) अगर का चूर्ण मधु के साथ, (3)

कण्ठकारी का रस मधु के साथ, (4) वन भण्ठा का रस मधु के साथ, (5) भृंगराज का रस मधु के साथ, (6) कासघ्न (कसौंदी) का रस मधु के साथ, (7) काली तुलसी का रस मधु के साथ कफकास का रोगी चाटे।

वात–कफज का समें देवदार्वादि तीन अवलेह–

देवदारूशठीरास्नाकर्कटाख्यादुरालमाः।
पिप्ली नागरं मुस्तं पथ्या धात्री सितोपला।।
लाजा सितोपला सर्पिः शृगं धात्रीफलोद्भवा।
मधुतैलयुता लेहास्त्रयो वातानुगे कफे।।

अर्थ : वातकफजकास में (1) देवदारू, कचूर, रास्ना, तथा काकड़ासिंघी, (2) पीपर, सोंठ, नागरमोथा, हर्रे, आँवला तथा मिश्री, (3) धान का लावा, मिश्री, घी, काकड़ा सिंघी तथा आँवला समभाग इन आधा श्लोक से समाप्त होने वाले द्रव्यों का चूर्ण, इन तीनों अवलेहों को मधु तथा तैल मिलाकर चाटें।

कफज कास में दडिमादि गुटिका–

द्वे पले दाडिमादष्टौ गुडाद्वयोषात्पलत्रयम्।
रोचनं दीपनं स्वर्यं पीनसश्वासकासजित्।।

अर्थ : अनार फल के छिलका का चूर्ण दो पल (100 ग्राम) पुराना गुड आठ पल (400 ग्राम), तथा व्योष (सोंठ, पीपर, मरीच चूर्ण) तीन पल (150 ग्राम) इन सबों को एकत्र मिलाकर वटी बनावें, यह रूचिकर, जाठराग्नि दीपक, स्वर के लिए हितकर पीनस रोग, श्वासरोग तथा कास को दूर करता है।

कफज कास में गुड़क्षारादि गुटिका–

गुडक्षारोषणकणादाडिमं भवासकासजित्।
कमात्पलद्वयार्धाक्षकर्षाक्षार्धपलोन्मितम्।।

अर्थ : गुड दो पल (100 ग्रा.), यव क्षार आधा अक्ष (5 ग्राम), मरिच एक कर्ष (10 ग्राम), पीपर आधा कर्ष (5 ग्राम) तथा अनार का छिलका एक पल (50 ग्राम) इन सबो का चुर्ण गुड़ के साथ मिलाकर वटी बनावे। यह श्वास कास रोग को दूर करता है।

कफज कास में पथ्यादि पाचन–

पिबेज्ज्वरोक्तं पथ्यादि सशृडीकं च पाचनम्।

अर्थ : कफज कास में पाचन के लिए ज्वर प्रकरण में कहे गये पथ्यादि पाचन योग मे काकड़ा सिंघी का चूर्ण मिलाकर पान करे।

कफज कास में दीप्यकादि पाचन–

अथवा दीप्यकत्रिवृद्विशालाघनपौष्करम्।।
सकणं क्वथितं मूत्रे कफकासी जलेऽपि वा।

अर्थ : अथवा कफज कास में पाचन के लिए अजवायन, निशोथ, इन्द्रायण की जड़, नागरमोथा तथा पुष्कर मूल समभाग इन द्रव्यों को गोमुत्र में क्वाथ कर तथा पीपर का चूर्ण मिलाकर कफज कास का रोगी पान करे। अथवा पूर्वोक्त द्रव्यों को शुद्ध जलमें पकाकर तथा छानकर और उसमें पीपर का चूर्ण मिलाकर पान करे।

वात कफज कास में दशमूल घृत–

तैलमृष्टं च वेदेहीकल्काक्षं ससितोपलम्।।
पाययेत्कफकासघ्नं कुलित्थसलिलाप्लुतम्।
दशमूलाढके प्रस्थं घृतस्याक्षसमैः पचेत्।।
पुष्कराह्वशटीबिल्वसुरसाव्योषहिङ्गुभिः।
पेयानुपानं तत्सर्पिर्वातश्लेष्मामयापहम्।।

अर्थ : दशमूल का क्वाथ एक आढक (4 किलो) में घृत एक प्रस्थ (1 किलो) पुष्करमूल कचूर, बेल का गूदा, तुलसी, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) तथा हिंगु एक–एक अक्ष (प्रत्येक 10 ग्राम) इन सबों के कल्क के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करें और इस घृत को पान करने के बाद पेया, पीवे। यह वात–कफज रोग को तथा विशेष कर कास को नष्ट करता है।

कफज कास में निर्गुण्डयादि तथा विडडादि घृत–

निर्गुण्डीपत्रनिर्याससाधितं कासजिद् घृतम्।
घृतं रसे विडगनां व्योषगर्भं च साधितम्।।

अर्थ : निगुण्डी (सम्भालु) पत्र के क्वाथ में विधिवत् सिद्ध घृत कास को दूर करता है अथवा विडगं के क्वाथ में त्रिकटु (सोंठ, पीपर, मरीच) के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध घृत कास को नष्ट करता है।

कासादि रोग में पुनर्नवादि घृत–

पुनर्नवाशिवाटिका–सरलकासमर्दामृता–
पटोलबृहतीफणिजकरसैः पयःसंयुतैः।
घृतं त्रिकटुना च सिद्धमुपयुज्य सज्जायते।।
न कास विषमज्वरक्षयगुदाडकुरेभ्यो भयम्।

अर्थ : श्वेत पुनर्नवा, रक्त पुनर्नवा, चीढ़ का बुरादा, कसौंदी, गुडूची, परवल का पत्ता, वनभण्टा की जड़ तथा मरूआ समभाग इन सबों के क्वाथ में समभाग गाय का दुध मिलाकर त्रिकुट (सोंठ, पीपर, मरीच) के कल्क के साथ

विधिवत् घृत सिद्ध करे। इसका उपयोग करने पर कास विषमज्वर, क्षय रोग तथा अर्श रोग का भय नहीं होता है अर्थात् ये रोग नष्ट हो जाते हैं।

सभी कास में कण्टकारी घृत–

समूलफलपत्रायाः कण्टकार्या रसाढके।
घृतप्रस्थं बलाव्योषविडगशटिदाडिमैः।।
सौवर्चलयवक्षारमूलामलकपौष्करैः।
वृश्चीवबृहतीपथ्यायवानीचित्रकर्द्धिभिः।।
गृद्वीकाचव्यवर्शाभूदुरालम्भाम्लवेतसैः।
शृगतामलकीमार्गीरास्नागोक्षुरकैः पचेत्।।
कल्कैस्तत्सर्वकासेशु श्वासहिध्मासु चेश्यते।

अर्थ : मूल, फल तथा पत्र सहित कण्टकारी (भटकटैया) के क्वाथ एक आढक (4 किलो) में घृत एक प्रस्थ (1 किलो) बला (बरियार), व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) विडंग, कचूर, अनार, सौवर्चल नमक, यवक्षार, पिपरामूल, आँवला पुष्कर मूल, लाल पुनर्नवा, वनभण्टा, हर्रे अजवायन, चित्रक, ऋद्धि, मुनक्का, चव्य, सफेद– पुनर्नवा, यवासा, अम्लवेंत, काकड़ा सिंघी, भूई आँवला, वमनेठी, रास्ना तथा गोखरू समभाग सम्मिलित द्रव्य 250 ग्राम के कल्क के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करे और इसका प्रयोग सभी प्रकार के कास, श्वास तथा हिचकी में करे।

विश्लेषण : यह घृत कास श्वास में अधिक लाभकारी है। इनका प्रयोग विशेष रूप से किया जाता है। यथार्थ औषध का मान कुछ दिया है और कुछ नहीं दिया है। सामान्य नियम से कल्क से चौगुना घृत, और घृत से चौगुना क्वाथ देकर घृत पकाया जाता है। आयुर्वेद में सामान्य सेर चौसठ रूपये भरकर होता है और आढक चार सेर का इस नियम से कण्टकारी एक किलो लेकर 16 किलो जल में पकावे जब चार किलो शेष रह जाय तो उसमें 1 किलो घृत बला आदि समभाग द्रव्यों को 250 ग्राम लेकर तथा पीसकर कल्क बनावे और घृत सिद्ध करे।

कास गुल्मादि रोग में कण्टकारी अवलेह–

पचेद्वयाघ्रीतुलां क्षुण्णां वाहेऽपामाढकस्थिते।।
क्षिपेत् पूते तु सच्चूर्ण्य व्योषरास्नाऽमृताग्निकान्।
श्रृगीमार्डीघनग्रन्थिधन्वयासान् पलार्धकान्।।
सर्पिशः शोडशपलं चत्वारिंशत्पलानि च।
मत्स्यण्डिकायाः शुद्धायाः पुनश्च तदधिश्रयेत्।।
दर्वीलेपिनिं शीते च पृथग् द्विकुडवं क्षिपेत्।
पिप्लीनां तवक्षीर्या माक्षिकस्याऽनवस्य च।।

लेहोऽयं गुल्महृद्रोगदुर्नामश्वासकासजित्।

अर्थ : कण्टकारी का पचांग एक तुला (5 किलो) जल एक वाह (4 द्रोण–64 किलो) में पकावे और एक आढ़क (4 किलो) शेष रहने पर छान ले तथा उसमें व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), रास्ना, गुडूची, चित्रक काकड़ा सिंघी, वमनेठी, नागरमोथा, पिपरा मूल तथा यवासा समभाग आधा–आधा पल (प्रत्येक 25 ग्राम) द्रव्यों का चूर्ण बनाकर छोड़ दे और घृत सोलह पल (1 किलो 600 ग्राम) तथा शुद्ध शक्कर चालिस पल (2 किलो) मिलाकर पुनः पकाये। इसके बाद जब कलछुल में चिपकने लगे तब उतार कर तथा शीतल कर पीपर का चूर्ण 2 कुडव (500 ग्राम), वंशलोचन दो कुडव (500 ग्राम) तथा एक वर्ष का पुराना शहद दो कुड़व (500 ग्राम) मिला दें और अवलेह तैयार कर लें। यह अवलेह गुल्मरोग, हृदय रोग, अर्शरोग, श्वास रोग तथा कास रोग को दूर करता है।

कामघ्न धूमपान–

शमनं च पिबेद् धूमं शोधनं वहले कफे।।
मनः शिलालमधुकमांसीमुस्तेङ्गुदीत्वचः।
धूमं कासघ्नविधिना पीत्वा क्षीरं पिबेदनु।।
निष्ठयूतान्ते गुडयुतं कोष्णं धूमो निहन्ति सः।
वातश्लेष्मोत्तरान् कामानचिरेण चिरन्तनान्।।

अर्थ : कास में कफ की अधिकता होने पर मैन सिल, हरताल, मुलेठी, जटामांसी, नागरमोथा तथा इङ्गुदी (हिंगोट)के छाल का शमन तथा शोधन धूम्रपान करे और कासघ्न विधि से धूम्र का पान कर कफ के निकल जाने पर गुड़ मिश्रित ईषदुष्ण दूध पान करें। यह धूम्रपान वात–कफ प्रधान पुराने कास को शीघ्र ही नष्ट करता है।

विश्लेषण : विभिन्न द्रव्यों का धूम की मात्रा यहाँ नहीं लिखी गयी है। सममात्रा में लेने से हरताल तथा मैनसिल विषकारक हो जायगा। अतः मुलेठी आदि चार द्रव्यों को दश–दश ग्राम तथा मैनसिल हरताल को ढाई–ढाई ग्राम लेकर चूर्ण बना ले तथा प्रातः–सायं चिलम पर आग रखकर आग के ऊपर 5 ग्राम चूर्ण को रखकर धूम्रपान करे।

तमक श्वासानुबन्धी कास का उपचार–

तमकः कफकासे तु स्याच्चेत्पित्तानुबन्धजः।
पित्तकासक्रियां तत्र ययावस्थं प्रयोजयेत्।।

अर्थ : कफज कास में पित्त संसर्ग से तमक श्वास होन पर पैत्तिक कास शामक चिकित्सा अवस्था के अनुसार अधिक काल तक करे।

कास का विभिन्नावस्था की चिकित्सा–

कफानुबन्धे पवने कुर्यात्कफहरां क्रियाम्।
पित्तानुबन्धयोवतिकफयोः पित्तनाशनीम्।।

अर्थ : कफानुबन्धी वात कास में कफनाशक चिकित्सा करे। पितानुबन्धी वात कफज कास में पित्त कास नाशक चिकित्सा करे।

शुष्क तथा आर्द्रकास की चिकित्सा–

वातश्लेष्मात्मके शुष्के स्निग्धं चार्द्रे विरूक्षणम्।
कासे कर्म सपित्ते तु कफजे तिक्तसंयुतम्।।

अर्थ : वात–कफ जन्य शुष्क कास में स्निग्ध उपचार तथा आर्द्रकास में रूक्ष उपचार करे। पित्तयुक्त कफ कास में तिक्तरस युक्त उपचार (आहार–विहार तथा औषध) करे।

क्षतजः कासः

क्षतज कास में लाक्षादि योग–

उरस्यन्तःक्षते सद्यो लाक्षां क्षौद्रयुतां पिबेत्।
क्षीरेण शालीन् जीर्णऽद्यात्क्षीरेणैव सशर्करान्।।
पार्श्ववस्त्यादिरुक्चाल्पपित्ताग्निस्तां सुरायुताम्।
भिन्नविट्कः समुस्तातिविशापाठां सवत्सकाम्।।
लाक्षां सर्पिर्मधूच्छिश्टं जीवनीयं गणं सिताम्।
त्वक्क्षीरीसंमितं क्षीरेपक्त्वा दीप्तानलः पिबेत्।।

अर्थ : उरः प्रदेश के भीतरी भाग (फुफ्फुस) में क्षत होने पर तत्काल लाख का चूर्ण मधु मिलाकर दुध के साथ पान करे। उसके पच जाने पर दूध के ही साथ जड़हन धान का भात शक्कर मिलाकर खाय। रोगी को पार्श्वशूल, वस्ति आदि मलाशय में पीड़ा, पित्त तथा अग्नि की अल्पता होने पर लाक्षाचूर्ण को मद्य के साथ पान करें। टूट–टूट कर पखाना के होने पर नागरमोथा, अतीस, पाठा तथा कोरैया का छाल के चूर्ण के साथ लाक्षा चूर्ण को घी तथा मधु मिलाकर चाटें। अथवा जीवनीय गण के द्रव्यों के चूर्ण को लाक्षा तथा मिश्री मिलाकर पान करें। क्षतज कास का रोगी जाठराग्नि के प्रदीप्त रहने पर वंशलोचन का चूर्ण तथा घी में भूनी गेहूँ के आटा को दूध में पकाकर पान करे।

क्षतज कास में दूध का प्रयोग–

इक्ष्वारिकाविश (स) ग्रन्थिपद्यकेसरचन्दनैः।
शृतं पयो मधुयुतं सन्धानार्थं क्षती पिबेत्।।
यवानां चूर्णमामानां क्षीरे सिद्धं घृतान्वितम्।

ज्वरदाहे सिताक्षौद्रसक्तून्वा पयसा पिबेत्।।

अर्थ : उरक्षत का रोगी सन्धान के लिए तालमखाना, कमलनाल की ग्रंथियाँ; कमल का कैशर तथा चन्दन समभाग इन सबों के साथ विधिवत् पकाया दूध पान करें। यदि उसके साथ ज्वर तथा दाह हो तो कच्चे यव के चूर्ण (दलिया) को दूध में पकाकर तथा घृत मिलाकर पान करे। अथवा सत्तू को मिश्री तथा मधु मिलाकर दूध के साथ पान करे।

क्षतज कास में विविध प्रयोग–

कासवांश्च पिबेत्सर्पिर्मधुरौषधसाधितम्।
गुडोदकं वा क्वथितं सक्षौद्रमरिचं हिमम्।।
चूर्णमामलकानां वा क्षीरपक्वं घृतान्वितम्।
रसायनविधानेन पिप्लीर्वा प्रयोजयेत्।।

अर्थ : कास का रोगी मधुर रस वाले औषधों (मुलेठी आदि औषधों) से विधिवत् सिद्ध घृत पान करे। अथवा गुड़ का क्वाथ शीतल होने पर मरिच का चूर्ण तथा मधु मिलाकर पान करे। अथवा आँवला का चूर्ण दूध में पकाकर तथा घृत मिलाकर पान करे। अथवा पीपर को रसायन विधि से विभिन्न रूप में प्रयोग करे।

क्षतज कास में मधुकादि अवलेह–

कासी पर्वास्थिशूली च लिह्यात्सघृतमाक्षिकाः।
मधूकमधुकद्राक्षात्वक्क्षीरीपिप्पलीवलाः।।

अर्थ : क्षतज कास का रोगी पर्वों तथा अस्थियों में शूल होने पर महुआ का फूल, मुलेठी, मुनक्का, वंशलोचन, पीपर तथा वरियार समभाग इन सबों का चूर्ण घृत तथा मधु मिलाकर चाटें।

मधुगुटिकाः।

क्षतज कास आदि में मधुगुटिका–

त्रिजातमधुकर्षांशं पिप्पल्यर्धपलं सिता।
द्राक्षामधूकखर्जूरं पलांशं श्लक्ष्णचूर्णितम्।।

मधुना गुटिका घ्नन्ति
ता वृश्याः पित्तशोणितम्।
कास–श्वासाऽरूचिच्छर्दि–
मूर्च्छाहिध्मावमि भ्रमान्।।
क्षतक्षयस्वरभ्रंशप्लीहाशोफाढयमारूतान्।
रक्तनिष्ठीवहृत्पार्श्वरूक्पिपासाज्वरानपि।।

अर्थ : त्रिजात, (दान चीनी, इलायची, तेजपात), आधा–आधा कर्ष (प्रत्येक 5 ग्राम), पीपर आधापल (25 ग्राम), मिश्री, मुनक्का, महुआ का फूल तथा खजूर एक–एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम) इन सबों का महीन चूर्ण बनाकर मधु के साथ वटिका बनावे। यह वृष्य होती है तथा रक्तपित्त को नष्ट करती है। इसके अतिरिक्त कास, श्वास, अरूचि, वमन, मूर्च्छा, हिचकी, मद, चक्कर, उरःक्षत, क्षयरोग, स्वरभ्रंश, प्लीहारोग, शोथ, आढयवात (वात रक्त), थूक से खून निकला, हृदय पार्श्व शूल, भूख, प्यास तथा ज्वर को भी नष्ट करती है।

रक्तष्ठीवी क्षतज कास में पुनर्नवादि योग–

वर्शाभूशर्करारक्तशालितण्डुलजं रजः।
रक्तष्ठीवी पिबेत्सिद्धं वा तण्डुलीयकम्।
यथास्वमार्गविसृते रक्ते कुर्याच्च भेषजम्।।

अर्थ : पुनर्नवा चूर्ण, शक्कर, लालधान के चावल का चूर्ण इन सबों को मुनक्का का रस, दूध तथा घृत में सिद्ध कर क्षतज कास में रक्त निकलने पर पान करे। अथवा महुआ का फूल, मुलेठी तथा दूध में सिद्ध चौलाई का शाक भक्षण करे। मूत्राशय आदि विभिन्न मार्गों से रक्त निकलने पर रक्त–पित्त में बताये हुए औषध का प्रयोग करे।

क्षतज कास में अवस्थानुसार विभिन्न योग–

मूढवातस्त्वजामेदः सुराभृष्टं ससैन्धवम्।
क्षामः क्षीणः क्षतोरस्को मन्दनिद्रोऽग्निदीप्तिमान्।।
शृतक्षीरसरेणाद्यात्सघृतक्षौद्रशर्करम्।
शर्करां यवगोधूमं जीवकर्शभकौ मधु।।
शृतक्षीरानुपानं वा लिह्यात्क्षीणः क्षतः कृशः।
क्रव्यात्पिशितनिर्यूहं घृतभृष्टं पिवेच्च सः।।
पिप्पलीक्षौद्रसंयुक्तं मांसशोधितवर्धनम्।

अर्थ : क्षतज कास में वात की गति विलोम होने पर बकरी का मेदा (दूध का मावा) भूनकर तथा सेन्धा नमक मिलाकर साथ खाय। क्षतज कास का रोगी, क्षाम, क्षीण, अनिद्रा वाला तथा प्रदीप्ताग्नि वाला हो तो घी, मधु तथा मिलाकर पके दूध की मलाई खाय। क्षीण, क्षत तथा कृश रोगी यव, गेहूँ जीवक तथा ऋषभक के चूर्ण को मधु तथा शक्कर मिलाकर चाटें और ऊपर से दूध पीवे। अथवा क्षीण, क्षत तथा कृश रोगी पीपर का चूर्ण तथा शहद मिलाकर पान करें। यह मांस तथा रक्त को बढ़ाने वाला है।

क्षतज कास में न्यग्रोधादि योग–

न्यग्रोधोदुम्बराश्वत्थप्लक्षशालप्रियङ्गुभिः।।
तालमस्तकजम्बूत्वक्प्रियालैश्च सपद्मकैः।
साश्वकर्णैः शृतात्क्षीरादद्याज्जातेन सर्पिषा।।

अर्थ : उरःक्षत का रोगी बल तथा इन्द्रिय के क्षीण (दुर्बल) होने पर वट, गूलर, पीपर, पाकड़ शाल, प्रियंगु, तालमस्तक, जामुन का छाल, चिरौंजी, पद्मकाठ तथा पलाश समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क के साथ विधिवत् पकाये दूध के दही से निकाले घृत के साथ जड़हन धान का भात खाय।

खतज क़ास में विभिन्न अवस्थाओं के अनुसार योग–

शाल्योदनं क्षतोरस्कः क्षीणशुक्रबलेन्द्रियः।
वातपित्तार्दितेऽभ्यगों गात्रभेदे घृतर्मतः।।
तैलैश्चानिलरोगघ्नैः पीडिते मातरिश्वना।
हृत्पाश्वर्तिषु पानं स्याज्जीवनीयस्य सर्पिषः।।
कुर्याद्वा वातरोगघ्नं पित्तरक्ताविरोधि यत्।
यष्टयह्वानागबलयोः क्वाथे क्षीरसमे घृतम्।।
पयस्यापिप्लीवांशीकल्कैः सिद्धं क्षते हितम्।

अर्थ : क्षतज कास के रोगी के शरीर में वात–पित्त के प्रकोप से भेदन जैसी पीड़ा हो तो घृत का मालिश करे, और यदि केवल वात के प्रकोप से वेदना हो तो वातनाशक तैल का मालिश करे। हृदय तथा पार्श्व पीड़ा में जीवनीय गण के द्रव्यों से विधिवत् सिद्ध घृत का पान करे। अथवा रक्तपित की अविरोधी वातनाशक चिकित्सा करे। उरःक्षत में मुलेठी तथा नागबला के क्वाथ में समभाग दूध मिलाकर विदारी कन्द, पीपर तथा वंशलोचन के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध घृतपान हितकर होता है।

अमृतप्राशघृतम्।

क्षतज कास में अमृतप्रासघृत–

जीवनीयो गणः शुण्ठी वरी वीरा पुनर्नवा।।
बला भाडी स्वगुप्तर्द्धिः भाठी तामलकी कणा।
शृगटकं पयस्या च पच्चमूलं च यल्लघु।।
द्राक्षाऽक्षोडादि च फलं मधुरस्निग्धबृंहणम्।
तैः पचेत्सर्पिशः प्रस्थं कर्षांशैः श्लक्षणकल्कितैः।।
क्षीरधात्रीविदारीक्षुच्दागमांसरसान्वितम्।
प्रस्थार्ध मधुनः शीते शर्करार्धतुलारजः।।

पलार्धकं च मरिचत्वगेलापत्रकेसरम्।
विनीय चूर्णितं तस्माल्लिह्यान्मात्रां यथाबलम्।।
अमृतप्राशमित्येतन्नराणाममृतं घृतमृ।
सुधामृतरसं प्राश्यं क्षीरमांसरसाशिना।।
नष्टशुक्रक्षतक्षीणदुर्बलव्याधिकर्शितान्।
स्त्रीप्रसक्तन् कृशान् वर्णस्वरहीनांश्च बृंहयेत्।।
कासहिध्माज्वरश्वासदाहतृष्णाऽस्रपितनुत्।
पुत्रदं च्छर्दिमूर्च्छाहृद्योनिमूत्रामयापहम्।।

अर्थ : जीवनीय गण के द्रव्य, सोंठ, शतावरी, काकोली, पुनर्नवा, बरियार, वमनेठी, केवाछ़, ऋद्धि, कचूर, भूंई आँवला, पीपर, सिंघाड़ा, विदारीकन्द, लघुपच्चमूल (सरिवन, पिठवन, भटकटैया, वनभण्टा तथा गोखरू) मुनक्का, अखरोट, पिस्ता आदि मधुर स्निग्ध तथा बृंहण फल एक–एक कर्ष (प्रत्येक 10 ग्राम) इन सबों के श्लक्ष्ण (महीन) कल्क के साथ घृत एक प्रस्थ (1 किलो) दूध, आँवला का रस, विदारीकन्द का रस, गन्ने का रस तथा मांस रस एक–एक प्रस्थ (प्रत्येकी 1 किलो) मिलाकर विधिवत् पकावे और शीतल होने पर उसमें मधु आधा प्रस्थ (500 ग्राम) शक्कर आधा तुला (2 किलो 500 ग्राम) मरीच, दालचीनी, इलायची, तेजपात तथा नागकेशर आधा–आधा पल (प्रत्येक 25 ग्राम) का चूर्ण मिलाकर अवलेह सिद्ध कर ले और बल के अनुसार उचित मात्रा में चाटें। यह अमृतप्रास घृत मनुष्यों के लिए अमृत के समान है। इस सुधामृत घृत को खाकर दूध पान करे। यह नष्ट शुक्र व्यक्ति, क्षत, क्षीण, दुर्बल, रोग से कृश तथा वर्णस्वर हीन व्यक्ति को वृंहण करता है। यह कास, हिचकी, ज्वर, श्वासरोग, दाह, तृष्णा तथा रक्तपित्त को दूर करता है तथा पुत्र को देनेवाला है और वमन, मूर्च्छा, हृदयरोग, योनि सम्बधित रोग एवं मूत्र सम्बन्धी रोगों को नष्ट करता है।

श्वदंष्ट्रादिघृतम्।

क्षतज कास में श्वदंष्ट्रादि घृत–

श्वदंष्ट्रोशीरमज्जिष्ठाबलाकाश्मर्यकट्तृणम्।
दर्भमूलं पृथक्पर्णी पलाशर्षभकौ स्थिरा।।
पालिकानि पचेत्तेषां रसे क्षीरचतुर्गुणे।
कल्कैः स्वगुप्ताजीवन्तीमेदकर्षभजीवकैः।।
शतावर्यर्द्धिमद्वीकाशर्कराश्रावणीबिसैः।
प्रस्थः सिद्धो घृताद्वातपित्तहृद्रोगशूलनुत्।।
मूत्रकृच्छप्रमेहार्शः कासशोषक्षयापहः।
धनुस्त्रीमद्यमाराध्वखिन्नां बलमांसदः।।

अर्थ : गोखरू, खस, मजीठ, बरियार, गम्भारी, सुगन्धतृण, डाभ की जड़, पिठवन, पलास, ऋषमक तथा शालपर्णी समभाग एक—एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम) इन सबों को विधिवत् क्वाथ में चौगुना दूध मिलाकर, केवाछ, जीवन्ती, मेदा, ऋषभक, जीवक, शतावरी, ऋद्धि, मुनक्का, शक्कर गोरखमुण्डी तथा विस (कमल का नाल) समभाग इन सबों के कल्क (घृत के चतुर्थांश) के साथ घृत एक प्रस्थ (1 किलो) विधिवत् सिद्ध करे। यह वातरोग, हृदय रोग तथा शूल को दूर करता है और मूत्र कृच्छ् प्रमेह अर्श, कास, शोष तथा क्षयरोग को नष्ट करता है। इनके अतिरिक्त धनुष एंव व्यायाम जन्य तथा स्त्रीप्रसंग, भारवहन तथा मार्गगमन से खिन्न व्यक्तियों को बल तथा मांस को बढ़ाने वाला है।

मधुकादिघृतम्।

क्षतज कास में मधुकादि घृत—

मधुकाष्ठपलद्राक्षाप्रस्थक्वाथे पचेद्घृतम्।
पिप्पल्यष्टपले कल्के प्रस्थं सिद्धे च शीतले।।
पृथगष्टपलं क्षौद्रशर्कराभ्यां विमिश्रयेत्।
समसक्तु क्षतक्षीणरक्तगुल्मेषु तद्धितम्।।

अर्थ : मुलेठी आठपल (400 ग्राम) तथा मुनक्का एक प्रस्थ (1 किलो) इन सबों के विधिवत बनाये क्वाथ में तथा पीपर आठ पल (400 ग्राम) के कल्क में घृत एक प्रस्थ (1 किलो) विधिवत् सिद्ध करें और शीतल होने पर शहद आठ पल (400 ग्राम) तथा शक्कर आठ पल (400 ग्राम) मिलाकर रख लें। इसके बाद उसमें मात्रा के अनुसार समभाग यव का सत्तू मिलाकर खाय। यह क्षतक्षीण तथा रक्तगुल्म के रोगी के लिए हितकर है।

धात्र्यादिघृतम्।

क्षतज कास में धात्री घृत—

धात्रीफलविदारीक्षुजीवनीयरसाद्घृतात्।
गव्याजयोश्च पयसोः प्रस्थं प्रस्थं विपाचयेत्।।
सिद्धपूते सिताक्षौद्रं द्विप्रस्थं विनयेत्ततः।
यक्ष्मापस्मारपित्तासृक्कासमेहक्ष्मायापहम्।।
वयःस्थापनमायुष्यं मांसशुक्रबलप्रदम्।

अर्थ : आँवला का रस, विदारी कन्द का रस, गन्ना का तथा जीवनीयगण के द्रव्यों का रस एक—एक प्रस्थ (प्रत्येक 1 किलो), गाय का घृत एक प्रस्थ (1 किलो), गाय का दूध एक प्रस्थ (1 किलो) तथा बकरी का दूध एक प्रस्थ (1 किलो) इन सबों के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करें। घृत सिद्ध हो जोने पर छान

कर उसनें शक्कर एक प्रस्थ (1 किलो) तथा मधु एक प्रस्थ (1 किलो) मिला दें। यह अवलेह राजयक्ष्मा रोग, अपस्मार, रक्त–पित्त, कास, प्रमेह तथा यक्ष्मा रोग को नष्ट करता है और अवस्था को स्थिर रखने वाला, आयु को देने वाला, मांस शुक्र तथा बल को बढ़ाने वाला है।

दोषानुसार घृत प्रयोग विधि–

घृतं तु पित्तेऽभ्यधिके लिह्याद्वाताधिके पिबेत्।।
लीढं निर्वापयेत्पित्तमल्पत्वाद्धन्ति नानलम्।
आक्रामत्यनिलं पीतमूष्माणं निरूणद्धि च।।

अर्थ : पित्त के अधिक होने पर घृत चाटें और वात के अधिक होने पर घृत पीवे। घृत चाटने से पित्त को शान्त करता है और थोड़ी मात्रा में होने से अग्नि को नाश नहीं करता है। पीने पर वायु को दबाता है और उष्मा (पित्त की गर्मी)को रोक देता है।

घृत सेवन का गुण–

क्षामक्षीणकृशाङ्गनामेतान्येव घृतानि तु।
त्वक्क्षीरीपिप्पलीलाजचूर्णैः पानानि योजयेत्।।
सर्पिर्गुडान्समध्वांशान् कृत्वा दद्यात्पयोऽनु च।
रेतो वीर्यं बलं पुष्टिं तैराशुतरमाप्नुयात्।।

अर्थ : क्षाम (कान्ति हीन), क्षीण तथा कृश व्यक्तियों के लिए इन्हीं घृतों में वंशलोचन, शक्कर, पीपर चूर्ष तथा लावा का चूर्ण मिलाकर प्रयोग करें। घृत में वंशलोचन धान का लावा का चूण्र तथा शहद मिलाकर मोदक बनावे और खाकर ऊपर से दूध पीवे। इसके सेवन से शुक्र, पराक्रम, बल तथा पुष्टि की प्राप्ति शीघ्र ही होती है।

कूष्माण्डकरसायनम्।

क्षतज कास में कुष्माण्ड रसायन–

वीतत्वगस्थिकूष्माण्डतुलां स्विन्नां पुनः पचेत्।
घट्टयन् सर्पिशः प्रस्थे क्षौद्रवर्णेऽत्र च क्षिपेत्।।
खण्डाच्छतं कणाशुण्ठयोर्द्विपलं जीरकादपि।
त्रिजातधान्यमरिचं पृथगर्धपलांशकम्।।
अवतारितशीते च दत्वा क्षौद्रं घृतार्धकम्।
खजेनामथ्य च स्थाप्यं तन्निहन्त्युपयोजितम्।।
कासहिध्माज्वरश्वासरक्तपित्तक्षतक्षयान्।
उरः सन्धानजननं मेधास्मृतिबलप्रदम्।।
अश्विभ्यां विहितं हृद्यं कूष्माण्डकरसायनम्।

अर्थ : त्वचा तथा बीज रहित सफेद कोहड़ा (भतुआ) एक तुला (1 किलो) को

उबाल लें और घृत एक प्रस्थ (1 किलो) में कलछुल से चलाते हुए पकावें। लालिमा आ जानेपर उसमें शक्कर 100 पल (5 किलो), पीपर, सोंठ तथा जीरा का चूर्ण दो–दो पल (प्रत्येक 100 ग्राम) त्रिजात (दालचीनी, इलायची, तेजपात), धनिया तथा मरिच आधा–आधा पल (प्रत्येक 25 ग्राम) का चूर्ण मिला दे और उतारने के बाद शीतल होने पर मधु घृत के आधा (500 ग्राम) देकर मथानी (रही) से मथ कर घृत स्निग्ध पात्र में रख दें। यह प्रयोग करने से कास, हिचकी, ज्वर, श्वास, रक्त–पित्त तथा उरःक्षत को नाश करता है। यह उरःसंधान कारक, मेधा, स्मृति तथा बल को देने वाला है। यह कुष्माण्डक रसायन अश्विनी कुमारों के द्वारा कहा गया हृदय को बल देने वाला है।

नागबलादिप्रयोगः।

क्षतज कास में नागवला आदि के योग–

पिबेन्नागबलामूलस्यार्धकर्षाभिवधितम्।।
पलं क्षीरयुतं मासं क्षीरवृत्तिरनन्नभुक्।
एष प्रयोगः पुष्टयायुर्बलवर्णकरः परम्।।
मण्डूकपर्ण्याः कल्पोऽयं यष्टया विश्वौषधस्य च।

अर्थ : नागबला मूल की छाल का चूर्ण आधा कर्ष (5 ग्राम) की मात्रा में प्रतिदिन बढ़ाते हुए एक पल की मात्रा तक बढ़ाकर एक मास तक दूध के साथ खाय और केवल दूध इच्छानुसार पीवे, अन्न न खाय। यह योग उत्तम पुष्टि, बल तथा वर्ण को बढ़ाने वाला है। इसी प्रकार मण्डूकपर्णी, मुलेठी तथा सोंठ का कल्प करे।

नागबलाघृतम्।

क्षतज कास में नागबलाघृत–

पादशेषं जलद्रोणे पचेन्नागबलातुलाम्।।
तेन क्वाथेन तुल्यांशं घृतं क्षीरेण पाचयेत्।
पलाधिकैश्चातिबलाबलायष्टीपुनर्नवैः।।
प्रपौण्डरीककाशमर्यप्रियालकपिकच्छुभिः।
अश्वगन्धासिताभीरूमेदायुग्मत्रिकण्टकैः।।
काकोलीक्षीरकाकोलीक्षीरशुक्लाद्विजीरकैः।
एतन्नागबलासर्पिः पित्तरक्तक्षतक्षयान्।
जयेत्तृड्भ्रमदाहांश्च बलपुष्टिकरं परम्।
वर्ण्यमायुष्यमजोजस्यं बलीपलितनाशनम्।।
उपयुजय च शण्मासान् वृद्धोऽपि तरूणायते।

अर्थ : नागबल का मूल एक तुला (5 किलो), जल एक द्रोण (16 किलो) में

पकावे तथा (4 किलो) चौथाई शेष रहने पर छान ले और घृत तथा दूध क्वाथ के समभाग (प्रत्येक 4 किलो) मिलाकर उसमें अतिबलाबला, मुलेठी, पुनर्नवा, प्रपौण्डीक, गम्भारी चिरौंजी, केवाछ, असगन्ध शक्कर, शतावरि, मेदा, महामेदा, गोख्दरू, काकोली, क्षीरकाकोली, विदारी कन्द, सफेद जीरा तथा स्याह जीरा एक–एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम) के कल्क के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करे। यह नागबला घृत रक्तपित्त, क्षतजकास, क्षयजकास, प्यास, चक्कर तथा दाह को दूर करता है तथा अच्छी तरह बल तथा पुष्टि को बढ़ाता है। बलि तथा पलित (बाल का पकना) को नाश करता है। इस घृत का प्रयोग कर वृद्ध भी छः मास में तरूण हो जाता है। अर्थात् तरूण के सदृश शक्तिशाली हो जाता है।

क्षतज कास में अवस्थानुसार चिकित्साक्रम–

दीप्तेऽग्नौ विधिरेश स्यान्मन्दे दीपनपाचनः।।
यक्ष्मोक्तः क्षतिनां भास्तो ग्राही भाकृति तु द्रवे।

अर्थ : क्षतज कास में जाठराग्नि के प्रदीप्त रहने पर पूर्वोक्त से (रसायन घृत आदि से) चिकित्सा करे। जाठराग्नि के मन्द होने पर यक्ष्मा रोग के प्रकरण में कहे गये दीपन पाचन योगों का प्रयोग करे और क्षतज कास के रोगी के मल पतला होने पर ग्राही औषध का प्रयोग करे।

अगसत्यहरीतकी रसायनम्–

क्षतज कास में अगस्त्यहरीतकी रसायन–

दशमूलं स्वयडगुप्तां शङखपुष्पी शठीं बलाम्।।
हस्तिपिप्पल्यपामार्गपिप्पलीमूलचित्रकान्।
भार्डी पुष्करमूलं च द्विपलांशात् यवाढकम्।।
हरीतकीशतं चैव जले पच्चाएके पचेत्।
यवस्विन्ने कषायं तं पूतं तच्चाभयाशतम्।।
पचेद्गुउतुलां दत्त्वा कुडवं च पृथग्घृतात।
तैलात्सपिप्पलीचूर्णात्सिद्धशीते च माक्षिकात्।।
लेहं द्वे चाभये नित्यमतः खादेद्रसायनात्।
तद्वलीपलितं हन्याद्वर्णायुर्बलवर्धनम्।।
पच्चकासान् क्षयं श्वासं सहिध्मं विषमज्वरम्।
मेहगहुल्मग्रहण्यर्शो ह्रद्रोगारूचिपीनसान्।।
अगस्तिविहितं धन्यमिदं श्रेष्ठं रसायनम्।

अर्थ : दशमूल (बिल, जम्भारी, सोना पाठा, अरली, पाढ़ल, शालपर्णी, पृश्निपर्णी, भटकटैया, बन भंटा तथा गोखरू) केवाछ बीज, शंखपुष्पी, कचूर बला, पीपर, अपामार्ग, पिपरा मूल,

चित्रक, भार्डी तथा पुष्कर मूल प्रत्येक दो–दो पल (प्रत्येक 100 ग्राम), यव एक आढ़क (4 किलो), हर्रे का एक सौ फल इन सबों को जल पाँच आदक (लगभग 20 किलो) में पकावे। यव के पक जाने पर क्वाथ को छान ले और उसमें हर्रे एक सौ, गुड़ दो तुला (10 किलो) घृत एक कुडव (250 ग्राम), तैल एक कुडव (250 ग्राम), पीपर का चूर्ण एक कुडव (250 ग्राम) मिलाकर विधिवत् पकावे। शीतल हो जाने पर मधु एक कुडव (250 ग्राम) मिला दे। इस रसायन में से दो हर्रे लेकर प्रतिदिन भक्षण करे। यह रसायन बली पलित को नष्ट करता है तथा वर्ण,आयु एवं बल को बढ़ाता है। इनके अतिरिक्त पाँच प्रकार के कास, क्षयरोग, श्वास रोग, हिचकी, विषम ज्वर, प्रमेह, गुल्म, रोग, ग्रहणी अर्शा, हृदय रोग, अरूचि तथा पीनस रोग को नष्ट करता है। अगस्त्य मुनि का बनाया हुआ यह अगस्त्य हरीतकी रसायन धन्य तथा सबसे उत्तम है।

क्षतज कास मं वशिष्ठहरीतकी रसायन–

वसिष्ठोक्तं रसायनम्।
दशमूलं बला मूर्वा हरिद्रे पिप्पलीद्वयम्।।
पाठाऽश्वगन्धापामार्गस्वगुप्ताऽतिविषाऽमृतम्।
बालबिल्वं त्रिवृद्दन्तीमूलं पत्रं च चित्रकात्।।
पयस्यां कुटजं हिंस्रां पुष्पं सारं च बीजकात्।
बोटस्थविरभल्लातविकङ्कतशतावरीः।।
पूतीकरज्जशम्पाकचन्द्रलेखासहाचरम्।
सौभाज्जनकनिम्बत्वगिक्षुरं च पलांशकम्।।
पथ्यासहस्रं सशतं यवानां चाढकद्वयम्।
पचेदष्टगुणे तोये यवस्वेदेऽवतारयेत्।।
पूते क्षिपेत्सपथ्यं च तत्र जीर्णगुडात्तुलाम्।
तैलाज्यधात्रीरसतः प्रस्थं ततः पुनः।।
अधिश्रयेन्मृदावग्नौ दर्वीलेपेऽवतार्य च।
शीते प्रस्थद्वयं क्षौद्रात्पिप्लीकुडवं क्षिपेत्।।
चूर्णीकृतं त्रिजाताच्च त्रिपलं निखनेत्ततः।
धान्ये पुराणकुम्भस्थं मासं खादेच्च पूर्ववत्।।
रसायनं वसिष्ठोक्तमेतत्पूर्वगुणाधिकम्।
स्वस्थानां निःपरीहारं सर्वर्तुषु च भास्यते।।

अर्थ : दशमूल, बला, मूर्वा, हल्दी, दारू हल्दी, पीपर, गजपीपर, पाढ़ा, अश्वगन्धा, अपामार्ग, केवाछबीज, अतीस, गुडूची, कच्चा बेल, निशोथ, दन्तीमूल, तेजपत्र, चित्रक, विदारी कन्द, कुटजछाल, हिंस्ना, वियसार का फूल तथा सार, वोट (मुण्डी) स्थाविर (शैलय–छड़ीला), भल्ला– तक, विकगत (बबूर की छाल) शतावरि,

पूतिकरञ्ज, अमलतास, चन्द्रलेखा (वाकुची), सहचर (सहदेई), सहिजन, नीम की छाल तथा तालमखाना समभाग एक–एक पल (प्रत्येक 50 ग्रा.) हर्रे ग्याहर सौ नग, यव दो आढ़क (8 किलो) इन सबों को आठ गुने जल में पकावें और यव के पक जाने पर छान ले। इसके बाद उसमें पूर्वोक्त हर्रे ग्यारह सौ, पुराना गुड़ दो तुला (10 किलो), तैल, घुत तथा आंवला का रस एक–एक प्रस्थ (प्रत्येक 1 किलो) मिलाकर पुनः मन्द आँच में दर्वी लेप (कलदुल में चिपकने लगे) पकावें। तदन्तर उतार कर शीतल होने पर उसमें मधु दो प्रस्थ (2 किलो) तथा पीपर का चूर्ण एक कुडव (250 ग्राम) और त्रिजात (इलायची दालचीनी, तेजपत्र) का चूर्ण तीन पल (150 ग्राम) मिलाकर चला दे। इसके बाद उसको पुराने स्निग्ध मिट्टी के पात्र में रख कर धन की ढेर में एक मास रक्खें और निकाल कर उसमें से दो–दो हर्रे पूर्वोक्त प्रकार से (हर्रे 2 तथा अवलेह 20 ग्राम) भक्षण करें। यह वशिष्ठ का कहा हुआ रसायन अगस्त्य हरीतकी रसायन से गुण में अधिक है। व्यक्तियों के लिए सभी ऋतुओं में प्रशस्त है। इसमें किसी प्रकार का परहेज की आवश्यकता नहीं है।

सैन्धवादिचूर्णम्।

क्षतज कास में सैन्धवादि चूर्ण–

पालिकं सैन्धवं शुण्ठी द्वे च सौवर्चलात्पले।
कुडवांशानि वृक्षाम्लं दाडिमं पत्रमार्जमकम्।।
एकैकां मरिचाऽऽजाज्योधन्यिकाद् द्वे चतुर्थिके।
शर्करायाः पलान्यत्र दश द्वे च प्रदापयेत्।।
कृत्वा चूर्णमता मात्रामन्नपानेषु दापूयेत्।
रूच्यं तद्दीपनं बल्यं पार्श्वर्तिश्वासकासजित्।।

अर्थ : सेन्धा नमक एक पल (50 ग्राम), सोंठ दो पल (100 ग्राम), सौवर्च नमक दो पल (100 ग्राम), वृक्षाम्ल (विषमिल), एक कुडव (250 ग्राम) खद्य अनारदाना एक कुडव (250 ग्राम), सूखा तुलसी का फल एक कुडव (250 ग्राम), मरिच तथा सफेद जीरा एक एक चातुर्थिक (प्रत्येक 50 ग्राम), धनियाँ दो चातुर्थिक (100 ग्राम) इन सबों का चूर्ण बनाकर उसमें शक्कर बारह पल (600 ग्राम) मिला दे। इसमें से मात्रा पूर्वक अन्न–पान में प्रयोग करे। यह रूचिकारक जाठराग्निदीपक, बलकारक, पार्श्व पीड़ा, श्वास तथा कास को जीत लेता है।

क्षतज कास में खाण्डव चूर्ण–

एकां शोडशिकां धान्याद् द्वे द्वे चाऽजाजिदीप्यकात्।
ताभ्यां दाडिमवृक्षाम्लैर्द्विर्द्विः सौवर्चलात्पलम्।।
शुण्ठयाः कर्ष कपित्थस्य मध्यात्पच्चपलानि च।
तच्चूर्ण शोडशपलैः शर्कराया विमिश्रयेत्।।
खाण्डवोऽयं प्रदेयः स्यादन्नपानेषु पूर्ववत्।

अर्थ : धनियाँ एक षोडशिका (50 ग्राम) जीरा तथा अजवायन दो दो षोडशिका (प्रत्येक 100 ग्राम) अनारदाना तथा वृक्षाम्ल चार–चार सौवर्चल नामक एक पल (50 ग्राम) सोंठ एक कर्ष (10 ग्राम) षोडशिका (प्रत्येक 200 ग्राम) कैथ का गूदा पाँच पल (250 ग्राम) इन सबों का चूर्ण बनाकर उसमें शक्कर सोलह पल (800 ग्राम) मिला दे। इस खाण्डव को पूर्व प्रकार से अन्न–पान में प्रयोग करे।।

क्षतज कास मं यक्ष्मा विहित चिकित्सा निर्देश–
विधिश्च यक्ष्मविहितो यथावस्थं क्षते हितः।।
क्षतज कास में राजयक्ष्मा रोग में निर्दिष्ट उपचार
अवस्था के अनुसार हितकर होता है।

क्षतज कास में विविध धूम पान–
निवृत्ते क्षतदोषे तु कफे वृद्धे उरः शिरः।
दाल्यते कासिनो यस्य स धूमानापिबेदिमान्।।
द्विमेदाद्विबलायष्टीकल्कैः क्षौमे सुभाविते।
वर्ति कृत्वा पिबेद्धूमं जीवनीयघृतानुपः।।
मनःशिलापलाशाजगन्धात्वक्क्षीरनागरैः।
तद्वदेवाऽनुपानं तु शर्करेक्षुगुडोदकम्।।
पिष्ट्वा मनःशिलां तुल्यामार्द्रया वटशुङ्गया।
ससर्पिष्कं पिबेद्धूमं तित्तिरिप्रतिभोजनम्।।

अर्थ : जिस कास के रोगी का उरःक्षत के दोष समाप्त हो जाने पर कफ के बढ़े रहने पर उरः प्रदेश तथा सिर में फटने के समान पीड़ा रहे उसको निम्नलिखित धूम्रपान करावें।

1–मेदा, महामेदा, बला, नागबला तथा मुलेठी समभाग इन सबों का कल्क बनाकर उससे कपड़े पर लेप करें और उसकी वर्ती बनाकर सूखने पर धूम्रपान करे और बाद में जीवनीय घृत का पान करें।

2– मैनसिल, पलास, अजमोदा, दालचीनी, दूध तथा सोंठ समभाग इन सबों के कल्क का वस्त्र के ऊपर लेप लगाकर वर्ती बनावें और सुखाकर उसका धूम्रपान करें तथा शक्कर का शर्बत, गन्ने का रस या गुड़ का शर्बत पीवें।

3–गीले वट के टूसा के साथ समभाग मैनसिल को पीस कर तथा घृत मिलाकर कपड़े के ऊपर लेप लगाकर वर्ती बनावें और सूखने पर उसका धूम्रपान करें।

विश्लेषण : इन द्रव्यों को कपड़े पर लेपकर सूख जाने के बाद बत्ती बनावे। इन बत्तियों को एक–एक इच्च का टुकड़ा कर रख ले। पीते समय चीलम के ऊपर से ढक दें। इस चीलम को धूमनेत्र पर रखकर आग रक्खे और चीलम को ऊपर से ढक दें। इस चीलम को धूमनेत्र पर रखकर गुड़गुडे से धूम्रपान करें। धूमनेत्र के

लम्बाई की अनुसार धूमकी तेजी कम हो जाती है। अतः धूम मृदु हो जाता है। अथवा हुक्का जिसके नीचे के भाग से जल भरा रहता है, उससे धूम जल से आकर मृदु हो जाता है। यह श्वास कास हिक्का में लाभकर होता है।

यक्षज कास में चिकित्सा क्रम–

क्षयजे बृंहणं पूर्व कुर्यादग्नेश्च वर्धनम्।
बहुदोषाय सस्नेहं मृदु दद्याद्विरेचनम्।।
शम्पाकेन त्रिवृतया मृद्वीकारसयुक्तया।
तिल्वकस्य कषायेण विदारीस्वरसेन च।।

अर्थ : क्षयज कास में सर्वप्रथम बृंहण तथा अग्निवर्द्धकर चिकित्सा करें। शरीर में दोषों की अधिकता तथा मेद क्षीण होने पर घृतयुक्त मृदु विरेचन का प्रयोग करें। इसके लिए अमल तास के कल्क या निशोथ के कल्क तथा मुनक्का के रस के साथ अथवा तिल्वक (लोध्र) के कषाय के साथ अथवा विदारी कन्द रस के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करे और इस विशोधन घृत को युक्ति पूर्वक पान करें।

क्षयज कास में घृतपान विधि–

सर्पिः सिद्धं पिवेद्युक्त्या क्षीणदेहो विशोधनम्।
पित्ते कफे धातुषु च क्षीणेषु क्षयकासवान्।।
घृत कर्कटकीक्षीरद्विबलासाधितं पिबेत्।

अर्थ : क्षयज कास के रोगी पित्त, कफत तथा धातुओं के क्षीण होने पर काकड़ासिंधी, बला तथा नाग बला के कल्क और गोदुग्ध के साथ विधिवत् सिद्ध घृत पान करें।

क्षयत कास में घृत–दुग्धपान तथा अनुवासन–

विदारीभिः कदम्बैर्वा तालसस्यैश्च साधितम्।।
घृतं पयश्च मूत्रस्य वैवर्ण्ये कृच्छ्रनिर्गमे।
शूने सवेदने मेढे पायौ सश्रोणिवङ्क्षणे।।
घृतमण्डेन लघुनाऽनुवास्यो मिश्रकेण वा।

अर्थ : क्षयज कास में विदारी कन्द, कदम्ब अथवा ताल (तड़कुल) के बाल के साथ विधिवत् सिद्ध घृत तथा दूध पीवें। मूत्र की विवर्णता, मूत्रकृच्छ्, मूत्रेन्द्रिय, गुदा, श्रोणि प्रदेश तथा वंक्षणदेश में वेदनायुक्त शूल होने पर हल्का घृत मण्ड या मिश्रक (घृत–तेल मिश्रण) से अनुवासन वस्ति का प्रयोग करें।

क्षयज कास में चविकादि घृत–

चविकात्रिफलाभाडीदशमूलैः सचित्रकैः।।

कुलत्थपिप्पलीमूलपाठाकोलयवैर्जले।
शृतैनगिरदुःस्पर्शापिप्लीशठिपौष्करैः।।
पिष्टैः कर्कटशृङया च समैः सर्पिर्विपाचयेत्।
सिद्धेऽस्मिश्चूर्णितौ क्षारौ द्वौ पच्चलवणानि च।।
दत्त्वा युक्त्या पिबेन्मात्रां क्षयकासनिपीडितः।

अर्थ : क्षयज कास से पीड़ित व्यक्ति चव्य, त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला), वमनेठी, दशमूल, चित्रक, कुलथी, पिपरामूल, पाठा, वनवेर तथ्ज्ञा यव समभाग इन सबों के क्वाथ तथा सोंठ, यवासा, पीपर, कचूर पुष्कर मूल एवं काकड़ा सिंघी समभाग इन सबों के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध घृत में दोनों क्षार (यवक्षार सज्जी खार), तथा पाँचों लवण (सेंधा, सौवर्चल, विड, सांभर तथा सामुद्र नमक) उचित मात्रा में मिलाकर बलाबल के अनुसार मात्रापूर्वक घृत पान करें।

क्षयज कास में कासमर्दादि घृत–

कासमर्दाभयामुस्तापाठाकट्फलनागरैः।।
पिप्पल्या कटुरोहिण्या काश्मर्याः स्वरसेन च।
अक्षमात्रैर्घृतप्रस्थं क्षीरद्राक्षारसाढके।।
पचेच्छोषज्वरप्लीहसर्वकासहरं शिवम्।

अर्थ : कसौंदी, हर्रे, नागरमोथा, जायफल, सोंठ,पीपर, कुटकी, गम्भारी तथा तुलसी समभाग एक–एक कर्ष (10 ग्राम प्रत्येक) के कल्क के साथ दूध मुनक्का के रस एक एक आढक (प्रत्येक लगभग 4 किलो) में घृत एक प्रस्थ (1 किलो) विधिवत् सिद्ध करें। यह घृत शोष, प्लीहा वृद्धि तथा सभी प्रकार के कास को दूर करता है और आरोग्यकारक है।

क्षयज कास में विविध घृत–

वृषव्याघ्रीगुडूचीनां पत्रमूलफलाङ्कुरात्।।
रसकल्कैर्घृतं पक्वं हन्ति कासज्वरारूचीः।
द्विगुणे दाडिमरसे सिद्धं वा व्योषसंयुतम्।।
पिबेदुपरि भुक्तस्य यवक्षारयुतं नरः।
पिप्पलीगुडसिद्धं वा छागक्षीरयुतं घृतम्।।
एतान्यग्निविवृद्धयर्थं सर्पींशि क्षयकासिनाम्।
स्युर्दोशबद्धकण्ठोरःस्रोतसां च विशुद्धये।।

अर्थ : अडूसा, कण्टकारी तथा गुडूची के पत्र, मूल, फल तथा अंकुर के रस तथा कल्क के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करे। यह कास, ज्वर तथा अरूचि को नष्ट करता है। अथवा क्षयज कासका रोगी घृत के दुगुना अनार का रस

तथा व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध घृत में यवक्षार मिलाकर भोजन के बाद पान करें। अथवा पीपर तथा गुड़ के कल्क तथा बकरी केदूध के साथ विधिवत् घृत सिद्ध करें। ये घृत क्षयज कास के

रोगियों के जाठराग्नि को बढ़ाने के लिए तथा बद्धदोष, कण्ठ उर तथा स्रोतसों को शुद्ध करने के लिए उत्तम होते हैं।

क्षयज कास में विजयावलेह–

प्रस्थोन्मिते यवक्वाथे विंशतिर्विजयाः पचेत्।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन्पुराणात्षट्पलं गुडात्।।
पिप्पल्या द्विपलं कर्षं मनोह्वाया रसाञ्जनात्।
दत्त्वाऽर्धाक्षं पचेद्भूयः स लेहः श्वासकासनुत्।।

अर्थ : यव का क्वाथ एक प्रस्थ (750 ग्राम) में बीस हर्रे पकावें। पक जाने पर उसको बीज निकाल कर मसल ले और उसमें पुरान गुड़ छः पल (150 ग्राम), पीपर का चूर्ण दो पल (100 ग्राम), शु. मैनसिल एक कर्ष (12 ग्राम) तथा रसाञ्जन आधा अक्ष (6 ग्राम) मिलाकर पुनः अवलेहवत् पकावें। यह अवलेह श्वास कास को दूर करता है।

कास में विविध योग–

श्वाविधां सूचयो दग्धाः सघृतक्षौद्रशर्कराः।
श्वासकासहरा बर्हिपादौ वा मधुसर्पिषा।।
एरण्डपत्रक्षारं वा व्योषतैलगुडान्वितम्।
लेहयेत् क्षारमेवं वा सुरसैरण्डपत्रजम्।।
लिह्यात् त्र्यूषणचूर्णं वा पुराणगुणसर्पिषा।
पद्मकं त्रिफला व्योषं विडगं देवदारू च।।
बला रास्ना च तच्चूर्णं समस्तं समशर्करम्।
खादेन्मधुघृताभ्यां च लिह्यात्कासहरं परम्।।
तद्वन्मरिचचूर्णं वा सघृतक्षौद्रशर्करम्।
पथ्याशुण्ठीघनगुडैर्गुटिकां धारयेन्मुखे।।
सर्वेषु श्वासकासेषु केवलं वा बिभीतकम्।

अर्थ : साही के कण्टकों को अन्तर्धूम जलाकर उस भस्म को घृत, मधु तथा शक्कर के साथ मात्रापूर्वक चाटने से श्वास तथा कास दूर होते हैं। अथवा एरण्ड पत्र का क्षार, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) के चूर्ण, तैल तथा गुड़ मिलाकर चटायें या केवल क्षार चटाये अथवा तुलसी तथा एरण्ड पत्र का क्षार चटाये, अथवा त्र्यूषण (सोंठ, पीपर, मरिच) का चूर्ण पुराना गुड़ तथा घृत के साथ

चटाये। अथवा पद्मकाठ, त्रिफला (हर्रे बहेड़ा, आँवला), व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) वाय विडगं, देवदास बला तथा रास्ना समभाग इन सबों का चूर्ण समभाग शक्कर मिलाकर मधु तथा घृत के साथ चटाये। यह उत्तम कास–नाशक है। हर्रे, सोंठ तथा नागर मोथा के समभाग के चूर्ण में गुड़ मिलाकर वटिका बनाये और मुख में धारण करे। अथवा केवल बहेड़ा सभी प्रकार के श्वास कास में लाभदायक है।

कास में तिल्वक पत्र पेया आदि–

पत्रकल्कं घृतमृष्टं तिल्वकस्य सशर्करम्।।
पेया वोत्कारिका छर्दितृट्कासाऽऽमातिसारनुत्।

अर्थ : लोध के पत्तों का कल्क बनाकर घी में तल ले तथा शक्कर मिलाकर पेया बना ले अथवा उलटा (पपड़ा) बना लें। यह वमन, प्यास, कास तथा आमातिसार को दूर करती है।

सभी कास में मुद्गयूश–

कण्टकारीरसे सिद्धो मुद्गयूशः सुसंसकृतः।।
सगौरामलकः साम्लः सर्वकासभिशग्जितम्।

अर्थ : कण्टकारी के रस में सिद्ध मूंगयूष अच्छी तरह हींग, जीरा आदि से संस्कृत तथा पका हुआ पीली आँव की खटाई युक्त मूंग का यूष सभी प्रकार के कास को जीत लेता है।

कास में सामान्य चिकित्सा निदर्शन–

क्षतकासे च ये धूमाः सानुपाना निदर्शिताः।।
क्षयकासेऽपि ते योज्या वक्ष्यते यच्च यक्ष्मणि।
बृंहणं दीपनं चाग्नेः स्रोतसां च विशोधनम्।।
व्यत्यासात्क्षयकासिभ्यो बल्यं सर्व प्रशस्यते।
सन्निपातोद्भवो घोरः क्षयकासो यतस्ततः।
यथादोषबलं तस्य सन्निपातहितं हितम्।।
इति चिकित्सास्थाने तृतीयोऽध्यायः

अर्थ : क्षतज कास में अनुपान सहित जिन धूमों का निर्देश किया गया है उन सबको क्षयजकास में भी प्रयोग करना चाहिए। राजयक्ष्मा प्रकरण में जो बृंहण, दीपन तथा एवं स्रोतसों के संशोधन का निर्देश करेंगे उनको व्यत्यासक्रम से (दीपन–बृंहण बृंहण–दीपन पुनः दीपन–बृंहण–बृंहण–दीपन) तथा सभी प्रकार के बलर्द्धक पदार्थों का सेवन प्रशस्त होता है। क्षयजकास त्रिदोषज होता है अतः जिस दोष की प्रधानता हो उसके अनुसार चिकित्सा करे।

चतुर्थ अध्याय

अथाऽतः श्वासहिध्माचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह समाहुरात्रेयादयो महर्शयः।

अर्थ : कास चिकित्सा के व्याख्यान के बाद श्वास--हिध्मा चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था–

श्वास तथा हिक्का का सामान्य चिकित्सा सूत्र--
श्वासहिध्मा यतसतुल्यहेत्वाद्याः साधनं ततः।।
तुल्यमेव तदार्त च पूर्व स्वेदैरूपाचरेत्।
स्निग्धैर्लवणतैलाक्तं तैः खेशु ग्रथितः कफः।।
सुलीनोऽपि विलीनोऽस्य कोष्ठं प्राप्तः सुनिर्हरः।
स्रोतसां स्यान्मृदुत्वं च मारूतस्यानुलोमता।।
स्विन्नं च भोजयेदन्नं स्निग्धमानूपजै रसैः।
दध्युत्तरेण वा दद्यात्ततोऽस्मै वमनं मृदु।।

अर्थ : श्वास रोग तथा हिक्का रोग के कारण उत्पत्ति स्थान तथा दोषतुल्य (समान) होते हैं अतः उनको दूर करने के साधन भी समान ही होते है। श्वास तथा हिक्का से पीड़ित रोगीको वक्ष प्रदेश पर तैल तथा नमक लगाने के बाद पहले स्निग्ध, स्वदेन कराये। इससे स्रोतसों में चिपका भी गाँठदार कफ विलीन होकर रोगी के कोष्ठ में आ जाता है और सुगमता से निकालने योग्य हो जाता है। कफ निकल जाने से स्रोतस मुलायम हो जाते हैं और वायु का अनुलोमन हो जाता है। स्वेदन करने के बाद रोगी को स्निग्धभोजन के साथ या दही के मलाई के साथ दें। इसके बाद रोगी को मृदु वमन कारक औषध दें।

श्वास तथा हिक्का रोग की चिकित्सा–
विशेषात्कास–वमथु–हृद्ग्रह–स्वरसादिने।
पिप्पलीसैन्धवक्षौद्रयुक्तं वाताविरोधि यत्।।
निर्हृते सुखमाप्तोति सकफे दुष्टविग्रहे।
स्रोतःसु च विशुद्धेषु चरत्यविहतोऽनिलः।।

अर्थः श्वास तथा हिक्का रोग के साथ कास, वमन, हृदय की गति में रुकावट तथा स्वर भेद हो तो पीपर का चूर्ण तथा सेन्धा नमक मधु मिलाकर जो वातवर्द्धक

न हो ऐसा अन्न दें। इस प्रकार दूषित वातादि दोषों द्वारा रूका हुआ कफ निकल जाने पर आराम मिलता है और स्रोतसों के शुद्ध हो जाने पर श्वास–हिक्का में वायु बिना रूकावट भ्रमण करने लगता है।

तमक श्वास में विशेष चिकित्सा सूत्र–

ध्मानोदावर्ततमके मातुलुगम्लवेतसैः।
हिङ्गुपीलुबिडैर्युक्तमन्नं स्यादनुलोमनम्।।
ससैन्धवं फलाम्लं वा कोष्णं दद्याद्विरेचनम्।
एते हि कफसंरूद्धगतिप्राणप्रकोपजाः।।
तस्मात्तन्मार्गशुद्ध्यर्थमूर्ध्वाधिः शोधनं हितम्।
उदीर्यते भृशतरं मार्गरोधाद्वहज्जलम्।।
यथाऽनिलस्तथा तस्य मार्गमस्माद्विशोधयेत्।

अर्थ : आध्मान तथा उदावर्त से युक्त तमक श्वास में बिजौरा नींबू का रस, अम्लवेत, हींग, पीलु तथा विड नमक मिलाकर अन्न दे। वह अनुलोमन करने वाला होता है। अथवा सेन्धा नमक तथा खट्टा अनारदान के साथ निशोथ आदि विरेचन द्रव्यों को गरम कर दे। ये श्वास हिक्का रोग कफ से गति के रूक जाने से प्राणवायु के प्रकोप से उत्पन्न होते हैं। अतः ऊर्ध्व तथा अधोमार्ग की शुद्धि के ऊर्ध्व तथा अधः शोधन (वमन–विरेचन) हितकर होता है। बहता हुआ जल मार्ग के अवरोध हो जाने से जैसे अधिक बढ़ जाता है, उसी प्रकार कफ द्वारा वायु का मार्ग अवरूद्ध हेने पर वायु अधिक बढ़ जाता है। अतः वायु के मार्ग का ऊर्ध्वाधः (वमन–विरेचन के द्वारा) शोधन करें।

विश्लेषण : हिक्का–श्वास रोग प्राण वायु तथा उदान वायु के प्रकोप से होता है। प्राणवायु का मार्ग श्वासनली, फुफ्फुस तथा वक्ष प्रदेश है। जब इन स्थानों में कफ की वृद्धि और वायुद्वारा उनका शोषण होता है तो शोषित कफ वायु के मार्ग को रोकता है। जिससे प्राण वायु अधिक प्रकुपित होकर श्वास या हिक्का को उत्पन्न करता है। ऐसी अवस्था में वक्ष प्रदेश पर स्नेहन तथा नमक का मालिस कर वमन देते है। इससे कफ के निकल जाने के बाद वायु का प्रकोप शान्त हो जाता है। अथवा घी तथा नमक का मालिश कर गरम कपड़ा से सेक करने पर आराम मिलता है। यदि श्वास या हिक्का रोग में आध्मान हो तो अपानवायु की विकृति होती है। इसमें बिजौरा निबू के साथ बनाये हुए चूर्ण को भोजन में मिलाकर पहले देने से अपानवायु शान्त हो जाता है। यदि शान्त न हो तो मृदु विरेचन देना चाहिए।

धूमानाह–

श्वासरोग में विविध धूम–

अशान्तो कृतसंशुद्धेर्धूमैर्लीनं मलं हरेत्।।
हरिद्रापत्रमेरण्डमूलं द्राक्षां मनःशिलाम्।
सदेवदार्वलं मांसीं पिट्ष्वा वर्तिं प्रकल्पयेत्।।
तां घृताक्तां पिबेद्धूमं यवान्वा घृतसंयुतान्।
मधूच्छिश्टं सर्जरसं घृतं वा गुरू वाऽगुरू।।
चन्दनं वा तथा श्रृगबालान्वा स्नावजान्गवाम्।
ऋक्षगोधाकुरगणचर्मश्रृगखुराणि वा।।
गुग्गुलुं वा मनोह्लां वा शालनिर्यासमेव वा।
शल्लकीं गुग्गुलुं लोहं पद्मकं वा घृतप्लुतम्।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से संशोधन करने के बाद भी श्वास के शान्त न होने पर फुफ्फुस में चिपके हुए दोष को विविध धूमों से निर्हरण करे। हल्दी का पत्र, एरण्डमूल, मुनक्का, मैनसिल, देवदारू, हरताल तथा जटामांसी समभाग इन सबों को पीसकर वर्त्ति बनावे और घी में डुबोकर उसका धूम्रपान करे। अथवा यव का चूर्ण घृत मिलाकर या मोम सर्जरस तथा घृत या श्रेष्ठ अगरू घृत मिलाकर या चन्दन घृत मिलाकर या गाय का सीघं बाल अथवा गुग्गुल या मैनसिल या शल्लकी का गोंद गुग्गुल, लोह (अगरू) तथा पद्मकाठ का चूर्ण घृत मिलाकर धूम्रपान करें।

श्वासरोग में स्वेदन की आवश्यकता–

अवश्यं स्वेदनीयानामस्वेद्यानामपि क्षणम्।
स्वेदयेत्ससिताक्षीरैः सुखोष्णस्नेहसेचनैः।।
उत्कारिकोपनाहैश्च स्वेदाध्यायोक्तभेशजैः।
उरः कण्ठं च मृदुभिः सामे त्वामविधि चरेत्।।

अर्थ : श्वास रोग में स्वेदन के योग्य हो या न हो उसको उरःस्थल या कण्ठ क़ा मिश्री युक्त दूध या घृत आदि स्नेह के सेचन से या उत्कारिका (पपड़ा) तथा उपनाह (पोल्टिस) से या स्वराध्याय में कहे गये स्वेदन औषधों से थोड़ी देर मृदु स्वेदन करे। आमदोष हो तो आम पचाने वाले औषध का प्रयोग करे।

संशोधन के अतियोग में उपचार–

अतियोगोद्धतं वातं दृश्ट्वा पवननाशनैः।
स्निग्धै रसाद्यैनत्युिष्णैरभ्यगश्च शमं नयेत्।।

अर्थ : संशोधन के अतियोग होने पर प्रकुपित वायु को देखकर वात शामक स्निग्ध भोजनों से तथा थोड़ा उष्ण अभ्यगों से शान्त करे।

संशोधन का निषेध–

अनुत्क्लिष्टकफास्विन्नदुर्बलानां हि शोधनात्।
वायुर्लब्धास्पदो मर्म संशोष्याऽऽशु हरेदसून्।।
कषायलेपस्नेहाद्यैस्तेषां संशमयेदतः।

अर्थ : जिनका कफ उमड़ा न हो तथा स्वदेन न किया गया हो और जो दुर्बल हो उनका संशोधन करने से वायु अपने स्थान को प्राप्त कर तथा मर्मस्थल (हृदय) को सुखाकर शीघ्र ही प्राणों को नष्ट करता है। अतः कषाय लेप तथा स्नेह पान आदि श्वास के शमन के लिए प्रयोग करें।

विश्लेषण : श्वास तथा हिक्का में उरः प्रदेश और कण्ठ वायु से सूखकर चिपका रहता है। अतः स्नेहन, स्वेदन के बाद कफ ढीला होने पर वमन द्वारा निकाला जाता है। यदि स्नेहन–स्वेदन करने पर भी ढीलन हो ओर निकलने योग्य न हो तो पुनः स्नेहन–स्वेदन कर उसके ढीला होने पर निकाले। किन्तु बिना स्नेहन–स्वेदन किये कभी भी वमन न करायें। विशेषकर दुर्बल व्यक्तियों के कफ के ढीला न होने पर वमन नहीं कराना चाहिए। यदि असावधानता वश वमन दिया जाय तो कुपित वायु कफ के चिपके रहने वाले स्थान को नष्ट कर मर्मस्थान में जाकर रोगी के प्राण को नष्ट कर देता है। अतः बिना स्नेहन–स्वेदन किये हुए व्यक्ति को वमन नहीं कराना चाहिए। ऐसी अवस्था में उसको कषाय, लेप, स्नेह आदि से संशमन उपचार करना चाहिए।

क्षीण आदि रोगी के श्वास का उपचार–

क्षीणक्षतातिसारासृक्पित्तदाहानुबन्धजान्।।
मधुरस्निग्धशीताद्यैर्हिध्माश्वासानुपाचरेत्।

अर्थ : क्षीण, क्षत, अतिसार, रक्तपित्त, दाह आदि से अनुबन्धित हिक्का तथा श्चास रोग का उपचार मधुर, स्निग्ध तथा शीतल औषध तथा अन्न पान आदि से करना चाहिए।

श्वास रोग में यूशका प्रयोग–

कुलत्थदशमूलानां क्वाथे स्युजडिला रसाः।।
यूशाश्च शिग्रुवातकिकासघ्नवृषमूलकैः।
पल्लवैर्निम्बकुलकबृहतीमातुलुङजैः।।
व्याघ्रीदुरालभाशृङीबिल्वमध्यत्रिकण्टकैः।

अर्थ : श्वासरोग से पीड़ित व्यक्ति के लिए कुलत्था तथा दशमूल के विधिवत् क्वाथ में रस देना चाहिए। अथवा सहिजन, वनभंटा, कसौंदी, अडूसा तथा मूली या नीम, परवल, वनभण्टा तथा विजौरा नींबू की पत्तियों अथवा कण्टकारी, काकड़ा सिंघी, बेलगिरि तथा गोखरू के पकाये जल से यूष तैयार कर श्वास के रोगी को दे।

श्वास रोग में विविध पेया--

सामृताग्निकुलत्थैश्च यूषः स्यात्क्वथितैर्जले।
तद्वद्रास्नाबृहत्याऽतिबलामुद्गैः सचित्रकैः।।
पेया च चित्रकाजाजीश्रृंगसौवर्चलैः कृता।
दशमूलेन वा कासश्वासहिध्मारूजापहा।।
दशमूलशठीरास्नाभार्डी बिल्वर्द्धिपुष्करैः।
कुलीरश्रृंगचपलातामलक्यमृतौशधैः।
पिबेतत्कषायं जीर्णेऽस्मिन्पेयां तैरेव साधिताम्।।

अर्थ : चित्रक, जीरा तथा काकड़ा सिंघी समभाग इन सबों के पकाये जल में पेया बनाकर तथा सौवर्चल नमक मिलाकर अथवा दशमूल के पकाये जल में पेया बनाकर पान कराये। यह कास, श्वास तथा हिक्का रोग को दूर करती है। अथवा दशमूला कचूर, रास्ना, वमनेठी, बेलगिरि, ऋद्धि, पुष्कर मूल, काकड़ा सिंघी, पीपर, भूंई आँवला गुड़ूची तथा सोंठ समभाग इन सबका विधिवत् क्वाथ बनाकर पान कराये और पच जाने पर इन्हीं द्रव्यों के पकाये जल में विधिवत् पेया बनाकर पान कराये।।

श्वास--कासादि रोग में हितकर आहार--

शालिषष्टिकगोधूम--यवमुद्गकुलत्थभुक्।
कासहृद्ग्रहपाश्वर्ति--हिध्माश्वासप्रशान्तये।।

अर्थ : कास, हृद्ग्रह, पार्श्वशूल, हिक्का तथा श्वासरोग की शान्ति के लिए जड़हन तथा साठी धान के चावल का भात, गेहूँ तथा यव की रोटी और मूंग तथा कुरथी का दाल खाय।

श्वासादि रोग में सत्तू का प्रयोग--

सक्तून्वाऽकङि्कुरक्षीर--भावितानां समाक्षिकान्।
यवानां दशमूलादिनिःक्वाथलुलितान् पिबेत्।।

अर्थ : मदार के दूध से भावित यव का सत्तू मधु मिलाकर तथा दशमूल के विधिवत् क्वाथ में घोलकर कास, हृद्ग्रह, पार्श्वशूल, हिक्का तथा श्वास का रोगी पान करे।

श्वास रोगी के आहार में क्षारादि मिश्रण का विधान--

अन्ने च योजयेत् क्षारं हिङ्ग्वाज्यविडदाडिमान्।
सपौष्करशठीव्योष--मातुलुङाम्लवेतसान्।।
दशमूलस्य वा क्वाथमथवा देवदारूणः।
पिबेद्वा वारूणीमण्डं हिध्माश्वासी पिपासितः।।

अर्थ : श्वासरोगी के आहार में जवाखार, हींग, घृत, विडनमक, अनारदाना, पुष्कर मूल, कचूर, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) बिजौरा नींबू का रस तथा अम्लवेंत का प्रयोग विविध प्रकार से करे अथवा प्यास लगने पर हिध्मा तथा श्वास का रोगी दशमूल का क्वाथ या देवदारू का क्वाथ या वारूणीमण्ड पान करे।

श्वास–कास में तक्र का प्रयोग–

पिप्पलीपिप्पलीमूल–पथ्याजन्तुघ्नचित्रकै:।
कल्कितैर्लेपिते रूढे नि:क्षिपेद् घृतभाजने।।
तक्रं मासस्थितं तद्धि दीपनं श्वासकासजित्।

अर्थ : पीपर, पिपरामूल, हर्रे, वायविडंग तथा चित्रक समभाग इन सबों के कल्क से लिप्त मजबूत मिट्टी के घृत पात्र में एक मास तक तक्र (मट्ठा) रखकर पान कराये। यह मट्ठा जाठराग्नि को प्रदीप्त करता है तथा श्वास एवं कासरोग को दूर करता है।

श्वास रोग में विविध योग–

पाठां मधुरसां दारू सरलं निशि संस्थितम्।।
सुरामण्डेऽल्पलवणं पिबेत्प्रसृतिसंमितम्।
भार्डीशुण्ठ्यौ सुखाम्भोभि: क्षारं वा मरिचान्वितम्।
स्वक्वाथपिष्टां लुलितां बाष्पिकां पाययेत वा।

अर्थ : सुरामण्ड में पाठा, गुडूची, देवदारू तथा सरल समभाग इन सबका चूर्ण एक रात्रि तक रखकर तथा थोड़ा नमक मिलाकर एक प्रसृति (100 ग्राम) की मात्रा में श्वास का रोगी पान करे अथवा वमनेठी तथा सोंठ के थोड़े गरम जल में क्षार तथा मरिच का चूर्ण मिलाकर पान कराये। अथवा बाष्पिका (हिंगुपत्री) को उसी के क्वाथ के साथ पीस पान कराये।

श्वास कास में अवस्थानुसार विभिन्न योग–

स्वरस: सप्तपर्णस्य पुष्पाणां वा शिरीषत:।।
हिध्माश्वासे मधुकणायुक्त: पित्तकफानुगे।
उत्कारिका तुगाकृष्णामधूलीघृतनागरै:।।
पित्तानुबन्धे योक्तव्या पवने त्वनुबन्धिनि।
श्वाविच्छशामिषकणाघृतशल्यकशोणितै:।।
सुवर्चलारसव्योशसर्पिर्भि: सहितं पय:।
अनु शाल्योदनं पेयं वातपित्तानुबन्धिनि।।

अर्थ : पित्त–कफानुबन्धी हिक्का तथा श्वास रोग में सप्तपर्ण (छतिवन) या

सिरीष के फूल का रस मधु तथा पीपर का चूर्ण मिलाकर पान कराये। पित्तानुबन्धी हिक्का श्वास में वंशलोचन, पीपर, गोंद तथा सोंठ के चूर्ण का घृत से उत्कारिका (पपड़ा) बनावे और रोगी को भक्षण कराये। वातानुबन्धी हिक्का श्वास के रोगी को साही तथा खरहा का मांसः पीपर का चूर्ण तथा साही के रक्त का घृत में पपड़ा बनाये और रोगी को दे अथवा चौगुना जल में विधिवत् सिद्ध दूध में गुड तथा सोंठ का चूर्ण मिलाकर पिलाये अथवा वात तथा पित्तानुबन्धी हिक्का श्वास में हुर–हुर के स्वरस तथा कल्क से सिद्ध दूध जडहन धान के चावल का भात खाने के बाद पिलाये।

वि□लेशण : उत्कारिका वंशलोचन, पीपर चूर्ण गेहूँ का आटा तथा सोंठ के चूर्ण को जल में गाढ़ा घोल बना कर तवे के ऊपर घी फैलाकर पतला फैला दिया जाय और कुछ पकने के बाद उसे उलटा दिया जाया। जैसे परौठा बनाया जाता है उसी प्रकार जब दोनों तरफ पक जाय तो निकाल ले और श्वास के रोगी को खाने के लिए दे। इसी प्रकार अन्य उत्कारिका बनाई जाती है।

हिक्का आदि नाशक पिप्लीमूलादि योग–

चतुर्गुणाम्बुसिद्धं वा छागं सगुडनागरम्।
पिप्पलीमुलमधुकगुडगोऽश्वशकृद्रसान्।।
हिध्माभिष्यन्दकासघ्नान् लिह्यान्मधुघृतान्वितान्।

अर्थ : पिपरा मूल तथा मुलेठी चूर्ण और गाय के गोबर का रस इन सबों को मधु तथा घृत मिलाकर चाटें। यह हिक्का, अभिष्यन्द तथा कास को नाश करने वाला है।

भवास रोग में अवस्थानुसार विविध योग–

गो–गजाऽश्व–वराहोष्ट्र–खरमेषाजविड्रसम्।
समध्वेकैकशो लिह्याद्बहुश्लेष्माऽथवा पिबेत्।।
चतुष्पाच्चर्मरोमास्थिखुरशृगोद्भवां मषीम्।
तथैव वाजिगन्धाया लिह्यात् श्वासी कफोल्बणः।।
शठी–पुष्करधात्रीर्वा पौष्करं वा कणान्वितम्।
गैरिकाज्जनकृष्णां वा स्वरसं वा कपित्थजम्।।
रसेना वा कपित्थस्य धात्रीसैन्धवपिप्पलीः।
घृतक्षौद्रेण वा पथ्याविडगोषणपिप्पलीः।।
कोललाजामलद्राक्षापिप्पलीनागराणि वा।
गुडतैलनिशाद्राक्षाकरणारास्नोषणानि वा।।
पिबेद्रसाम्बुमद्याम्लैर्लेहौषधरजांसि वा।

अर्थ : जिस श्वास के रोगी का कफ बढ़ा हो वह गाय, के गोबर का रस मधु के साथ चाटें या पीवे। जिसका कफ बढ़ा हो ऐसा श्वास का रोगी भस्म, काली भस्म अथवा अश्वगन्धा का अन्त धूम भस्म (काली भस्म) शहद के साथ चाटे। अथवा कचूर, पुष्कर मूल तथा आँवला का चूर्ण पीपर का चूर्ण मिलाकर शहद में चाटे। अथवा गेरू तथा कृष्णाज्जन का या कपित्थ का रस मधु के साथ चाटें अथवा कैथ के रस, आँवला, सेन्धानमक तथा पीपर का चूर्ण चाटें। अथवा हरें, वायविंडग, कालीमिरच तथा पीपर का चूर्ण घृत तथा मधु के साथ चाटें अथवा बैर का गूदा, लावा, आँवला, मुनक्का, पीपर तथा सोंठ का चूर्ण अथवा गुड़, तैल, हल्दी, मुनक्का, पीपर, रासन तथा कालीमरिच का चूर्ण मांस रस, जल मद्य तथा अम्ल रस के साथ पान करे। अथवा सोठ का चूर्ण आदि के साथ पान करे।

भवास रोग में जीवन्त्यादि चूर्ण–

जीवन्तीमुस्तसुरसत्वगलाद्वयपौश्करम्।।
चण्डातामलकीलोहभार्डीनागरबालकम्।
कर्कटाख्या शठी कृष्णा नागकेसरचोरकम्।।
उपयुक्तं यथाकामं चूर्णं द्विगुणशर्करम्।
पार्श्वरूग्ज्वरकासघ्नं हिघ्माश्वासहरं परम्।।

अर्थ : जीवन्ती, नागरमोथा, तुलसी, दालचीनी, इलायची बड़ी, इलायची छोटी, पुष्कर मूल, चण्डा (नकछिकनी), भूँई आँवला, अगर, वमनेठी, सोंठ, सुगन्ध वाला, काकडा सिंघी, कचूर, पीपर, नागकेशर तथा चोरक (चोरपुष्पी) समभाग इन सबों के चूर्ण के बराबर शक्कर मिलाकर रख ले। इस चूर्ण का प्रयोग अपनी इच्छा के अनुसार आहार तथा अनुपान के साथ करे। यह पार्श्व पीड़ा, ज्वर तथा कास को नष्ट करता है, हिक्का तथा श्वास को अच्छी तरह दूर करता है।

हिक्का–श्वास रोग में शठ्यादि चूर्ण–

शठी तामलकी भार्डी चण्डाबालकपौश्करम्।
शर्कराष्टगुणं चूर्णं हिघ्माश्वासहरं परम्।।

अर्थ : कचूर, भूंई आँवला, भारंगी, नकछिकनी, सुगन्ध बाला तथा पुष्कर मूल समभाग इन सबों के चूर्ण के अठगुना शक्कर मिलाकर रख ले। यह उचित मात्रा में प्रयोग करने से हिक्का तथा श्वास रोग को अच्छी तरह दूर करता है।

हिक्का तथा भवास मे विविध नस्य–

तुल्यं गुडं नागरं च भक्षयेन्नावयेत वा।
लशुनस्य पलाण्डोर्वा मलं गृज्जनकस्य वा।।

चन्दनाद्वा रसं दद्यान्नारीक्षीरेण नावनम्।
स्तन्येन मक्षिकाविष्टामलक्तकरसेन वा।।

अर्थ : श्वास तथा हिक्का रोग में सोठ का चूर्ण तथा गुड समभाग लेकर भक्षण करे या नस्य ले। लहसुन या पलाण्डु के मूल का रस या गाजर के मूल का रस या चन्दन का रस का नस्य स्त्री के दूध में मिलाकर दे। अथवा अलक्तक (महावर) के रस में मिलाकर नस्य दे।

हिक्का–श्वास में पीपल्यादि घृत–

कणासौवर्चलक्षारवयस्याहिङ्गुचोरकैः।
सकायस्थैर्घृतं मस्तुदशमूलरसे पचेत्।।
तत्पिबेज्जीवनीयैर्वा लिह्यात्समधुसाधितम्।

अर्थ : पीपर, सौवर्चलनमक, यवक्षार, वयस्या (शतावरि), हींग, चोरपुष्पी तथा हर्रे समभाग इन सबों के कल्क के साथ मस्तु (दही का पानी) तथा दशमूल के क्वाथ में विधिवत् घृत सिद्ध करे। इस घृत को हिक्काश्वास में पान करें। अथवा जीवनीय द्रव्यों के कल्क के साथ सिद्ध घृत में शहद मिलाकर चाटे।

हिक्का–श्वास में तेजोवत्यादि घृत–

तेजोवत्यभया कुश्ठं पिप्पली कटुरोहिणी।।
भूतिकं पौष्करं मूलं पलाशश्चित्रकः शठी।
पटुद्वयं तामलकी जीवन्ती बिल्वपेशिका।।
वचा पत्रं च तालीसं कर्षांशैस्तैर्विपाचयेत्।
हिङ्गुपादैर्घृतप्रस्थं पीतमाशु निहन्ति तत्।।
शाखानिलार्शोग्रहणीहिध्माहृत्पार्श्ववेदनाः।

अर्थ : तेजबल, हर्रे, कूट, पीपर, कुटकी, अजवायन, पुष्कर–मूल, पलास बीज, चित्रक, कचूर, सेन्धानमक, सौवर्चल नमक, भूई आँवला, जीवन्ती, बेलगिरि, वच तथा तालीसपत्र समभाग एक–एक कर्ष (प्रत्येक 10 ग्राम) हींग चौथाई भाग (2 ग्राम) इन सबों के कल्क के साथ घृत एक प्रस्थ (1 किलो) (घृत के चौगुना जल में) विधिवत् सिद्ध करें। यह पीने से शीघ्र ही शाखा (रक्तदि छः धातु तथा त्वचा गत वायु) गत वायु, अर्शरोग, ग्रहणीरोग, हिक्का, हृदयशूल तथा पार्श्व पीड़ा को नष्ट करता है।

हिक्का–श्वास में घृत पान का विधान–

अर्द्धांशेन पिबेत्सर्पिः क्षारेण पटुनाऽथवा।।
धान्वन्तरं वृषघृतं दाधिकं हपुषादि वा।

अर्थ : हिक्का–श्वास में घृत के आधाभाग यवक्षार मिलाकर या सेन्धानमक मिलाकर घृतपान करें। अथवा धान्वन्तर घृत या वृषघृत या दाधिकघृत अथवा हपुषादिघृत पान करें।

हिक्कारोग बाह्य उपचार–

शीताम्बुसेकः सहसा त्रासविक्षेपभीशुचः।।
हर्षेर्ष्योच्छ्वाससंरोधा हितं कीटैश्च दंशनम्।

अर्थ : हिक्का रोग में सहसा शीतल जल का छींटा देना, भय देना, घबड़ाहट उत्पन्न करना, डराना, शोक उत्पन्न करना, हर्ष उत्पन्न करना श्वास–प्रश्वास को रोकना तथा अविषैले कीटों से कटाना ये सब हिक्का के वेग को शान्त करता है।

विश्लेषण : कफ से वायु के अवरोध होने पर हिक्का उत्पन्न होती है। इन क्रियाओं के द्वारा वायु प्रबल वेग से कफ को भेदनकर आने प्राकृतिक गति में हो जाता है। अतः वेग की शान्ति हो जाती है। यह चिकित्सा हेतु विपरीतार्थकारी होती है।

हिक्का–श्वास में पथ्य–

यत्किंचित्कफवातघ्नमुश्णं वातानलोमनम्।
तत्सेव्यं प्रायशो यच्च सुतरां मारूतापहम्।।

अर्थ : हिक्का तथा श्वासरोग में जो आहार–विहार कफवात नाशक, उष्ण तथा वातानुलोमक और जो अच्छी तरह वायु का नाश करने वाला हो उसको सेवन करें।

हिक्का–श्वास में बृंहण तथा शमनक्रिया की प्रशस्ति–

सर्वेशां बृंहण ह्यल्पः शक्यश्च प्रायशो भवेत्।
नात्यर्थं शमनेऽपायो भृशोऽशक्यशच कर्षणे।।
शमनैर्बृंहणैश्चातो भूयिष्ठं तानुपाचरेत्।
कासश्वासक्षयच्छर्दिहिध्माशन्योन्यभेषजैः।।

अर्थ : सभी श्वास–हिक्का रोग में बृंहण क्रिया करने में अल्प शक्य अर्थात् आसानी से रोग दूर होता है। शमन चिकित्सा अधिक उपद्रव नहीं करता है और कर्षण क्रिया अत्यन्त अशक्य अर्थात् अधिक कठिन होती है। अतः शमन तथा बृंहण से श्वास तथा हिक्का की चिकित्सा करें। कास, श्वास, क्षय, वमन तथा हिक्का तथा अन्य रोगों की चिकित्सा करना– अपने अपने प्रकरणों में बताई गई चिकित्सा एक दूसरे में करनी चाहिए।

पंचम् अध्याय

अथाऽतो राजयक्ष्मादिचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः।

अर्थ : श्वास–हिक्कारोग चिकित्सा व्याख्यान के बाद राजयक्षा आदि (राजयक्षा, स्वरभेद, अरोचक तथा पीनस) की चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

राजयक्ष्मा में शोधन विधान–
बलिनो बहुदोषस्य स्निग्धस्विन्नस्य शोधनम्।
ऊर्ध्वाधो यक्ष्मिणः कुर्यात्सस्नेहं यन्न कर्शनम्।।

अर्थ : बलवान्, अधिक दोष वाले स्नेहन तथा स्वदेन किये हुए राजयक्ष्मा के रोगी का स्नेह युक्त ऊर्ध्व (वमन) अधः (विरेचन) शोधन करे किन्तु वह शोधन कृशताकारक न हो।

राज यक्ष्मा में वमन विरेचन योग–
पयसा फलयुक्तेन मधुरेण रसेन वा।
सर्पिष्मत्या यवाग्वा वा वमनद्रव्यसिद्धया।।
वमेद् विरेचनं दद्यात्त्रिवृच्छ्यामानृपद्रुमान्।
शर्करामधुसर्पिर्भिः पयसा तर्पणेन वा।।
द्राक्षाविदारीकाश्मर्यमांसानां वा रसैर्युतान्।

अर्थ : राज यक्ष्मा रोग में मदन फल के साथ पकाया दूध, या मधुर रस (गन्ना का रस--चीनी का शर्बत) या वमन द्रव्यों से विधिवत् सिद्ध प्रचुर घृतयुक्त यवागु से वमन कराये और निशोथ तथा श्यामानिशोथ और अमलतास की गूर्दा इन सबों का चूर्ण शक्कर, मधु तथा घी मिलाकर दूध से या यव के सत्तू के घोल से अथवा मुनक्का का रस या विदारी कन्द का रस या गम्भारी का रस या मिलाकर विरचेन दे।

राजयक्ष्मा में जीवन्त्यादि घृत–
जीवन्तीं मधुकं द्राक्षां फलानि कुटजस्य च।
पुष्कराह्वं शठीं कृष्णां व्याघ्रीं गोक्षुरकं बलाम्।।
नीलोत्पलं तामलकीं त्रायमाणां दुरालभाम्।
कल्कीकृत्य घृतं पक्वं रोगराजहरं परम्।।

अर्थ : जीवन्ती, मुलेठी, मुनक्का, इन्द्रयव, पुष्करमूल, कचूर, पीपर, कण्टकारी,

गोखरू, वरियार, नीलकमल, भूंई आँवला, त्रायमाणा तथा यावासा समभाग इन सबों के कल्क के साथ विधिवत् पकाया घृत सेवन करने से राजयक्ष्मा रोग को अच्छी तरह दूर करता है।

राजयक्ष्मा रोग मं खर्जुरादि घृत–

घृतं खर्जुरमृद्धीकामधुकैः सपरूषकैः।
सपिप्पलीकं वैस्वर्यकासश्वासज्वरापहम्।।

अर्थ : खजूर, मुनक्का, मुलेठी, फालसा तथा पीपर समभाग इन सबों के कल्क के साथ विधिवत् सिद्ध घृत सेवन करने से राजयक्ष्मा के रोग स्वर विकृति, कास, श्वास रोग तथा ज्वर को दूर करता है।

राजयक्ष्मा रोग में विविध घृत–

दशमूलशृतात्क्षीरात्सर्पिर्यदुदियान्नवम्।
सपिप्पलीकं सक्षौद्रं तत्परं स्वरबोधनम्।।
शिरःपार्श्वांसशूलघ्नं कासश्वासज्वरापहम्।
पञ्चभिः पञ्चमूलैर्वा शृताद्यदुदियाद् घृतम्।।

अर्थ : दशमूल के क्वाथ मिलाकर पकाये दूध के दही से निकाला हुआ नवीन घृत पीपर का चूर्ण तथा मधु मिलाकर पिलाने से राजयक्ष्मा के रोगी के शिरःशूल, पार्श्वशूल, अंसशूल, कास, श्वास तथा ज्वर दूर होते हैं। अथवा पाँचों पञ्चमूल (बृहत्पञ्चमूल, लघु पञ्चमूल, मध्यमपञ्चमूल, जीवनपञ्चमूल तथा तृण पञ्चमूल) के क्वाथ के साथ पकाये दूध के दही से निकाला घृत पूर्वोक्त शिरःशूल आदि यक्ष्मा के उपद्रवों को दूर करता है।

राजयक्ष्मा में पच पचमूलादि घृत–

पञ्चानां पञ्चमूलानां रसे क्षीरचतुर्गुणे।
सिद्धं सर्पिर्जयत्येतद्यक्ष्मिणः सप्तकं बलम्।।

अर्थ : पाँच पञ्चमूलों के क्वाथ तथा घृत से चौगुना दूध में पकाया घृत राजयक्ष्मा रोगी के सातों बलों (उपद्रवों) को जीत लेता है।

राजयक्ष्मा में पञ्चकोलादि घृत–

पञ्चकोलयवक्षारषट्पलेन पचेद् घृतम्।
प्रस्थोनिमतं तुल्यपयः स्रोतसां तद्विशोधनम्।।
गुल्मज्वरोदरप्लीहग्रहणीपाण्डुपीनसान्।
श्वासकासाऽग्निसदनश्वयथूर्ध्वानिलाज्जयेत्।।

अर्थ : पञ्चकोल (पीपर, पिपरामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ) तथा यवक्षार समभाग

एक--एक पल (प्रत्येक 50 ग्राम) सम्मिलित छः पल (300 ग्राम) के कल्क के साथ दूध एक प्रस्थ (1 किलो) में घृत एक प्रस्थ (1 किलो) सिद्ध करें। यह स्रोतसों को शुद्ध करनेवाला है। इसके अतिरिक्त गुल्मरोग, ज्वर रोग, प्लीहा, वृद्धि, ग्रहणी रोग, पाण्डु रोग, पीनस रोग, श्वास, कास, मन्दाग्नि, शोथ तथा ऊर्ध्व वात को दूर करता है।

राजयक्ष्मा में रास्नादि घृत–

रास्नाबलागोक्षुरक–स्थिरावर्षाभुवारिणि।
जीवन्तीपिप्पलीगर्भ सक्षीरं शोषजिद् घृतम्।।
अश्वगन्धाश्रृतातक्षीराद् घृतं च ससितापयः।

अर्थ : रास्ना, बला, गोखरू, शालपर्णी तथा पुनर्नवा के क्वाथ में जीवन्ती तथा पीपर के कल्क के साथ दूध मिलाकर विधिवत् सिद्ध घृत शोष रोग को दूर करता है। अथवा अश्व गन्धा के क्वाथ के साथ पकाये दूध के दही से निकाला घृत शक्कर तथा दूध मिलाकर पीने से शोष रोग दूर होता है।

राजयक्ष्मा रोग में एलादि घृत रसायन–

एलाजमोदात्रिफलासौराश्ट्रीव्योषचित्रकान्।
सारानरिष्टगायत्रीशालबीजकसम्भवान्।।
भल्लातकं विडगंग च पृगिष्टपलोन्मितम्।
सलिले शोडशगुणे शोडशांशस्थिते पचेत्।।
पुनस्तेन घृतप्रस्थ सिद्धे चास्मिन् पलानि शट्।
तवक्षीर्याः क्षिपेत्त्रिशत्सिताया द्विगुंण मधु।।
घृतात्त्रिजातात्त्रिपलं ततो लीढं खजाऽऽहतम्।
पयोऽनुपानं तत्प्राह्रे रसायनमयन्त्रणम्।।
मेध्यं चक्षुष्यमायुष्यं दीपनं हन्ति चाचिरात्।
मेहगहुल्मक्षयव्याधिपाण्डुरोगभगन्दरान्।।
ये च सर्पिर्गुडाः प्रोक्ताः क्षते योज्याः क्षयेऽपि ते।

अर्थ : इलायची, अजमोद, त्रिफला (हर्रे, बहेड़ा, आँवला) फिटकिरी, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), चित्रक, नीम, खैर, शाल तथा विजयक्षार का सार, शुद्ध भल्लातक तथा वायविंडग आठ–आठ पल (प्रत्येक 400 ग्राम) लेकर जल सोलह गुना में पकावे और सोलहवाँ भाग शेष रह जाने पर छान ले और उसमें घृत एक प्रस्थ (1 किलो) विधिवत् सिद्ध करे। इसके बाद उसमें वंशलोचन छः पल (300 ग्राम), मिश्री 30 पल (1 किलो 500 ग्राम) और मधु घृत से दुगुना (1 किलो) और त्रिजात (दाल–चीनी, इलायची, तेजपात) तीन पल (150 ग्राम)

का चूर्ण इन सबों को एकत्र मथनी से मंथकर मिला लें तथा घृत सिद्ध पात्र में रख ले। इसमें से तीन पल (150 ग्राम) की मात्रा में प्रातःकाल दूध के साथ पान करें। यह रसायन बिना किसी परहेज के सेवन करे। यह रसायन मेध ावर्द्धक, नेत्र के लिये हितकर, आयुवर्द्धक तथा दीपन है और यह प्रमेह, गुल्म रोग, क्षय रोग, पाण्डु रोग तथा भगन्दर रोग को शीघ्र ही नष्ट करता है। जो जो सर्पिगुड़ क्षयज कास तथा क्षयज कास में कहे गये हैं उनका भी प्रयोग राजयक्ष्मा रोग में करें।

राजयक्ष्मा में त्वचादि चूर्ण–

त्वगेलापिप्पलीक्षीरीशर्करा द्विगुणाः क्रमात्।।
चूर्णिता भक्षिताः क्षौद्रसर्पिशा चाऽवलेहिताः।
स्वर्याः कासक्षयश्वासपार्श्वरुक्कफनाशनाः।।

अर्थ : दालचीनी एक ग्राम, इलायची दाना दो ग्राम, पीपर चार ग्राम, वंशलोचन आठ ग्राम तथा शक्कर सोलह ग्राम इन सबों को एकत्र कर चूर्ण बना ले और मधु तथा घृत के साथ चाटें। यह चूर्ण स्वर के लिये हितकर, कास, क्षय रोग, श्वास, पार्श्व शूल तथा कफ को नाश करने वाला है। इस चूर्ण का दूसरा नाम सितोपलादि है क्योंकि चरकोक्त सितोपलादि से मिलता है।

वातज स्वर भेद चिकित्सा–

विशेषात्स्वरसादेऽस्य नस्यधूमादि योजयेत्।
तत्राऽपि वातजे कोष्णं पिबेदुत्तरभक्तिकम्।।
कासमर्दकवार्ताकीमार्कवस्वरसैर्घृतम्।
साधितं कासजित्स्वर्यं सिद्धमार्तगलेन वा।।
बदरीपत्रकल्कं वा घृतभृष्टं ससैन्धवम्।
तैलं वा मधुकद्राक्षापिप्पलीकृमिनुत्फलैः।।
हंसपाद्याश्च मूलेन पक्वं नस्तो निषेचयेत्।
सुखोदकानुपानं च ससर्पिष्कं गुडौदनम्।।
अश्नीयात्पायसं चैवं स्निग्धं स्वेदं नियोजयेत्।

अर्थ : राजयक्ष्मा रोगी के स्वरसाद में सामान्य चिकित्सा का निरूपण होने पर भी विशेष कर नस्य धूमादि का प्रयोग करे। विशेष चिकित्सा में वातज स्वरसाद (स्वर क्षय) में भोजन के बाद कसौंदी, वनभण्टा तथा भृंगराज के स्वरस से विधिवत् सिद्ध घृत थोड़ा गरम–गरम पान करे। यह कास को दूर करता है तथा स्वर के लिए हितकारी है। कण्टकारी के रस से विधिवत् सिद्ध घृत पान करे। अथवा बेर की पत्ती का कल्क घी में भून कर तथा सेन्धानमक मिलाकर भक्षण करे। अथवा मुलेठी, मुनक्का, पीपर तथा वायविडगं के फल

और हंसपादी (हंस) मूल कल्क के साथ विधिवत् पकाये तैल का नस्य दे। (नाक में छोड़ें) और बाद में घी के साथ गुड़ तथा भात खाकर गरम जल पान करे। और खीर में घी मिलाकर खाय। इसके बाद कण्ठ तथा वक्षस्थल को स्निग्ध स्वेदन करे।।

पित्तज स्वर भेद चिकित्सा–

पित्तोद्भवे पिबेत्सर्पिः शृतशीतपयोऽनुपः।।
क्षीरिवृक्षाङ्कुरक्वाथकल्कसिद्धं समाक्षिकम्।
अश्नीयाच्च ससर्पिष्कं यष्टीमधुकपायसम्।।
बलाविदारिगन्धाभ्यां विदार्या मधुकेन च।
सिद्धं सलवणं सर्पिर्नस्यं स्वर्यमनुत्तमम्।।
प्रपौण्डरीकं मधुकं पिप्पली बृहती बला।
साधितं क्षीरसर्पिश्च तत्स्वर्यं नावनं परम्।।
लिह्यान्मधुरकाणां च चूर्णं मधुघृताप्लुतम्।

अर्थ : पित्तज स्वरभेद में क्षीरिवृक्ष (वरगद, गूलर, पकडी पीपर, पारिस पीपर) के तूसा का क्वाथ तथा कल्क के साथ सिद्ध घृत शहद मिलाकर पान करे और खीर में मुलेठी का चूर्ण घी मिलाकर खाय। बरियार तथा विदारी गन्ध ा या विदारी कन्द तथा मुलेठी के क्वाथ एवं कल्क से सिद्ध घृत नमक मिलाकर नस्य देने से स्वर के लिए उत्तम हितकर होता है। प्रपौण्डरीक, मुलेठी, पीपर, वनभण्टा तथा बला इनके कल्क तथा क्वाथ में दूध मिलाकर विधिवत् घृत सिद्ध करे। यह स्वर को ठीक करने वाला उत्तम नस्य है। इसके बाद शतावरी, मुलेठी आदि मधुर द्रव्यों का चूर्ण मधु तथा घृत मिलाकर चाटें।

कफज स्वर भेद चिकित्सा–

पिवेत्कटूनि मूत्रेण कफजे रूक्षभोजनः।।
कट्फलामलकव्योशं लिह्यातैलमधुप्लुतम्।
व्योषक्षाराग्निचर्विकाभार्ङीपथ्यामधूनि वा।।
यवैर्यवागूं यमके कणाधात्रीकृतां पिबेत्।
भुक्त्वाऽद्यात्पिप्पलीं शुण्ठीं तीक्ष्णं वा वमनं भजेत्।

अर्थ : कफज स्वर भेद में त्रिकुट (सोंठ, पीपर, मरिच) का चूर्ण गोमूत्र के साथ पीवे और रूखा भोजन (कोदों, साँवा, वजडी यव आदि) करे। जायफल, आँवला तथा व्योष (सोंठ पीपर, मरिच) इन सबों का चूर्ण तैल तथा मधु मिलाकर चाटें। अथवा व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), यवक्षार, चित्रक, चव्य, वमनेठी तथा हर्रे का चूर्ण मधु के साथ चाटें। अथवा घी तथा तैल में जब का यवागू बनाकर उसमें पीपर एवं आँवला का चूर्ण बनाकर पान करे। खाने के बाद पीपर तथा सोंठ का चूर्ण भक्षण करे या तीक्ष्ण वमन करे।

उच्च भाषण जन्य स्वर भेद में दुग्ध पान–

शर्कराक्षौद्रमिश्राणि शृतानि मधुरैः सह।
पिबेत्पयांसि यस्योच्चैर्वदतोऽभिहतः स्वरः।।

अर्थ : जिसका स्वर भेद उच्च भाषण से हो गया हो उसको मधुर द्रव्यों (मुलेठी, शतावरि आदि) के क्वाथ के साथ दूध पकाकर और शक्कर तथा मुधमिलाकर पान कराये।

अरोचक की सामान्य चिकित्सा–

विचित्रमन्नमरूचौ हितैरूपहितं हितम्।
बहिरन्तर्मृजा चित्तनिर्वाणं हृद्यमौषधम्।।
द्वौ कालौ दन्तधवनं भक्षयेन्मुखधावनैः।
कषायैः क्षालयेदास्यं धूमं प्रायोगिकं पिबेत्।।
तालीसचूर्णवटकाः सकर्पूरसितोपलाः।
शशाङ्ककिरणाख्याश्च भक्ष्या रूचिकरा भृशम्।।

अर्थ : भोजन की अरूचि में हितकर द्रव्यों से मिला हुआ विभिन्न प्रकार (पूड़ी, कचौडी, खीर आदि) का अन्न हितकर होता है। बाहर तथा भीतर सफाई करे, चित्त को शान्त करे, ह्रदय को बल देने वाला औषध खाय, दोनों समय तक भोजन करे, क्षीरी वृक्षों का दातून करे, कषाय द्रव्यों के क्वाथ से मुख का प्रक्षालन करे। तालीसपत्र के चूर्ण को मिश्री तथा कपूर मिलाकर तथा उसका बटी बनाकर चूसे और रूचिकारक शशाङ्ककिरण नामक भक्ष्य पदार्थ (दही बड़ा आदि) भक्षण करे।

वातज अरोचक की विशेष चिकित्सा–

वातादरोचके तत्र पिबेच्चूर्ण प्रसन्नया।
हरेणुकृष्णाकृमिजिद्–द्राक्षासैन्धवनागरात्।।
एलामार्डीयवक्षारहिङ्गुयुक्तघृतेन वा।

अर्थ : वात जन्य अरोचक में हरेणु (रेणुका), पीपर, वायविडगं, मुनक्का, सेन्धा नमक तथा सोंठ का चूर्ण मदिरा के साथ पान करे। अथवा इलायची, वमनेठी, यवक्षार तथा घृतभृष्ट हींग के चूर्ण को घी के साथ खाय।

पित्तज अरोचक की विशेष चिकित्सा–

छर्दयेद्वा वचाम्भोभिः पित्ताच्च गुडवारिभिः।।
लिह्याद्वा शर्करासर्पिर्लवणोत्तममाक्षिकम्।

अर्थ : पित्तज अरोचक में कडुआ वचके क्वाथ से या गुड़ के शर्बत से वनम

कराये और शक्कर, घी, नमक तथा मधु मिलाकर चटायें।

कफज अरोचक की विशेष चिकित्सा–

कफाद्वमेन्निम्बजलैर्दीप्यकारग्वधोदकम्।।
पानं समध्वरिष्टाश्च तीक्ष्णाः समधुमाधवाः।
पिबेच्चूर्णं च पूर्वोक्तं हरेण्वाद्युष्णवारिणा।।

अर्थ : कफज अरोचक में नीम के क्वाथ से वमन करायें और अजवायन तथा अमलतास का क्वाथ मधु मिलाकर पान करे और मुनक्का तथा महुआ का तीक्ष्ण अरिष्ट पान करे। अथवा पूर्वोक्त हरेणु आदि का चूर्ण गरम जल के साथ पान करे।

अरोचक में एलादि चूर्ण–

एलात्वङ्नागकुसुमतीक्ष्णकृष्णामहौषधम्।
भागवृद्धं क्रमाच्चूर्णं निहन्ति समशर्करम्।।
प्रसेकारूचिहृत्पार्श्वकासश्वासगलामयान्।

अर्थ : इलायची एक पल (50 ग्राम), दालचीनी दो पल (100), नागकेशर तीन पल (150 ग्राम), मरिच चाल पल (200 ग्राम), पीपर पाँच पल (250 ग्राम) तथा सोंठ छः पल (300 ग्राम) इन सबों के चूर्ण में सभी चूर्ण के समान मिश्री मिलाकर रख ले। यह चूर्ण लाल, स्राव, अरूचि, हृदय रोग, पार्श्व शूल, कास, श्वास तथा गला के रोग को नष्ट करता है।

अरोचक में यवानी खाण्डव चूर्ण–

यवानीतित्तिडीकाम्लवेतसौशधदाडिमम्।।
कृत्वा कोलं च कर्षांशं सितायाश्च चतुष्पलम्।
धान्यसौवर्चलाजाजीवराङ्गं चार्धकार्षिकम्।।
पिप्पलीनां शतं चैकं द्वे शते मरिचस्य च।
चूर्णमेतत्परं रूच्यं ग्राहि हृद्यं हिनस्ति च।।
विबन्धकासहत्पार्श्वप्लीहार्शोग्रहणीगदान्।

अर्थ : अजवायन, तिन्तिडीक (इमली), अम्लवेत, सोंठ, अनारदाना तथा बैर समभाग एक–एक कर्ष (प्रत्येक 10 ग्राम), मिश्री चार पल (200 ग्राम), धनियाँ, सौवर्चल नमक, लावा, ज़ीरा तथा दालचीनी आधा–आधा कर्ष (प्रत्येक 5 ग्राम) पीपर, एक सौ नग तथा मरिच 200 नग इन सबों का चूर्ण बनाकर अरोचक में प्रयोग करे। यह चूर्ण उत्तम रूचिकारक, ग्राही तथा हृद्य है और यह विबन्ध, कास, हृदय रोग, पार्श्व क्षूल, प्लीहा, अर्श तथा ग्रहणी रोग को नष्ट करता है।

तालीसादिचूर्णम्।

अरोचक में तालीसादि चूर्ण–

तालीसपत्रं मरिचं नागरं पिप्पली कणा।।
यथोत्तरं भागवृद्धया त्वगेले चार्धभागिके।
तद्रुच्यं दीपनं चूर्ण कणाऽष्टगुणशर्करम्।।
कासश्वासारूचिच्छर्दिप्लीहहृत्पार्श्वशूलनुत्।
पाण्डुज्वरातिसारघ्नं मूढवातानुलोमनम्।।

अर्थ : तालीस पत्र एक पल (50 ग्राम), मरिच दो पल (10 ग्राम) सोंठ तीन पल (150 ग्राम), पीपर चार पल (200 ग्राम), दालचीनी आधा पल (25 ग्राम) तथा इलायची आधा पल (25 ग्राम) और मिश्री पीपर के आठ गुना (1 किलो 600 ग्राम) इन सबोंका चूर्ण बना लें। यह चूर्ण रूचिकारक तथा जाठराग्नि दीपक है और कास, श्वास, अरूचि, वमन, प्लीहा वृद्धि, हृदयशूल, पार्श्वशूल, पाण्डु, ज्वर तथा अतिसार को नष्ट करता है और मूढ़ बात काअनुलोमन करता है।

प्रसेक (मुख में पानी भरने) की चिकित्सा–
अर्कामृताक्षारजले शर्वरीमुषितैर्यवैः।
प्रसेके कल्पितान्सक्तून् भक्ष्यांश्चाद्याद्बली वमेत्।।
कटुतिक्तैस्तथा शूल्यं भक्षयेज्जागलं पलम्।
शुष्कांश्च भक्ष्यान् सुलघूंश्चणकादिरसानुपः।।

अर्थ : मदार तथा गुडूची के क्षारीय जल में एक रात यव को रखकर उसका सत्तू बनावे और बलवान रोगी मुख में पानी आने पर उस सत्तू को खाय और वमन करे।

प्रसेक का लक्षण–
श्लेष्मणोऽतिप्रसेकेन वायुः श्लेष्माणमस्यति।
कफप्रसेकं तं विद्वान्स्निग्धोष्णैरेव निर्जयेत्।।

अर्थ : कफ के अधिक निकलने से वायु बढ़कर कफ को बाहर निकालता है। इसको प्रसेक या कफ प्रसेक कहते हैं। इसको विद्वान चिकित्सक स्निग्ध तथा उष्ण उपचार से दूर करे।

पीनस की सामान्य चिकित्सा–
विशेषात्पीनसेऽभ्यङांन् स्नेहस्वेदांश्च शीलयेत्।।
स्निग्धानुत्कारिकापिण्डैः शिरःपार्श्वगलादिशु।
लवणाम्लकटूष्णांश्च रसान् स्नेहोपसंहितान्।।

अर्थ : विशेषकर पीनस रोग में विभिन्न प्रकार के स्निग्ध अभ्यंग, स्नेहन तथा स्वेदन, सिर, पार्श्व तथा गला में उत्कारिक (उलटा–पपड़ा) तथा पिण्डों से करे और स्नेह से युक्त लवण, अम्ल तथा कटु द्रव्य का सेवन करे।

राजयक्ष्मा के विविध उपद्रवों की चिकित्सा–

शिरोंऽसपार्श्वशूलेषु यथादोषविधि चरेत्।
औदकानूपपिशितैरूपनाहाः सुसंस्कृताः।।
तत्रेष्टाः सचतुःस्नेहा दोषसंसर्ग इष्यते।
प्रलेपो नतयष्टयाह्व–शताह्वाकुष्ठचन्दनैः।।
बलारास्नातिलैस्तद्वत्ससर्पिर्मधुकोत्पलैः।
पुनर्नवाकृष्णगन्धाबलावीराविदारिभिः।।
नावनं धूमपानानि स्नेहाश्चौत्तरभक्तिकाः।
तैलान्ययगयोगीनि वस्तिकर्म तथा परम्।।
शृङ्गाद्यैर्वायथादोषं दुष्टमेषां हरेदसृक्।
प्रदेहः सघृतैः श्रेष्ठः पद्मकोशीरचन्दनैः।।
दूर्वामधुकमञ्जिष्ठाकेसरैर्वा घृतप्लुतैः।
वटादिसिद्धतैलेन शतधौतेनसर्पिषा।।
अभ्यग पयसा सेकः शस्तश्च मधुकाम्बुना।

अर्थ : राजयक्ष्मा में सिर, अंत प्रदेश पार्श्व प्रदेश में शूल होने पर दोषानुसार चिकित्सा करे। यहाँ पर चारों प्रकार के स्नेह (घृत, तैल, वसा, मज्जा) का प्रयोग अभीष्ट है। दोषों के संसर्ग होने पर तगर, मुलेठी, सोया, कूट तथा चन्दन लेप करे। अथवा बला, रास्ना, तिल, मुलेठी तथा कमल को पीसकर तथा घी में मिलाकर लेप करे। अथवा पुनर्नवा कृष्णगन्धा (सहिजन) बला, शतावर तथा विदारी कन्द इन सबों का लेप करे। नस्य कर्म, भोजन के बाद स्नेह पान, अभ्यगं के योग्य नारायण आदि तैल का प्रयोग तथा वस्ति कर्म करे। पीनस आदि में यदि रक्त दूषित हो गया हो तो सींघी जलौका पातन आदिके द्वारा रक्त का निर्हरण करे। पद्मकाठ, केशर तथा चन्दन को पीसकर घृत के साथ लेप करना श्रेष्ठ है। अथवा दूर्बा, मुलेठी, मंजीठ तथा केशर के चूर्ण को घृत में मिलाकर प्रलेप करना श्रेष्ठ है। अथवा वट आदि पच्च क्षीरी वृक्षों के कल्क तथा क्वाथ से सिद्ध तैल से या शतधौत घृत से, अभ्यगं दूध से या मुलेठी के कषाय से सेवन करना प्रशस्त है।

राजयक्ष्मा में अतसारकी चिकित्सा–

प्रायेणोपहताग्नित्वात्सपिच्छमतिसार्यते।।
तस्यातिसारग्रहणीविहितं हितमौषधम्।

अर्थ : राजयक्ष्मा में मन्दाग्नि हो जाने से प्रायः पिच्छ़युक्त अतिसार हो जाता है। अतः उसमें अतिसार तथा ग्रहणी में हितकर औषध का प्रयोग करे।

राजयक्ष्मा में पुरीश रक्षण की आवश्यकता—

पुरीशं यत्नतो रक्षेच्छुश्यतो राजयक्ष्मिणः।।
सर्वधातुक्षयार्तस्य बलं तस्यहि विड्बलम्।

अर्थ : सूखते हुए राजयक्ष्मा के रोगी के पुरीष की रक्षा यत्न पूर्वक करना चाहिए। क्योंकि सभी धातुओं के क्षीण हो जाने से पीडित राजयक्ष्मा के रोगी का केवल पुरीष ही बल होता है।

यक्ष्मा से बचने के उपाय—

मांसमेवाश्नतो युक्त्या मार्द्वीकं पिबतोऽनु च।।
अविधारितवेगस्य यक्ष्मा न लभतेऽन्तरम्।

अर्थ : मुनक्का का आसव पीने और मूत्र पुरीषादि का वेग न धारण करने से व्यक्ति के शरीर में राजयक्ष्मा का रोग नहीं होता है।

राजयक्ष्मा में सेवनीय विधि—

सुरां समण्डां मार्द्वीकमरिष्टान् सीधुमाधवन्।।
यथार्हमनुपानार्थे पिबेन्मांसानि भक्षयन्।
स्रोतोविबन्धमोक्षार्थं बलौजःपुष्टये च तत्।।

अर्थ : स्रोतो विबन्ध से मुक्त होने तथा बल एवं ओज की पुष्टि के लिये मण्ड के साथ सुरा, मुनक्का का मद्य, अरिष्ट, सीधु तथा माधवासव (महुआ का शराब) पान करे।

राजयक्ष्मा में अवगाहन मर्दन तथा उद्वर्तन—

स्नेहक्षीराम्बुकोष्ठेषु स्वभ्यक्तमवगाहयेत्।
उत्तीर्णं मिश्रकैः स्नेहैर्भूयोऽभ्यक्तं मुखैः करैः।।
मृद्गीयात्सुखमासीनं सुखं चोद्वर्तयेत्परम्।

अर्थ : राजयक्ष्मा के रोगी को तैल मर्दन के बाद तैल, दूध तथा थोड़ा उष्ण जल के टब में अबगाहन कराये और निकलने के बाद मिश्रक स्नेह से अभ्यगं कर सुखकर हल्के हाथ से मर्दन करे और मर्दन के बाद सुख पूर्वक बैठे हुए रोगी को सुखकारक उद्वर्तन करे।

राजयक्ष्मा में उद्वर्तन योग—

जीवन्तीं शतवीर्यां च विकसां सपुनर्नवाम्।।
अश्वगन्धामपामार्ग तर्कारी मधुकं बलाम्।
विदारी सर्षपान् कुष्ठं तण्डुलानतसीफलम्।।
माशांसितलांश्च किण्वं च सर्वमेकत्र चूर्णयेत्।
यवचूर्णं त्रिगुणितं दध्ना युक्तं समाक्षिकम्।।
एतदुद्वर्तनं कार्यं पुष्टिवर्णबलप्रदम्।

अर्थ : जीवन्ती, शतावरि, मजीठ, पुनर्नवा, अश्वगन्धा, अपामार्ग, अरणी, मुलेठी, बला, विदारी कन्द, सरसों, कूट चावल अलसी, माष, तिल तथा किण्व (खली) समभाग इन सबों को एकत्र कूट कर चूर्ण बनावे और इस चूर्ण के तीन गुना यव का चूर्ण मिलाकर दही तथा घृत के साथ उद्वर्तन (उबटन) तैयार कर ले तथा इसका उबटन राजयक्ष्मा के रोगी को लगावे। यह पुष्टि, वर्ण तथा बलको बढ़ाने वाला है।

विश्लेषण : राजयक्ष्मा रोगी को पीले सरसों के उवटन से उवटन लगाकर स्नान करने योग्य खस आदि औषधियों के योग से सिद्ध जल से या ऋतु के अनुसार शीत या उष्ण जल से अथवा जीवनीयगण की औषधियों से सिद्ध जल से स्नान कराये।

राजयक्ष्मा में गन्ध–माला धारण का विधान–

गन्धमालयादिकैर्भूशामलक्ष्मीनाशनी भजेत्।।
सुहृदां दर्शनं गीतवादित्रोत्सवसंश्रुतिः।

अर्थ : स्नान के बाद सुगन्धित इत्र तथा सुगन्धित पुष्प की माला स्वच्छ वस्त्र आदि से सिंगार करना अशोभा को नाश करने वाली है। इसके बाद मित्रों का दर्शन गीत, वाद्य आदि उत्सव स्तोत्र का पाठ करना चाहिए।

राजयक्ष्मा में अन्य उपचार–

बस्तयः क्षीरसर्पींषि मद्यं मांसं सुशीलता।
दैवव्यपाश्रयं तत्तदथर्वोक्तं च पूजितम्।।

अर्थ : राजयक्ष्मामें बलवर्द्धक वस्तिका प्रयोग दूध, घी, सदाचार, बलि, मंगल होम तथा जप आदि दैवव्यपाश्रय चिकितसा अथा अथर्व वेदोक्त यज्ञ यागादि कर्म का अनुष्ठान उत्तम होता है।

□□□□□

शष्ठम् अध्याय

अथाऽतश्छर्दिहृद्रोगतृष्णाचिकित्सितं व्याख्यास्यामः
इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः।।

अर्थ : राजयक्ष्मा आदि चिकित्सा व्याख्यान के बाद छर्दि, हृद्रोग ता तृष्णा चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

छर्दि रोग की सामान्य चिकित्सा–
आमाशयोत्क्लेशभवाः प्रायश्छर्द्यो हितं ततः।
लघनं प्रागृते वायोर्वमनं तत्र योजयेत्।।
बलिनो बहुदोषस्य वमतः प्रततं बहु।
ततो विरेकं क्रमशो हृद्यं मद्यैः फलाम्बुभिः।।
क्षीरैर्वासह, स हयूर्ध्व गतं दोशं नयत्यघः।
शमनं चौषधं रूक्षदुर्बलस्य तदेव तु।।
परिशुष्कं प्रियं सात्म्यमन्नं लघु च भास्यते।
उपवासस्तथा यूषा रसाः काम्बलिकाः खलाः।।
शाकानि लेहभोज्यानि रागखाण्डवपानकाः।
भक्ष्याः शुष्का विचित्राश्च फलानि स्नानघर्षणम्।।
गन्धाः सुगन्धयो गन्धफलपुष्पान्नपानजाः।
भुक्तमात्रस्य सहसा मुखे शीताम्बुसेचनम्।।

अर्थ : प्रायः सभी प्रकार छर्दि रोग में आमाशय में एकत्रित दोष उभड़कर ऊपर आते हैं तो वमन होता है। अतः आमाशय की शुद्धि के लिए तथा दोषों के पाचन के लिए उपवास कराना चाहिए, किन्तु वात प्रधान छर्दि रोग में उपवास नहीं कराना चाहिए। बलवान् अधिक दोष वाले लगातार वमन करते हुए रोगी को वमन कराना चाहिए। वमन के बाद क्रमशः हृदय को बल देनेवाले मद्य, मुनक्का आदि फलों के रस अवथा दूध के साथ विरेचन देना चाहिए। वह विरेचन ऊर्ध्वगत दोषों को नीचे ले जाता है। रूक्ष प्रकृति वाले तथा दुर्बल व्यक्तियों को उसी पूर्वोक्त फल आदि शमन औषध, शुष्क, रूचिकर, सात्म्य तथा हल्का अन्न हितकर होता है। छर्दि रोग मे उपवास यूष, काम्बलिक, खल, शाक, लेह्य पदार्थ, भोज्य पदार्थ, राग, खडव, पानक, शुष्क भक्ष्य पदार्थ (भून चना आदि) विभिन्न प्रकार का फल, स्नान, घर्षण (उवटन मर्दन आदि), अभिष्ट गन्ध, सुगन्धित गन्ध, फल, पुष्प, अन्न तथा पान प्रशस्त

होते हैं। भोजन के बाद सहसा मुख पर शीतल जल का सेचन हितकर है। **विश्लेषण :** सभी वमन रोगों में आमाशय की विकृति होती है। जब दोष उभडकर ऊपर आते हैं तो मुख के द्वारा निकलने लगते हैं ऐसी अवसथा में रोगी को उपवास कराना चाहिए और रूखा अन्न तथा फल का रस देना चाहिए। जब इससे शन्ति न मिले लगातार वमन होता रहे, रोगी बलिष्ठ हो तो व्याधि विपरीतार्थकारी वमन रोग में वमन का प्रयोग करना चाहिए। इससे आमाशय में संचित दोष वेग से बाहर निकल आते हैं और वमन शान्त हो जाता है। यदि इससे भी वमन थोड़ा होता हो तो विरेचन देना चाहिए। इससे स्रोतसों का मुख तथा दोष अधः (नीचे) चले जातो हैं। यह किसी अन्य कारण से उत्पन्न वमन की चिकित्सा नहीं है किन्तु स्वतन्त्र वमन हो तो उसकी चिकित्सा है।

वातज छर्दि की चिकित्सा–

हन्ति मारूतजां छर्दिं सर्पिः पीतं ससैन्धवम्।
किंचिदुष्णं विशेषेण सकासहृदयद्रवाम्।।
व्योशत्रिलवणाढयं वा सिद्धं वा दाडिमाम्बुना।
सशुण्ठीदधिधान्येन शृतं तुल्याम्बु वा पयः।।
व्यक्तसैन्धवसर्पिर्वा फलाम्लो वैष्किरो रसः।
स्निग्धं च भोजनं शुण्ठीदधिदाडिमसाधितम्।।
कोष्णं सलवणं चात्र हितं स्नेहविरेचनम्।

अर्थ : सेन्धा नमक मिलाकर थोड़ा गरम घृत पीने से वातज छर्दि तथा विशेषकर कास तथा हृदय में घबड़ाहट उत्पन्न करने वाली छर्दि को नष्ट करता है। अथवा व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) तथा त्रिलवण (सेन्धा, सौर्वचल, साभर) मिला हुआ घृत पूर्ण मात्रा में पीने से वातज छर्दि को नष्ट करता है। अथवा सोंठ, दही तथा धनियाँ मिलाकर पकाया हुआ जल अथवा बराबर जल मिलाकर पकाया हुआ दूध अधिक सेन्धा नमक मिला घृत, अम्ल फल रस, सोंठ, दही तथा अनार के रस से सिद्ध थोड़ा गरम, सेन्धा नमक मिला हुआ तथा स्निग्ध भोजन हितकर होता है और इस वातज छर्दि में एरण्ड आदि तैल का स्निग्ध विरेचन हितकर है।

पित्तज छर्दि की चिकित्सा–

पित्तजायां विरेकार्थे द्राक्षेक्षुस्वरसैस्त्रिवृत्।।
सर्पिर्वा तैल्वकं यौजयं वृद्धं च श्लेष्म–धामगम्।
ऊर्ध्वमेव हरेत् पित्त स्वादुतिक्तैर्विशुद्धिमान्।।
पिबेन्मन्थं यवागूं वा लाजैः समधुशर्कराम्।
मुद्गजाङ्लजैरद्याद्व्यज्जनैःशालिषष्टिकम्।।
मृद्भृष्टलोष्टप्रभवं सुशीतं सलिलं पिबेत्।

मुद्गोशीरकणाधान्यैः सह वा संस्थितं निशाम्।।
द्राक्षारसं रसं वेक्षोर्गुडूच्यम्बुपयोऽपि वा।

अर्थ : पित्तज छर्दि में विरेचन के लिए मुनक्का का रस तथा गन्ना के रस के साथ निशोथ का चूर्ण तथा तैल्वक घृत का प्रयोग करे। बढ़ा हुआ पित्त यदि कफ के स्थान में गया हो तो स्वादु तथा तिक्त रस से युक्त वमन कारक द्रव्यों से वमन करायें। इसके बाद वमन विरेचन से शुद्ध पित्तज छर्दि का रोगी धान की लावा से बना मन्थ या यवागू को मधु तथा शक्कर मिलाकर पान करे। मूँग का यूष तथा व्यजंन शाक आदि के साथ जड़हन तथा साठी धान के चावल का भात खाय और आग में पके मिट्टी के ढ़ेले का बुझाया हुआ शीतल जल पीवे। अथवा मूँग, खस, धनियाँ तथा पीपर मिलाकर घड़ा में रात भर का रखा हुआ जल पान करे। अथवा मुनक्का का रस या गन्ना का रस गुडूची का रस अथवा दूध पान करे।

पित्तज छर्दि में जम्ब्वादि क्वाथ–

जम्ब्वाम्रपल्लवोशीरवटशुङ्गावरोहजः।।
क्वाथः क्षौद्रयुतः पीतः शीतो वा विनियच्छति।
छर्दि ज्वरमतीसारं मूर्च्छा तृष्णां च दुर्जयाम्।।

अर्थ : जामुन तथा आम के कोमल पल्लव, खस, वट का टूसा तथा वरोही इन सबों का क्वाथ या शीत कषाय या स्वरस मधु मिलाकर पीने से वमन, ज्वर, अतिसार, मूर्च्छा तथा भयंकर प्यास को दूर करता है।

पित्तज छर्दि में अन्य योग–

धात्रीरसेन वा शीतं पिबेन्मुद्गदलाम्बु वा।
कोलमज्जसितालाजमक्षिकाविट्कणाज्जनम्।।
लिह्यात्क्षौद्रेण पथ्यां वा द्राक्षां वा बदराणि वा।

अर्थ : अथवा पित्तज छर्दि में आँवला के रस के साथ शीतल जल या मूँग के पत्तों का जल आँवला के रस के साथ पान करे अथवा बेर की मज्जा, मिश्री, लाबा, मधुमक्खी का पुरीष, पीपर तथा रसाज्जन समभाग इस सबों के चूर्ण को मधु के साथ चाटें या हर्रे का चूर्ण मधु के साथ या मुनक्का का रस मधु के साथ या बेर का चूर्ण मधु के साथ चाटें।

कफज छर्दि की चिकित्सा

कफजायां वमेन्निम्बकृष्णापीडितसर्शसैः।।
युक्तेन कोशणतोयेन दुर्बलं चोपवासयेत्।
आरग्वधादिनिर्यूहं श्ज्ञीतं क्षौद्रयुत पिबेत्।।
मन्थान् यवैर्वा बहुशश्छर्दिघ्नौषधमावितैः।
कफघ्नन्न हृद्यं च रागाः सार्जकभूस्तृणाः।।

लीढं मनःशिलाकृष्णामरिचं बीजपूरकात्।
स्वरसेन कपित्थाच्च सक्षौद्रेण वर्मि जयेत्।।
खादेत्कपित्थं सव्योषं मधुना वा दुरालभाम्।

अर्थ : कफज छ़र्दि में यदि बलवान् रोगी हो तो नींम, पीपर, पीडित (मदन फल) तथा सरसों के कल्क में थोड़ा गरम जल मिलाकर वमन कराये। यदि रोगी दुर्बल हो तो उपवास कराये। आरग्वबधादि गण के शीतल क्वाथ में मधु मिलाकर पान कराये। अथवा अनेक छर्दि नाशक औषधों से भावित यव के सत्तू का मन्थ पिलाये। ह्रदय के लिये हितकारी कफ नाशक अन्न खिलाये। काली तुलसी तथा सुगन्धित तृण का राग (चटनी) खिलावे। शुद्ध मैनसील, पीपर तथा मरिच का चूर्ण बिजौरा नींबू के रस या कैथे के रस के साथ शहद मिलाकर चाटने से वमन को दूर करता है। अथवा कपित्थ के गूदा को व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) का चूर्ण मिलाकर शहद के साथ खिलायें। अथवा यवासा के चूर्ण को शहद के साथ खिलाये।

विभिन्न छर्दियों का चिकित्सा संकेत–

अनुकूलोपचारेण याति द्विष्टार्थजा शमम्।।
कृमिजा कृमिहृद्रोगगदितैश्च भिषग्जितैः।
यथास्वं परिशेषाश्च तत्कृताश्च तथामयाः।।

अर्थ : दिष्ट (अप्रिय) शद्वादि से या अप्रिय भोजन से उत्पन्न छर्दि अनुकूल शब्दादि तथा भोजन से शान्त हो जाती है। कृमिज छर्दि कृमि रोग तथा हृद रोग में कहे गये औषधों से शान्त हो जाती है। अन्य विसूचिकादि जन्य छर्दि तत्तत् मूल रोग शामक औषधों से शान्त हो जाती है।

छ़र्दि में वात प्रकोप की चिकित्सा–

छर्दिप्रसङ्गेन हि मातरिश्वा।
धातुक्षयात्कापमुपैत्यवश्यम्।।
कुर्यादतोऽस्मिन् वमनातियोग–
प्रोक्तं विधिं स्तम्भनबृंहणीयम्।।
सर्पिर्गुडा मांसरसा घृतानि।
कल्याणक–त्र्यूषण–जीवनानि।
पयांसि पथ्योपहितानि लेहा–
श्छर्दि प्रसक्तां प्रशमं नयन्ति।।

अर्थ : छर्दि रोग उत्पन्न होने पर धातुओं के क्षय होने से वायु अवश्य ही प्रकुपित हो जाता है। अतः उसमें वम नाति योग प्रकरण में कहे गये स्तम्भन तथा बृंहण चिकित्सा विधि को कहा गया है। कास तथा राजयक्ष्मा प्रकरण

में कहे गये जीवनादि–घृत, कल्याणक घृत, आयुष्य घृत हितकर योगों से सिद्ध दूध तथा लेह योग छर्दि जन्य वात के उपद्रव को शान्त करते हैं।

वातज हृद्रोग में तैल का प्रयोग–

हृद्रोगचिकित्सा।

हृद्रोगे वातजे तैलं मस्तुसौबीरतक्रवत्।
पिबेत्सुखोष्णं सबिडं गुल्मानाहार्तिजिच्च तत्।।
तैलं च लवणैः सिद्धं समूत्राम्लं तथागुणम्।

अर्थ : वातज हृद रोग में, मसतु (दही का पानी), कांज्जी या मट्ठा मिलाकर तथा थोड़ा गरम कर पान करे। यदि तैल में विडनमक मिलाकर पान करे तो गुल्म तथा आनाह रोग को दूर करता है। पच्च लवण से सिद्ध तैल में गोमूत्र तथा कांज्जी मिलाकर पान करे तो हृद् रोग आदि को नष्ट करता है।

हृदयरोग में बिल्वादि तैल–

बिल्वं रास्नां यवान्कोलं देवदारूं पुनर्नवाम्।।
कुलत्थान्पच्चमूलं च पक्त्वा तस्मिन्पचेज्जले।
तैलं तन्नावनेपाने बस्तौ च विनियोजयेत्।।

अर्थ : बेल, रास्ना, यव, कोल, खैर, देवदारू, पुनर्नवा, कुरथी, लघुपच्चमूल, सरिवन, पिठवन, वनभण्टा, कटेरी तथा गोखरू समभाग इन सबों का क्वाथ बनावे और उस क्वाथ में विधिवत् तैल सिद्ध करे। इस तैल को हृदयरोग में नस्य, पान तथा वस्ति कर्म में प्रयोग करे।

हृदयरोग में शुंठ्यादि घृत–

शुण्ठी–वयस्था–लवण–कायस्था–हिङ्गु–पौष्करैः।
पथ्यया च शृतं पार्श्वहृद्रुजागुल्मजितद् घृतम्।।

अर्थ : सोंठ, शतावरि, सेन्धा नमक, कायस्था (काकेली), हींग, पुष्कर मूल तथा हर्रे समभाग इन सबों के कल्क तथा क्वाथ से विधिवत् सिद्ध घृत पार्श्व शूल, हृदय रोग तथा गुल्म रोग को दूर करता है।

हृदयरोग में सौवर्चलादि घृत–

सौवर्चलस्य द्विपले पथ्यापच्चाशदन्विते।
घृतस्य साधितः प्रस्थो हृद्रोगश्वासगुल्मजित्।।

अर्थ : सौर्वचल नमक दो पल (100 ग्राम) तथा हर्रे पच्चास नग का कल्क तथा घृत एक प्रस्थ (1 किलो) लेकर विधिवत् घृत सिद्ध करे। यह घृत हृदय रोग, श्वास तथा गुल्म रोग को दूर करता है।

हृदय रोग में पुष्करमूलादि कल्क तथा क्वाथ–

पुष्कराह्व–शठी–शुण्ठी बीजपूर–जटाऽभयाः।
पीताः कल्कीकृताः क्षारघृताम्ललवणैर्युताः।।
विकर्तिकाशूलहराः क्वाथः कोष्णश्च तद्गुणः।

अर्थ : पुष्कर मूल, कचूर, सोंठ, बिजौरा नींबू की जड़ तथा हर्रे समभाग इन सबों का कल्क बनाकर तथा यवक्षार, घृत, अम्ल रस (खट्टे अनार आदि) तथा सेन्धा नमक मिलाकर पीने से हृदय में कैंची के समान काटने की पीड़ा तथा शूल को दूर करता है। इसी प्रकार पूर्वोक्त द्रव्यों का थोड़ा गरम क्वाथ पूर्वोक्त यवक्षार–घृत आदि के साथ पीने से विकर्तिक तथा हृदय शूलको नाश करता है।

हृद् रोग में यवान्यादि कल्क–

यवानीलवणक्षारवचाऽजाज्यौषधैः कृतः।।
सपूतिदारूबीजाह्वविजयाशठिपौष्करैः।
पच्चकोलशठीपथ्यागुडबीजाह्वपौष्करम्।।
वारूणीकल्कितं भृष्टं यमके लवणान्वितम्।
हृत्पार्श्वयोनिशूलेषु खादेद् गुल्मोदरेषु च।।
स्निग्धाश्चेह हिताः स्वेदाः संस्कृतानि घृतानि च।

अर्थ : अजवायन, सेन्धानमक, यवक्षार, वच, जीरा तथा सोंठ समभाग इन सबों का कल्क या पूतिकरंज्ज, देवदारू, विजयसार, हर्रे, कचूर तथा पुष्करमूल समभाग इन सबों का कल्क अथवा पच्चकोल, (पीपर, पिपरा मूल, चव्य, चित्रक तथा सोंठ), कचूर, हर्रे, गुड़, विजयसार तथा पुष्करमूल समभाग इन सबों का मद्य के साथ बनाया कल्क तैल तथा घी में भून कर और सेन्धा नमक मिलाकर हृदयशूल, पार्श्वशूल, योनिशूल, गुल्म रोग तथा उदर रोग में खायें। इस वातज हृद्रोग में स्निग्ध ा स्वेदन तथा वात शामक औषधों से संसकृत घृत हितकर होता है।

हृदयरोग जन्य तृशा में लघुपच्चमूलादि जल–

लघुना पच्चमूलेन शुण्ठया वा साधितं जलम्।।
वारूणीदधिमण्डं वा धान्याम्लं वा पिबेत्तृषि।

अर्थ : हृद्रोग जन्य प्यास में लघु पच्चमूल (सरिवन, पिठवन, भटकटैया, वनभण्टा तथा गोखरू) मिलाकर पकाया जल या सोंठ मिलाकर पकाया जल या वारूणी तथा दही का पानी या कांज्जी पिलाये।

वातज हृदय रोग में विविध योग–

सायामस्तम्भशूलाभे हृदि मारूतदूषिते।।
क्रियैषा सद्रवायामप्रमोहे तु हिता रसाः।
स्नेहाद्यास्तित्तिरिक्रौज्चशिखितवर्तकदक्षजाः।।
बलातैलं सहृद्रोगः पिबेद्वा सुकुमारकम्।

यष्टयाह्वशतपाकं वा महास्नेहं तथोत्तमम्।।

अर्थ : वात प्रकोप से उत्पन्न तनाव, जकड़न शूल, घबडाहट तथा मोह युक्त हृदय रोग में पूर्वोक्त चिकित्सा, स्नेह पान आदि हितकर है। हृदय रोग से पीड़ित व्यक्ति बलातैल या सुकुमारक तैल या यष्ट्याहव शतपाक तैल या उत्तम महा स्नेह पान करे।

वातज हृदयरोग में रास्नादि महा स्नेह–

रास्नाजीवकजीवन्तीबलाव्याघ्रीपुनर्नवैः।
भार्गीस्थिरावचाव्योषैर्महास्नेहं विपाचयेत्।।
दधिपादं तथाम्लैश्च लाभतः स निषेवितः।
तर्पणो बृंहणो बल्यो वातहृद्रोगनाशनः।।

अर्थ : रास्ना, जीवक, जीवन्ती, बरियार, कण्टकारी, पुनर्नवा, वमनेठी, शतावरी, वच तथा व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क के साथ महास्नेह (घृत, तैल, वसा, मज्जा), महा स्नेह के चौथाई दही तथा यथोपलब्ध अम्ल वर्ग के कल्क मिलाकर पकावे। यह सेवन करने से तृप्ति कारक बृंहण, बल्य तथा वातज हृदय रोग का नाश करता है। हृदय रोग में पथ्य तथा निषेध–

दीप्तेऽग्नौ सद्रवायामे हृद्रोगे वातिके हितम्।
क्षीरं दधि गुडः सर्पिरौदकानूपमामिषम्।।
एतान्येव च वर्ज्यानि हृद्रोगेषु चतुर्ष्वपि।
शेषेषु स्तम्भजाडयामसंयुक्तेऽपि च वातिके।।
कफानुबन्धे तस्मिंस्तु रूक्षोष्णामाचरेत्क्रियाम्।

अर्थ : जाठराग्नि के प्रदीप्त रहने पर घबड़ाहट तनाव से युक्त वातिक हृदय रोग में दूध , दही, गुड़, घृत हितकर होता है। किन्तु ये सब पित्तज, कफज, सन्निपातज तथा क्रिमिज चारों प्रकार के हृदय रोग में निषिद्ध हैं। यदि वातिक हृदय रोग में भी जकड़न, जड़ता तथा आम दोष हो तो पूर्वोक्त पदार्थों को नहीं देना चाहिए। कफानुबन्धी वातज हृदय रोग में रूक्ष तथा उष्ण आहार विहार का प्रयोग करना चाहिए।

पित्तज हृद्रोग की चिकित्सा–

पैत्ते द्राक्षेक्षुनिर्यासंसिताक्षौद्रपरूषकैः।।
युक्ता विरेको हृद्यः स्यात् क्रमः शुद्धेच पित्तहा।
क्षतपित्तज्वरोक्तं च बाह्यान्तः परिमार्जनम्।।
कट्वीमधुककल्कं च पिबेत्ससितमम्भसा।

अर्थ : पैत्तिक हृदयरोग में मुनक्का तथा गन्ने का रस, मिश्री, शहद, फालसा इन सबों से हृद्यविरेचन दे और शुद्ध होने के बाद पित्त नाशक क्रम (पेया आदि

सौम्य आहार–विहार) का प्रयोग करे। क्षतज कास तथा पित्तज्वर में कहे गये बाह्य तथा आभ्यन्तर शुद्धि करे और कुटकी तथा मुलेठी का कल्क मिश्री मिलाकर जल से पान करे।

पैतिक हृद्रोग में श्रेयस्यादि घृत–

श्रेयसीशर्कराद्राक्षाजीबकर्षमकोत्पलैः।।
बलाखर्जूरकाकोलीमेदायुग्मैश्च साधितम्।
सक्षीरं माहिषं सर्पिः पित्तहृद्रोगनाशनम्।।

अर्थ : गजपीपर, शक्कर, मुनक्का, जीवक, ऋषभक, नीलकमल, बला, खजूर, काकोली, मेदा तथा महामेदा समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क के साथ समभाग दूध मिलाकर विधिवत् दूध सिद्ध करे। यह पित्तज हृद्रोग को नाश करता है।

पित्तज हृद्रोग में प्रणौण्डरीकादि घृत तथा तैल–

प्रपौण्डरीकमधुकनिम्बग्रन्थिकसेरूकाः।
सशुण्ठीशैवलास्ताभिः सक्षीरं विपचेद् घृतम्।।
शीतं समधु तच्चेष्टं स्वादुवर्गकृतं च यत्।
बस्तिं च दद्यात्सक्षौद्रं तैलं मधुकसाधितम्।

अर्थ : पित्तज हृद्रोग में प्रपौण्डरीक (पुण्डेरिया), मुलेठी, नीम, पिपरामूल, कसेरू, सोंठ तथा सेवाल समभाग इन सबों के क्वाथ तथा कल्क के साथ समभाग दूध मिलाकर विधिवत् घृत सिद्ध करे और शीतल कर तथा मधु मिलाकर प्रयोग करे अथवा स्वादु वर्ग के द्रव्यों से विधिवत् सिद्ध घृत का प्रयोग करे। मुलेठी से सिद्ध तैल में मधु मिलाकर वस्तिकर्म में प्रयोग करे।

कफज हृद्रोग की चिकित्सा–

कफोद्भवे वमेत्स्विन्नः पिचुमन्द–वचाम्बुना।
कुलत्थधन्वोत्थरसतीक्ष्णमद्यवयवाशनः।।

अर्थ : कफज हृद्रोग में स्वेदन करने के बाद नीम तथा कडुआ वच के क्वाथ को पीकर वमन करे। वमन के बाद कुरथी का यूष के साथ यव की रोटी खाकर पान करे।

कफज हृद्रोग में वचादि चूर्ण–

पिबेच्चूर्णं वचाहिङ्गुलवणद्वयनागरात्।
सैला–यवानीक–कणा–यवक्षारात् सुखाम्बुना।।
फलाधान्याम्लकौलत्थ–यूशमूत्रासवैस्तथा।
पुष्कराह्वाभयाशुण्ठीशठीरास्नावचाकणाः।।

अर्थ : वच, हींग, सेन्धा नमक, सौवर्चल नमक, सोंठ, इलायची, अजवायन, पीपर तथा यव क्षार का चूर्ण थोड़ा गरम जल, या फलों के अम्लरस या कांज्जी या कुरथी का यूष या गोमूत्र अथवा आसव के साथ पान करे। अथवा

पुष्कर मूल हर्रे, सोंठ, कपूर, रास्ना, बच तथा पीपर समभाग इन सबों का चूर्ण पूर्वोक्त रसादिकों के साथ पान करे।

कफज हृदयरोग में अभयादि क्वाथ तथा रोहितकादि अवलेह—

क्वाथं तथाऽभयाशुण्ठीमाद्रीपीतद्रुकट्फलात्।
क्वाथे रौहीतकाश्वत्थखदिरोदुम्बरार्जुने।।
सपलाशवटे व्योषत्रिवृच्चूर्णान्विते कृतः।
सुखोदकानुपानस्य लेहः कफविकारहा।।

अर्थ : हर्रे, सोंठ, दारूहल्दी तथा जायफल का क्वाथ पान करे। अथवा रोहेड़ा, पीपर, खैर, गूलर, अर्जुन, पलास तथा वट समभाग इन सबों के क्वाथ में व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) त्था निशोथ का चूर्ण मिलाकर अवलेह बनावे और खाकर ऊपर से थोड़ा गरम जल पान करे। यह कफजन्य विकार (कफज हृद्रोग) को नष्ट करता है।

कफज हृद्रोग में विविध प्रयोग—

श्लेष्मगुल्मोदिताऽऽज्यानि क्षारांश्च विविधान् पिबेत्।
प्रयोजयेच्छिलाह्वं वा ब्राह्मं चात्र रसायनम्।।
तथामलकलेहं वा प्राश्यं वाऽगस्तिनिर्मितम्।

अर्थ : कफज हृद्रोग में कफज गुल्म रोग में कहे जाने वाले अनेक प्रकार के घृत तथा क्षारीय योग को प्रयोग करे। इस रोग में शिलाजतु रसायन या ब्राह्य रसायन का प्रयोग करे। अथवा आमल कावलेह (च्यवनप्रास), या अगस्ति निर्मित प्राश्य (अगस्त्यावलेह) का प्रयोग करे।

शूल की चिकित्सा—

स्याच्छूलं यस्य भुक्तेऽन्ने जीर्यत्यल्पं जरांगते।।
शाम्येत्सकुष्ठकृमिजिल्लवणद्वयतिल्वकैः।
सदेवदार्वतितिषैश्चूर्णमुष्णाम्बुना पिबेत्।।
यस्य जीर्णेऽधिकं स्नेहैः स विरेच्यः फलैः पुनः।
जीर्यत्यन्ने तथा मूलैस्तीक्ष्णैः शूले सदाधिके।।
प्रायोऽनिलो रूद्धगतिः कुप्यत्यामाशये गतः।
तस्यानुलोमनं कार्यं शुद्धिलगनपाचनैः।।

अर्थ : जिस के अन्न खाने के बाद या पचते समय या पचने के बाद शूल होता है वह कूट, विंडग, सेन्धानमक, सौवर्चल नमक, लोध, देवदारू तथा अतीस समभाग इन सबों का चूर्ण थोड़ा गरम जल के साथ भोजन के बाद पान करने से शान्त होता है। जिसको भोजन पच जाने के बाद अधिक शूल हो उसको स्नेह (एरण्ड तैल) से विरेचन कराये। अन्न के पचते समय शूल हो तो फलों

(मुनक्का आदि) से विरेचन कराये। यदि हमेशा अधिक शूल रहे तो तीक्ष्ण विरेचन द्रव्य दन्तीमूल, श्यामा निशोथ आदि से विरेचन कराये। इन शूल रोगों में गति के रूक जाने से वायु आमाशय में प्रकुपित होता है। अतः उसका अनुलोम विरेचनके द्वारा संशोधन, उपवास तथा पाचन औषधों से करे।

कृमिजन्य हृद्रोग चिकित्सा

कृमिघ्नमोषधं सव्र कृमिजे हृदयामये।

अर्थ : क्रिमि जन्य हृदय रोग में सभी कृमिनाशक औषधों का प्रयोग करना चाहिए।

तृष्णारोग चिकित्सा।

तृष्णा (प्यास) की सामान्य चिकित्सा–

तृशणासु वातपित्तघ्नो विधिः प्रायेण युज्यते।।
सर्वासु शीतो बाह्यान्तस्तथा शमनशोधनम्।
दिव्याम्बु शीतं सक्षौद्रं तद्वद्भौमं च तद्गुणम्।।
निर्वापितं तप्तलोष्टकपालसिकतादिभिः।
सशर्करं वा क्वथितं पच्चमूलेन वा जलम्।।
दर्भपूर्वेण मन्थश्च प्रशस्तो लाजसक्तुभिः।
वाटयश्चामयवैः शीतः शर्करामाक्षिकान्वितः।।
यवागूः शालिभिस्तद्वत्कोद्रवैश्च चिरन्तनैः।
शीतेन शीतवीर्यैश्च द्रव्यैः सिद्धेन भोजनम्।।
हिमाम्बुपरिषिक्तस्य पयसा ससितामधु।
रसैश्चानम्ललवणैजङ्लिैर्घृतभर्जितैः।।
मुद्गादीनां तथा यूषैर्जीवनीयरसान्वितैः।

अर्थ : सभी प्रकार के तृष्णा रोगों में वात–पित्त शामक चिकित्सा का प्रयोग किया जाता है। सभी प्रकार के तृष्णा में बाह्य तथा आभ्यन्तर शीत प्रयोग शामक तथा शोधन औषधों का प्रयोग शीतल आकाशीय (वर्षा का) जल मधु के साथ या कूआँ आदि का शीतल जल मधु के साथ प्रयोग करे। अथवा मिट्टी का ढेला, खपड़ा या बालू तपा कर बुझाया हुआ शीतल जल चीनी मिलाकर या लघु पच्चमूल तथा डामकी जड़ के क्वथित जल में चीनी मिलाकर प्रयोग करे। अथवा धान के लावा सत्तू का मन्थ पिलाना प्रशस्त होता है। अथवा भूसी निकाले कच्चे यव की दलिया जल में पकाने के बाद शीतल होने पर शक्कर तथा मधु मिलाकर पिलाये। पुराने जड़हन धान के चावल या पुराने कोदो के चावल का शीत वीर्य वाले द्रव्यों में सिद्धयवागू शीतल पदार्थ के साथ खिलाये। अथवा शीतल जल से स्नान कराने के बाद शक्कर तथा मधु मिलाकर यवागू खिलाये। अथवा जीवनीयगण के द्रव्यों से

पकाये हुए जल में मूँग का यूष बना कर उसके साथ यवागू खिलाये।

तृष्णा में नस्यादि विविध प्रयोग–

नस्यं क्षीरघृंत सिद्धं शीतैरिक्षोस्तथा रसः।।
निर्वापणाश्च गण्डूशाः सूत्रस्थानोदिता हिताः।
दाहज्वरोक्ता लेपाद्या निरीहत्वं मनोरतिः।।
महासरिद्ध्रदादीनां दर्शनस्मरणादि च।

अर्थ : तृष्णा रोग में नस्य, शीतल द्रव्यों से सिद्ध दूध का घृत तथा गन्ना का रस पान करे। सूत्र स्थान में कहे गये शामक तथा हितकर गण्डूष का प्रयोग करे। दाह तथा ज्वर प्रकरण में कहे गये लेप आदि का प्रयोग करे। सभी चेष्टाओं से रहित मन को शान्त रखे और बड़े–बड़े नदी–तालाब आदि का दर्शन तथा स्मरण करे।

वातज तृश्णा की चिकित्सा–

तृष्णायां पवनोत्थायां सगुडं दधि भास्यते।।
रसाश्च बृंहणाः शीता विदार्यादिगणाम्बु वा।

अर्थ : वातज तृष्णा में गुड़ मिलाकर दही पीवे। अथवा विदार्यादि गण के द्रव्यों को पकाकर शीतल किया हुआ जल पान करे।

पित्तज तृष्णा की चिकित्सा–

पित्तजायां सितायुक्तः पक्वोदुम्बरजो रसः।।
तत्क्वाथो वा हिमसतद्वत्सारिवादिगणाम्बु वा।
तद्विधैश्च गणैः शीतकषायान् ससितामधून्।।
मधुरैरौषधैस्तद्वत् क्षीरिवृक्षैश्च कल्पितान्।
बीजपूरकमृद्वीकावटवेतसपल्लवान्।।
मूलानि कुशकाशानां यष्टयाह्वं च जले शृतम्।
ज्वरोदितं वा द्राक्षादि पच्चसाराम्बु वा पिबेत्।।

अर्थ : पित्तज तृष्णा में पके गूलर का रस शक्कर मिलाकर या गूलर के छाल का क्वाथ या हिम पान करे। इसी प्रकार सारिवादिगण के पकाये हुए जल पान करे। उसी प्रकार शीतद्रव्यों के गण के शीत कषाय को मिश्री तथा मधु मिलाकर पान करे। इसी प्रकार मधुर औषधों से या क्षीरी वृक्षों (वरगद, गूलर, पीपर, पाकड़ तथा पारस पीपल) के बनाये गये शीत कषाय को मिश्री तंथा मधु मिलाकर पान करे। अथवा बिजौरा नींबू, मुनक्का, वट तथा वेतस से पल्लवों को, या कुश कासदि के मूल को या मुलेठी को जल में पकाकर पान करे। अथवा ज्वर प्रकरण में कहे गये द्राक्षादि का क्वाथ या हिम अथवा पच्चसार योग का जल पान करे।

कफज तृष्णा की चिकित्सा–

कफोद्भवायां वमनं निम्बप्रसववारिणा।
बिल्वाढकीपच्चकोलदर्भपच्चकसाधितम्।।
जलं पिबेद्रजन्या वा सिद्धं सक्षौद्रशर्करम्।
मुद्गयूषं च सव्योषपटोलीनिम्बपल्लवम्।।
यवान्नं तीक्ष्णकवल--नस्य--लेहांश्च शीलयेत्।

अर्थ : कफज तृष्णा में नीम के पत्तों के रस से वमन कराये। बेलपत्र, अरहर के पत्र, पच्चकोल (पीपर, पिपरामूल, चव्य, चित्रक, सो।ठ, बेर, दर्भपच्चक), कुश, कास, गन्ने की जड़, डाम तथा सरपत के पकाये जल या हल्दी का पकाया जल मधु तथा शक्कर मिलाकर पिलाये। व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच), पटोल पत्र तथा नीम के पकाये जल से सिद्ध मूँग का यूष या जव की दलिया खिलाये तथा तीक्ष्ण द्रव्यों के क्वाथ का कवल धारण करे और नस्य तथा लेह का प्रयोग करे।

त्रिदोषज तथा आमज तृष्णा की चिकित्सा–
सर्वैरामाच्च तद्धन्त्री क्रियेष्टा वमनं तथा।।
त्र्यूषणारूष्करवचाफलाम्लोष्णाम्बुमसतुभिः।

अर्थ : त्रिदोषज तथा आमज तृष्णा में त्रिदोष शामक तथा आमशामक पाचन क्रिया उत्तम है और त्र्यूषण (सोंठ, पीपर, मरिच) शुद्ध भिलावा, वच, अम्ल फलों के रस उष्ण जल तथा मस्तु (दही के जल) से वमन कराये।

विविध तृष्ण में विविध योग–
अन्नात्ययान्मण्डमुष्णं हिमं मन्थं च कालवित्।।
तृशि श्रमान्मांसरसं मद्यं वा ससितं पिबेत्।
आतपात्ससितं मन्थं यवकोलाम्बुसक्तुभिः।।
सर्वाण्यगानि लिम्पेच्च तिलपिण्याककाज्जिकैः।
शीतस्नानात्तु मद्याम्बु पिबेत्तृण्मान् गुडाम्बु वा।।
मद्यादर्धजलं मद्यं स्नातोऽम्ललवणैर्युतम्।
स्नेहात्तीक्ष्णतराग्निस्तु स्वभावशिशिरं जलम्।।
स्नेहादुष्णाम्बु जीर्णात्तु जीर्णान्मण्डं पिपासतिः।
पिबेत्स्निग्धान्नतृषितो हिमस्पर्धि गुडोदकम्।।
गुर्वाद्यन्ने तृषितः पीत्वोष्णाम्बु तदुल्लिखेत्।
क्षयजायां क्षयहितं सर्व बृंहणमौषधम्।।
कृशदुर्बलरूक्षाणां क्षीरं छागो रसोऽथवा।
क्षीरं च सोर्ध्ववातायां क्षयकासहरैः शृतम्।।
रोगो पसर्गजातायां धान्याम्बु ससितामधु।
पाने प्रशसतं सर्वा च क्रिया रोगाद्यपेक्षया।।

अर्थ : अन्नात्यय (उपवास) जन्य तृष्णा में कास एवं सात्म्य के अनुसार उष्ण या शीतल मन्थ का प्रयोग करे।

धूप लगने से उत्पन्न तृष्णा में यव के सत्तू को बेर के जल में घोल कर तथा मिश्री मिलाकर पीवे। और तिल की खली तथा कांज्जी मिलाकर सम्पूर्ण शरीर में लेप लगाये।

शीतल जल में स्नान करने से प्यासा व्यक्ति जल मिलाकर मद्य या गुड़ का शर्बत पान करे।

मद्य पान से उत्पन्न तृष्णा में स्नान करने के बाद मद्य में आधा जल नींबू का रस तथा नमक मिलाकर पान करे।

स्नेह पान से जाठराग्नि के तीव्र होने पर तृष्णा हो तो स्वभाव से शीतल जल (कूआँ आदि के जल) पान करे।

स्नेह न पचने पर यदि तृष्णा हो तो उष्ण जल तथा स्नेह के पच जाने पर तृष्णा हो तो मण्ड (दही का पानी) पान करे।

स्निग्ध अन्न (मालपुआ, हलुआ) खाने से तृष्णा उत्पन्न होने पर गुड़ का ठंढा शर्बत पान करे।

गरिष्ठ अन्न खाने से उत्पन्न तृष्णा में गरम जल पीकर वमन करे।

धातु क्षयज तृष्णा में क्षय रोग में हितकर सभी बृंहण औषधों का सेवन करे। कृश दुर्बल तथा रूक्ष प्रकृतिवाले मनुष्यों को क्षीर पिलायें।

ऊर्ध्व वात से तृष्णा होने पर क्षय तथा कास हर औषधों से सिद्ध दूध पान करे।

रोगों में उपद्रव स्वरूप तृष्णा होने पर धनियाँ का जल मिश्री तथा मधु मिलाकर पान करे। रोगों के अनुसार सभी क्रियायें जल पीने में प्रशस्त हैं।

तृष्णा की भयंकरता–

तृष्यन् पूर्वामयक्षीणों न लभेत जलं यदि।
मरणं दीर्घरोगं वा प्राप्नुयात्त्वरितं ततः।।
सात्म्यान्नपानभैषज्यैस्तृष्णां तस्य जयेत्पुरः।
तस्यां जितायामन्योऽपि शक्यो व्याधिशिचकित्सितुम्।

अर्थ : किसी पूर्व रोग से क्षीण व्यक्ति के प्यास लगने पर यदि जल न मिले तो वह शीघ्र ही मर जाता है या बहुत दिन चलने वाले भयंकर रोग को प्राप्त करता है। अतः सबसे पहले प्रकृति के अनुकूल अन्न, पान तथा औषध से तृष्णा को शान्त करे। प्यास के शान्त हो जाने पर अन्य सब व्याधियाँ चिकित्सा के योग्य होती है।

□□□□□

सप्तम अध्याय

अथातो मदात्ययचिकित्सितं व्याख्यास्यामः।
इति ह स्माहुरात्रेयादयो महर्षयः।

अर्थ : छर्दि हृद्रोग तथा तृष्णा चिकित्सा व्याख्यान के बाद मदात्यय चिकित्सा का व्याख्यान करेंगे ऐसा आत्रेयादि महर्षियों ने कहा था।

मदात्यय की सामान्य चिकित्सा–
यं दोषमधिकं पश्येत्तस्यादौ प्रतिकारयेत्।
कफस्थानानुपूर्व्या वा तुल्यदोषे मदात्यये।।
पित्तमारूतपर्यन्तः प्रायेण हि मदात्ययः।

अर्थ : मदात्यय में जिस दोष की अधिकता देखें उसकी पहले चिकित्सा करें। मदात्यय में समान दोष होने पर आमाशय तथा सिर आदि कफ के स्थानों की आनुपूर्वी क्रम से चिकित्सा करे। प्रायः मदात्यय में पित्त तथा वात का अन्त में प्रभाव पड़ता है अर्थात् पहले कफ की प्रधानता रहती है बाद में पित्त तथा वात की प्रधानता होती है। अर्थात् पित्त तथा वायु का प्रकोप जब तक रहता है तभी तक मदात्यय रोग रहता है।

मद्योत्क्लिष्टेन दोषेण रूद्धः स्रोतःसु मारूतः।
सुतीव्रा वेदना याश्च शिरस्यस्थिषु सन्धिषु।।
जीर्णाममद्यदोषस्य प्रकाङ्क्षालाघवे सति।
यौगिकं विधिवद्युक्तं मद्यमेव निहन्ति तान्।।
क्षारो हि याति माधुर्य शीघ्रमम्लोपसंहितः।
मद्यमम्लेषु च श्रेष्ठं दोषविष्यन्दनादलम्।।

अर्थ : अम्ल विदाह करने वाले तीक्ष्ण और उष्ण मद्य अधिक मात्रा में पीने से अन्न का रस विदग्ध (अर्धपक्व होकर) क्षारीय हो जाता है और जिन मद, प्यास, मोह, ज्वर, अन्तदहि तथा विभ्रम को उत्पन्न करता है तथा मद्य के द्वारा उत्क्लिष्ट दोष से स्रोतसोंमें रूका हुआ वायु सिर, अस्थि तथा सन्धियों में तीव्र वेदना उत्पन्न करता है। मद्य तथा आमदोष के पच जाने से शरीर के हल्का होने पर अन्न खाने की इच्छा करता है तब उस समय दोषानुसार जो मद्य जिस दोष के लिए हितकर हो उसे सममात्रा में मद्य ही पीने से उन उपद्रवों को शान्त

करता है। क्षार अम्ल के संयोग होने पर मधुर हो जाता है। अम्ल पदार्थों में मद्य श्रेष्ठ होता है और दोषों के द्रवित कर निकलने में समर्थ होता है।

विश्लेषण : सम मात्रा में अर्थात् जिस व्यक्ति के लिये जितनी मात्रा उपयोगी हो उस मात्रा से विधिपूर्वक पीने से मद्य अन्न के समान हितकारी है। किन्तु जब वह विधिहीन तथा कभी अधिक मात्रा में कभी हीन मात्रा में पान किया जाता है तो उपद्रव कारक होता है। इस मद्य का प्रभाव खाये हुए अन्न पर पड़ता है। अन्न अर्ध परिपक्व होकर क्षारीय हो जाता है। वह क्षारीय शरीर के रसादि धातुओं में जाकर विभिन्न उपद्रवों को उत्पन्न करता है। आम दोष या मद्य के पच जाने पर युक्तिपूर्वक पान किया गया मद्य ही उन सभी उपद्रवों को दूर करता है। क्योंकि अम्ल पदार्थो में मद्य श्रेष्ठ होता है। अतः मद्य ही मद्य जनित उपद्रवों में क्षारीय अन्न से मिलकर मधुरता को प्राप्त होकर सम्पूर्ण उपद्रवों को दूर करता है। जैसे राजा से दण्ड पाये हुए व्यक्ति को राजा ही दण्ड से मुक्त करता है। इसी प्रकार अम्लों में राजमद्य से जो उपद्रव होते हैं उसे मद्य ही शान्त करता है।।

मदात्यय में मद्य देने का हेतु–

तीक्ष्णोष्णाद्यैः पुरा प्रोक्तैर्दीपनाद्यैस्तथा गुणैः।
सात्म्यत्वाच्च तदेवास्य धातुसाम्यकरं परम्।।

अर्थ : पूर्वोक्त तीक्ष्ण, उष्ण तथा दीपन पाचन आदि गुणों से युक्त मद्य होता है। उन गुणों के आधार पर जिस व्यक्ति को जो सात्म्य (अनुकूल) हो ऐसे अनुकूल मद्य पीने से धातुयें सम मात्रा में रहती हैं।

मदात्यय में चिकित्सा की अवधि–

सप्ताहमष्टरात्रं वा कुर्यात्पानात्ययौषधम्।
जीर्यत्येतावता पानं कालेन विपथाश्रितम्।।
परं ततोऽनुबध्नाति यो रोगस्तस्य भेषजम्।
यथायथं प्रयुञ्जीत कृतपानात्ययौषधः।।

अर्थ : सात दिन या आठ दिन तक मदात्यय रोग की चिकित्सा करनी चाहिए। इस अवधि में विमार्ग में गया हुआ मद्य पच जाता है। इसके बाद जो रोग इसके सम्बन्धी होते हैं उनकी चिकित्सा करे। मद्य पानात्यय के जो जो औषध विहित हैं उनका प्रयोग विधिवत करे।

वातमदात्यय की चिकित्सा–

तत्र वातोल्बणे मद्यं दद्यात्पिष्टकृतं युतम्।

बीजपूरकवृक्षाम्लकोलदाडिमदीप्यकैः।।
यवानीहपुशाजाजीव्योशत्रिलवणार्द्रकैः।
शूलयैर्मासैर्हरितकैः स्नेहवद्भिश्च सक्तुभिः।।
उश्णस्निग्धाम्ललवणा मेध्यमांसरसा हिताः।
आम्राऽऽम्रातकपेशीभिः संस्कृता रागखाण्डवाः।।
गोधूममाशविकृतिर्मृदुश्चित्रा मुखप्रिया।
आर्दिकार्द्रककुल्माषसुक्तमांसादिगर्भिणी।।
सुरभिर्लवणा शीता निगदा वाऽच्छाम्लकाज्जिकम्।
अभ्यगद्वर्तनस्नानमुष्णं प्रावरणं घनम्।।
घनश्चागुरूजो धूपः पडश्चागुरूकुड्कुमः।
कुचोरूश्रोणिशालिन्यो यौवनोष्णागयष्टयः।।
हर्षेणालिगने युक्ताः प्रियाः संवाहनेषु च।

अर्थ : वात प्रधान मदात्यय में चावल की पीठी से बनाया मद्य विजौरा नींबू, विषामिल, वेर, अनार, अजवायन, अजमोदा, हाउबेर, जीरा, व्योष, (सोंठ, पीपर, मरिच), त्रिलवण (सेन्धा नमक, सौवर्चल नमक, विड नमक), तथा अदरक इन सबों के यथोपलब्ध चूर्ण मिलाकर, हरित वर्ग के द्रव्य (अदरक, मूली आदि) तथा स्नहे युक्त सत्तू के साथ पान करे। इस मदात्यय में उष्ण, स्निग्ध, अम्ल तथा लवण पदार्थो के साथ सेवन करना हितकर है। आम या आमड़ा की टुकड़ा से बनाया राग खाण्डव, गेहूँ तथा उड़द का बनाया कोमल तथा विभिन्न प्रकार के भक्ष्य पदार्थ (खस्ता, समोसा, कचौड़ी आदि) जिनमें हरा धनियाँ, अदरक, कुल्माष (उड़द की घुघुरी), सिरका तथा हो हितकर होते हैं। अथवा मदात्यय में सुगन्धित पदार्थ तथा नमक मिला हुआ शीतल स्वच्छ वारूणी लाभदायक होता है। अथवा अनार का रस या लघु पच्चमूल का क्वाथ लाभदायक होता है। या सोंठ तथा धनियाँ क्वाथ मसतु, शुक्त मिश्रित जल, अच्छ तथा अम्लकांज्जी हितकारक है। वात मदात्यय में अभ्यगं, (मालिश), उद्वर्तन (उबटन) स्नान, उष्ण मोटा वस्त्र, कपूर तथा अगर का धूप, अगर तथा केशर का लेप प्रशस्त है।

पित्तनदात्यय की चिकित्सा—

पित्तोल्बणे बहुजलं शार्करं मधुना युतम्।।
रसैर्दाडिमखर्जूरभव्यद्राक्षापरूषकैः।
सुशीतं ससितासक्तु योजयं तादृक् च पानकम्।।
स्वादुवर्गकषायैर्वा युक्तं मद्यं समाक्षिकम्।
शालिषष्टिकमश्नीयाच्छशाजैणकपिज्जलैः।।

सतीनमुद्गामलकपटोलीदाडिमैरपि।

अर्थ : पित्त प्रधान मदात्यय में चीनी के पतले शर्बत में मधु मिलाकर पान करे। अथवा अनार, खजूर, कमरख तथा फालसा के शीतल रस में शक्कर तथा मधु मिलाकर पान करे। इसी प्रकार शीत सत्तू के घोल में चीनी मिलाकर पानक का प्रयोग करे। अथवा स्वादु वर्ग के कषाय तथा मधु से युक्त मद्यपान करे और जड़हन धान के चावल या साठी धान के चावल का भात खरह, अथवा मटर या मूंग के दाल में आँवला, परवल तथा अनार मिलाकर उसके साथ खायें।

मदात्यय की विविध चिकित्सा–

कफपित्तं समुत्क्लिष्टमुल्लिखेत्तृड्विदाहवान्।।
पीत्वाऽम्बु शीतं मद्यं वा भूरीक्षुरससंयुतम्।
द्राक्षारसं वा संसर्गी तर्पणादिः परं हितः।।
तथाऽग्निर्दीप्यते तस्य दोषशेषान्नपाचनः।

अर्थ : मदात्यय रोग में कफ–पित्त के उभड़े रहने के कारण प्यास तथा विदाह से पीड़ित रोगी अधिक शीतल जल या गन्ना का रस मिलाकर अधिक मद्य या मुनक्का रस अधिक मात्रा में पीकर वमन करे। वमन के बाद संतर्पण आदि संसर्गी (पेया, बिलेपी आदि) क्रम हितकर होता है। इससे रोगी की अग्नि प्रदीप्त हो जाती है और शेष दोष तथा अन्न का पाचन हो जाता है।

कासे सरक्तनिष्ठीवे पार्श्वस्तनरूजासु वा ।।
तृष्णायां सविदाहायां सोत्क्लेशे हृदयोरसि।
गुडूचीभद्रमुस्तानां पटोलस्याथवा रसम्।।
सशृंगबेरं युञ्जीत तित्तिरिप्रतिभोजनम्।

अर्थ : मदात्यय में कास के साथ रक्त निकलने पर या पार्श्व प्रदेश तथा स्तन प्रदेश में पीड़ा होने पर या विदाह युक्त प्यास लगने पर अथवा हृदय तथा उरप्रदेश में उत्क्लेश (उबकाई प्रतीत होना) होने पर गुडूची तथा नागरमोथा का रस या परवल का रस अदरक का रस मिलाकर प्रयोग करे।

तृष्यते चाऽतिबलवद्वातपित्तसमुद्धते।।
दद्याद् द्राक्षारसं पानं शीतं दोषानुलोमनम्।

अर्थ : अधिक बलवान वात–पित्त के बढ़े रहने पर यदि प्यास लगे तो दोषों को अनुलोमन करने वाले शीतल मुनक्का का रस पान करे।

जीर्णेऽद्यान्मधुराम्लेन छागमांसरसेन च।।

तृष्यल्पशः पिबेन्मद्यं मदं रक्षन् बहूदकम्।
मुस्तदाडिमलाजाम्बु जलं वा पर्णिनीशृतम्।।
पटोल्युत्पलकन्दैर्वा स्वभावादेव वा हिमम्।

अर्थ : मद्य के पच जाने पर मधुर तथा अम्ल रस के साथ भोजन करे और प्यास लगने पर मादकता की रक्षा करते हुए अधिक जल मिलाकर थोड़ा मद्य पीवे। अथवा नागरमोथा, अनार तथा धान का लावा का जल या पर्णिनी (शालपर्णी, पृश्नपर्णी माषपर्णी तथा मूदगपर्णी) का पकाया शीतल जल या परवल तथा कमल कन्द का पकाया शीतल जल अथवा स्वभाव से ही शीतल जल (कूआँ का जल) पान करे।

अवस्था के अनुसार मदात्यय की चिकित्सा–

मद्यातिपानादब्धातौ क्षीणे तेजसि चोद्धते।।
यः शुष्कगलताल्वोष्ठो जिह्वां निष्कृष्य चेष्टते।
पाययेत्कामतोऽम्भस्तं निशीथपवनाहतम्।।
कोलदाडिमवृक्षाम्लचुक्रीकाचुक्रिकारसः।
पच्चाम्लको मुखालेपः सद्यस्तृष्णां नियच्छति।।

अर्थ : मद्य के अधिक पान करने से शरीर की जलीय धातु के क्षीण होने तथा पित्त के बढ़ जाने पर जो रोगी गला, तालु तथा ओष्ठ के सूखने से जिह्वा को निकाल कर काँपता है उसको रातभर बाहर हवा में रखा हुआ जल इच्छानुसार पिलाये। कोल, अनार, वृक्षाम्ल (विषामिल), सिरका तथा चौपतिया इस पच्चाम्लक का लेप मुख के अन्दर तथा बाहर करने से शीघ्र ही प्यास को दूर करता है।

मदात्यय में त्वग्दाह की चिकित्सा–

त्वचं प्राप्तश्च पानोष्मा पित्तरक्ताभिमूर्च्छितः।
दाहं प्रकुरूते घोरं तत्राऽपिशिशिरो विधिः।।
अशाम्यति रसैस्तृप्ते रोहिणीं व्यधयेत्सिराम्।

अर्थ : मद्यपान की उष्मा पित्त तथा रक्त से मिलकर तथा त्वचा में जाकर भयंकर दाह को उत्पन्न करती है। वहाँ त्वचा के ऊपर अति शीतल क्रिया करनी चाहिए। इस प्रकाश शीतल रस पिलाकर तृप्त करने पर भी यदि दाह शान्त न हो तो रोहिणी सिरा का वेध करे।

कफ मदात्यय की चिकित्सा–

उल्लेखनोपवासाभ्यां जयेच्छ्लेष्मोल्बणं पिबेत्।।
शीतं शुण्ठीस्थिरोदीच्यदुःस्पर्शान्यतमोदकम्।
निरामं क्षुधितं काले पाययेद्बहुमाक्षिकम्।।

शार्करं मधु वा जीर्णमरिष्टं सीधुमेव च।
रूक्षतर्पणसंयुक्तं यवानीनागरान्वितम्।।
उष्णाम्लकटुतिक्तेन कौलत्थेनाल्पसर्पिषा।
शुष्कमूलकजैश्छागै रसैर्वा धन्वचारिणाम्।
साम्लवेतसवृक्षाम्लपटोलव्योषदाडिमैः।।
प्रभूतशुण्ठीमरिचहरितार्द्रकपेशिकम्।
बीजपूररसाद्यम्लभृष्टनीरसवर्तितम्।।
करीरकरमर्दादिरोचिष्णु बहुशालनम्।
प्रव्यक्ताष्टागलवणं विकल्पितनिमर्दकम्।।
यथाग्नि अक्षयन्मांसं माधवं निगदं पिबेत्।
सितासौवर्चलाजाजीतित्तिडीकाम्लवेतसम्।।
त्वगेलामरिचार्धांशमष्टागलवणं हितम्।
स्रोतोविशुद्धयग्निकरं कफप्राये मदात्यये।।
रूक्षोष्णोद्वर्तनोद्धर्शस्नानभोजनलगनैः।
सकामाभिः सह स्त्रीभिर्युक्त्या जागरणेन च।।
मदात्ययः कफप्रायः शीघ्रं समुपशाम्यति।

अर्थ : कफ प्रधान मदात्यय रोग को वमन तथा उपवास के द्वारा दूर करे और सोंठ, शालपर्णी, सुगन्ध वाला तथा यवासा इन सबों में किसी एक द्रव्य से पकाया हुआ जल शीतल कर पान करे। आम दोष के नष्ट होने से भूख लगनेपर अधिक मधु पिलाये। या शक्कर का बना मद्य में मधु मिलाकर या पुराना अरिष्ट या सीधु पिलाये। रूक्ष संतर्पण तथा अंजवायन और सोंठ का चूर्ण मिलाकर गेहूँ या यव की रोटी पतले यूष से खिलाये। अथवा अम्ल, कटु तथा तिक्त रस युक्त थोड़ा घृत मिलाकर गरम कुरथी के रस से गेहूँ या यव की रोटी खिलाये। अथवा सूखी मूली के शाक के रस अम्लर्वेत विषमिल, परवल, व्योष (सोंठ, पीपर, मरिच) तथा अनारदाना का चूर्ण मिलाकर भोजन कराये। कफ मदात्यय रोग में अधिक सोंठ तथा मरिच का चूर्ण और अदरक का टुकड़ा बिजौरा नींबू का रस से अम्ल या उसके रस में तलकर सुखाया हुआ, करीर तथा करौंदा के फलों को मिलाकर स्वादिष्ट बनाया हुआ, अधिक भावन मसाला (धनियाँ, जीरा आदि) मिलाकर पकाया हुआ, अधिक मात्रा में अष्टांगलवण (मिश्री, सौवर्चल नमक, जीरा, इमली, अम्लवेंत एक–एक भाग तथा दालचीनी, इलायची, मरिच का चूर्ण) महुआ का मद्यपीवे। यह स्रोतसों को शुद्ध करनेवाला तथा जाठराग्नि को बढ़ाने वाला है। मिश्री, सौर्वचल नमक, धनियाँ, जीरा, इमली एक–एक भाग, अम्लबेंत, दालचीनी, इलायची तथा मरिच आधा–आधा भाग ये अष्टागंलवण हैं तथा कफमय मष्दात्यय में हितकर हैं।

रूखा तथा उष्ण उदवर्तन (उबटन) उद्घर्षण (मलना), स्नान, भोजन, उपवास, तथा जागरण से कफज मदात्यय शान्त होता है।

अन्य दशविध मदात्ययों की चिकित्सा–

यदिदं कर्म निर्दिष्टं पृथग्दोषबलं प्रति।।
सन्निपाते दशविधे तच्छेषेऽपि विकल्पयेत्।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से अलग–अलग वात प्रधान, पितप्रधान तथा कफ प्रधान मदात्यय की जो चिकित्सा बतायी गयी है। वही चिकित्सा अन्य अवशिष्ट दश सन्निपातज मदात्यय में भी विकल्पित कर करनी चाहिए।

सभी मदात्ययों में शामक योग–

त्वङ्नागपुष्पमगधामरिचाजाजिधान्यकैः।।
परूषकमधूकैलासुराह्वैश्च सितान्वितैः।
सकपित्थरसं हृद्यं पानकं शशिबोधितम्।।
मदात्ययेषु सर्वेषु पेयं रूच्यग्निदीपनम्।

अर्थ : दालचीनी, नागकेशर, पीपर, मरिच, धनियाँ, फालसा, महुआ, इलायची तथा देवदारू समभाग इन सबों का चूर्ण में समभाग मिश्री मिलाकर और कैथ के रस का पानक बनाकर तथा उसमें कपूर मिलाकर रख ले। इसके बाद चूर्ण खाकर पानक पीवे। यह हृदय को बल देने वाला, रूचिकारक, जाठराग्नि दीपक है तथा सभी प्रकार के मदात्यय में पीने योग्य है।

मदात्यय की सम्प्राप्ति–

नाविक्षोभ्य मनो मद्यं शरीरमविहन्य वा।।
कुर्यान्मिदात्ययं तस्मादिष्यते हर्षणी क्रिया।

अर्थ : मद्य मन को विक्षुब्ध किये बिना या शरीर को विघ्न किये बिना मदात्यय नहीं उत्पन्न करता है। अर्थात् मद्य मन को क्षुब्ध कर तथा शरीर को विकृत कर मदात्यय रोग उत्पन्न करता है। अतः उसमें मन को प्रसन्न करने वाला आहार–विहार करना चाहिए।

मदात्यय में क्षीर पान का महत्त्व–

संशुद्धिशमनाद्येषु मददोषः कृतेष्वपि।।
न चेच्छाम्येत्कफे क्षीणे जाते दौर्बल्यलाघवे।
तस्य मद्यविदग्धस्य वातपित्ताधिकस्य च।।
ग्रीष्मोपतप्तस्य तरोर्यथा वर्षं तथा पयः।

मद्यक्षीणस्य हिक्षीणं क्षीरमाश्वेव पुष्यति।।
ओजस्तुल्यं गुणैः सर्वैर्विपरीतं च मद्यतः।

अर्थ : पूर्वोक्त प्रकार से संशोधन तथा शमन आदि क्रियाओं को करने पर भी यदि मदात्यय न शान्त हो और कफ के क्षीण होने तथा दुर्बलता एवं शरीर के हल्का होने पर उस वात–पित्ताधिक मद्य विदग्ध रोगी के लिए जैसे गर्मी से झुलसे हुए पेड़ के लिए वर्षा लाभदायक होती है वैसे हो फलदायक होता है। मद्य पीने से क्षीण रोगी के अगं को दूध शीघ्र ही पुष्ट करता है। क्योंकि मद्य के दश गुणों के विपरीत दुध के सभी दश गुणों के समान गुण वाला ओज है।

दुग्ध पान से निवृत्त मदात्यय का विविध उपचार–

पयसा विजिते रोगे बले जाते निवर्तयेत्।।
क्षीरप्रयोगं मद्यं च क्रमेणाल्पाल्पमाचरेत्।
न बिट्क्षयध्वंसकोत्थैः स्पृशेतोपद्रवैर्यथा।।
तयोस्तु स्याद्घृतं क्ष्मीरं बस्तयों बृंहणाः शिवाः।
अभ्यगंद्वर्तनस्नानमन्नपानं न वातजित्।।

अर्थ : दुग्ध पान से मदात्यय के निवृत्त हो जाने पर तथा बल के आ जाने पर दूध का प्रयोग छोड देना चाहिए और थोड़ा–थोड़ा क्रमशः मद्यपान प्रारम्भ करते हुए छोड़ देना चाहिए। किन्तु मद्य का प्रयोग इतना ही करना चाहिए जितने से विक्षम तथा ध्वंसक रोग न हो। विक्षय तथा ध्वंसक रोग की शान्ति घृत, क्षीर, पुष्टिकारक वस्तियाँ, अभ्यंग, उबटन, स्नान ता वात शामक आहार–विहार तथा पान से होता है।

विश्लेषण : मद्यपान छोड़ने के बाद सहसा अधिक मद्य पान करने से विक्षय तथा ध्वंसक रोग होता है। अतः दूध से शान्त होने पर थोड़ा–थोड़ा मद्य पीते हुए इसे त्याग कर देना चाहिए।

युक्तिपूर्वक मद्यपान की प्रशंसा–

युक्तमद्यस्य मद्योत्थो न व्याधिरूपजायते।
अतोऽस्य वक्ष्यते योगो यः सुखायैव केवलम्।।
आश्विनं या महत्तेजो बलं सारस्वतं च या।
दधात्यैन्द्रं च या वीर्य प्रभावं वैष्णवं च या।।
अस्त्रं मकरकेतोर्या पुरूषार्थो बलस्य या।
सौत्रामण्यां द्विजमुखे या हुताशे च हूयते।।
या सर्वौषधिसम्पूर्णान्मथ्यमानात्सुरासुरैः।
महोदधेः समुद्भूता श्री–शशाङकाऽऽमृतैः सह।।
मधु–माधव–मैरेय–सीधु–गौडाऽऽसवादिभिः।

मदशक्तिमनुज्झन्ती या रूपैर्बहुभिः स्थिता।।
यामासाद्य विलासिन्यो यथार्थ नाम बिभ्रति।
कुलागनाऽपि यां पीत्वा नयत्युद्धतमानसा।।
अनगलिगितैरगः क्वाऽपि चेतो मुनेरपि।
तरगंभगभृकुटीतर्जनैर्मानिनीमनः।।
एकं प्रसाद्य कुरूते या द्वयोरपि निर्वृतिम्।
यथाकामं भटावाप्तिपरिह्लष्टाप्सरोगणे।।
तृणवत्पुरूषा युद्धे यामासाद्य त्यजन्त्यसून्।
यां शीलयित्वाऽपि चिरं बहुधा बहुविग्रहाम्।।
नित्यं हर्षातिवेगेन तत्पूर्वमिव सेवते।
शोकोद्वेगारतिभयैर्या दृष्ट्वा नाभिभूयते।।
गोष्ठीमहोत्सवोद्यानं न यस्याः शोभते विना।
स्मृत्वा च बहुशो वियुक्तः शोचते यया।।
अप्रसन्नाऽपि या प्रीत्या प्रसन्ना स्वर्ग एव या।
अपीन्द्रं मन्यते दुःस्थं ह्रदयास्थितया यया।।
अनिर्देश्यसुखास्वादा स्वयंवेद्यैव या परम्।
इति चित्रास्ववस्थासु प्रियामनुकरोति या।।
प्रियाऽतिप्रियतां याति यत्प्रियस्य विशेषतः।
या प्रीतिर्या रतिर्या वाग् या पुष्टिरिति च स्तुता।
देवदानवगन्धर्वयक्षराक्षसमानुषैः।
पानप्रवृतौ सत्यां तां सरां तु विधिना पिबेत्।।

अर्थ : युक्ति पूर्वक (विधिपूर्वक) मद्यपान करने से मद्यजन्य रोग नहीं उत्पन्न होता है। अतः मद्य का प्रयोग कहेगें जो केवल सुख के लिए ही होगा।

विश्लेषण : जो मद्य अश्विनी कुमारों के महान् तेज को, सरस्वती के बल को, इन्द्र के वीर्य को और विष्णु के प्रभाव को धारण करता है, जो मद्य कामदेव का अस्त्र है, बलभद्र का पुरूषार्थ है और सौत्रामणी यज्ञ में ब्राह्मण के मुख में तथा अग्नि में आहुति के रूप में हवन किया जाता है; जो मद्य सभी औषधियों से परिपूर्ण समुद्र के मंथन करने से देवताओं तथा असुरों के सहित लक्ष्मी, चन्द्रमा तथा अमृत के साथ मधु माधव ऐरेय सीधु शौद्र तथा आसव आदि के अनेक रूपों में मद्यशक्ति से युक्त उत्पन्न हुआ है; जिस मद्य को पानकर विलासिनी स्त्रियाँ अपने विलासिनी नाम को सार्थक करती हैं और कुलीना स्त्रियाँ भी जिसको पीने के बाद उद्धत–चचंल मनवाली हो जाती हैं और काम परिपूर्ण अपने अगों के प्रदर्शन से मुनियों के चित्त को भी विचलित कर देती

हैं; जो मद्य एक के पान करने पर भी मद तरगों के टेढ़ी भृकुटी के तर्जनों से भाविनी के मन को प्रसन्न कर तथा दोनों (नर–नारी) के मन को प्रसन्न कर निवृत्त हो जाता है और अप्सराओं के समूह में अपनी इच्छा के अनुसार विजय प्राप्त करता है; जिसको पान कर मनुष्य योद्धा समर में तृण के समान प्राणों को त्याग देता है; जिस मद्य को अनेक प्रकार से अनेक बार अधिक दिन तक पीने के बाद भी प्रत्येक बार नवीन आनन्द के साथ उसको पूर्ववत् सेवन करते हैं; जिस मद्य को देखकर मनुष्य शोक, उद्वेग तथा अरित के भय से पराजित नहीं होता है; जिसके बिना गोष्ठी, महोत्सव तथा उद्यान सुभोभित नहीं होता है; जिस मद्य के बिना मनुष्य बार–बार स्मरण कर वियोगी के समान सोचने लगता है; जो अप्रसन्न होने पर भी प्रीति से प्रसन्न होकर स्वर्ग का अनुभव करता है; जिसके हृदय में स्थित होने पर मनुष्य दूर स्थित होने पर भी अपने को इन्द्र ही मानता है; जो अलौकिक स्वाद को आस्वादन करानेवाली उत्तम स्वयं वेद्य है; जो विचित्र अवस्था में होने पर भी प्रिया का अनुसरण करता है। जो मद्य विशेष रूप से मद्यप्रिय मनुष्य को सर्वप्रिय वस्तु समझकर स्त्री से भी अधिक प्रिय होता है, मद्य प्रीति है, रति है, वाणी है तथा पुष्टि स्वरूप है, जिसकी स्तुति देव–दानव, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस तथा मनुष्य करते हैं, मद्य पान में इस प्रकार मानव की प्रवृत्ति होने पर भी विधिपूर्वक शास्त्रोक्त एवं आयुर्वेदोक्त रीति से पान करे।

मद्यपान का फल–

सम्भवन्ति च ये रोगा मेदोऽनिलकफोद्भवाः।
विधियुक्तादृते मद्यात्ते न सिध्यन्ति दारूणाः।।

अर्थ : जो भयंकर मेदोरोग, वात रोग तथा कफरोग हैं वे विधिपूर्वक मद्यपान से उत्पन्न नहीं होते हैं किन्तु वे रोग अविधिूपर्वक मद्यपान करने से शान्त नहीं होते।

अवस्था विशेष में मद्य का निषेध–

अस्ति देहस्य साऽवस्था यस्यां पानं निवार्यते।
अन्यत्र मद्यान्निगदाद्विविधौषधसम्भृतात्।।

अर्थ : शरीर की एक वह अवस्था होती है जिसमें मदयपान का निषेध किया गया है। किन्तु उस अवस्था में भी अनेक औषधियों से सम्पन्न निर्दोष निगदनाम मद्‌य का निषेध नहीं किया गया है।

मद्‌यपान की विशेषता–

आनूपंष जागलं मांसं विधिनाऽप्युपकल्पिताम्।
मद्यं सहायमप्राप्य सम्यक् परिणमेत्कथम्।।
सुतीव्रमारूतव्याधिघातिनो लशुनस्य च।
मद्यमांसवियुक्तस्य प्रयोगः स्यात्कियान् गुणः।।
निगूढभाल्याहरणे शस्त्रक्षाराग्निकर्मणि।
पीतमद्यो विषहते सुखं वैद्यविकत्थनाम्।।
अनलोत्तजेनं रूच्यं शोकश्रमविनोदकम्।
न चाऽतः परमस्त्यन्दारोग्यबलपुष्टिकृत्।
रक्षता जीवितं तस्मात्पेयमात्मवता सदा।
आश्रितोपाश्रितहितं परमं धर्मसाधनम्।।

अर्थ : विधिपूर्वक बनाया हुआ आनूप मद्य के बिना पिये कैसे पच सकता है? अर्थात् बिना मदृयपान के अच्छी तरह नहीं पच सकता है। भयंकर वात व्याधि का नाश करने वाला लहसुन का मद्‌य कितना गुण करता है ? अर्थात् लहसुन की गुणात्मकता मद्‌य की सहायता से होती है। रोगी मद्‌यपान करने पर ही गहरे शल्य के निकालने, शस्त्रकर्म, क्षारकर्म तथा अग्निकर्म में चिकित्सक द्वारादिये गये कष्ट को सुख पूर्वक सहन कर लेता है। अर्थात् सुखपूर्वक चिकित्सक ने शल्यारण किया यह प्रशंसा मात्र है, दुःख न होने में मद्‌य पान सहायक है। मद्‌य जाठराग्नि को बढ़ाने वाला रूचिकारक और शोक तथा श्रम को दूर करने वाला है। इससे बढ़कर दूसरा कोई उत्तम–आरोग्य, बल तथा पुष्टि को करने वाला नहीं है। अतः संयमी पुरूष जीवन की रक्षा करता हुआ मद्‌यपान करे। यह मद्‌य आश्रितों तथा उपाश्रितों का हित करने वाला उत्तम धर्म का साधन है।

□□□□□

भारत स्वाभिमान से पहले के व्याख्यान

परम पूज्य स्वामी रामदेव जी महराज के सानिध्य में

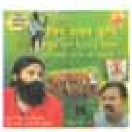

भारत स्वाभिमान शंखनाद के व्याख्यान

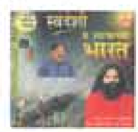

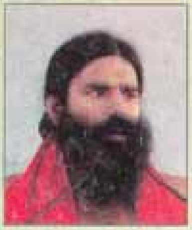

आग उगलने वाली आवाज मौन हो गई.... राजीव भाई के प्रखर और ओजस्वी वाणी शांत हो गई। उनकी वाणी में स्वदेश के लिए प्रेम और अगाध श्रद्धा थी।..... राजीव भाई के जाने से देश को बहुत बड़ी क्षति हुई है। उनके असमय निधन से राष्ट्र ने जो खोया है उसकी भरपाई कोई नहीं कर सकता। .... देश में अब दूसरा राजीव पैदा नहीं होगा। उनकी एक आवाज़ करोड़ों आवाज़ों के बराबर थी।.... उनके स्वदेशी के स्वप्न को साकार करने के लिए हम सच्चे प्रयास करें। यही उस पुण्यात्मा को सच्ची श्रद्धांजलि होगी....

परमपूज्य स्वामी रामदेव

राजीव भाई का जीवन निरंतर कर्मयोनि का जीवन था। वर्धा से निकलकर हरिद्वार आने पर उनकी यात्रा पूर्ण हो गई थी। भारत स्वाभिमान के लिए उन्होंने जो पृष्ठ भूमि बनाई, वह उनके अद्भुद ज्ञान का प्रमाण है। उनके पास जो ज्ञान था। उनकी जो स्मृति थी वह बहुत कम लोगों के पास होती है। पाँच हजार वर्षों का ज्ञान उनके पास था। उनका दिमाग कम्प्यूटर से भी तेज चलता था। उनका आन्दोलन रूकेगा नहीं, ऐसी परमपिता से प्रार्थना है....

परम श्रद्धेय डॉ. प्रणव

राजीव भाई द्वारा संकल्पित

स्वदेशी ग्राम
(स्वदेशी शोध केंद्र, सेवाग्राम, वर्धा)

भारत को स्वदेशी और स्वावलंबी बनाने के लिए, तथा राजीव भाई के अधूरे सपनों को पूरा करने के लिए राजीव भाई की स्मृति में सेवाग्राम, वर्धा में 23 एकड़ में एक स्वदेशी शोध केंद्र बनाने की योजना है। आपका सहयोग अपेक्षित है।

उद्देश्य :- स्वदेशी के दर्शन पर आधारित भारत बनाने के लिए
जैविक खेती प्रशिक्षण और स्वदेशी बीजों के संरक्षण के लिए
स्वदेशी शिक्षा के प्रयोग के लिए
गौ संवर्धन और पंचगव्य शोध के लिए
स्वदेशी रोजगार उपलब्ध कराने के लिए
भारत में स्वदेशी नीतियों को लागु करने के लिए
स्वदेशी उद्योगों को बढ़ाने के लिए शोध कार्य
भारत के पारंपरिक ज्ञान को आम जन के बीच फैलाने के लिए

स्वदेशी प्रकाशन
सेवाग्राम, वर्धा

books.ringaal.com

Visit us for more books